खलंगा
खुकुरी
और
फिरंगी

खलंगा खुकुरी और
फिरंगो

○

खलंगा खुकुरी और फिरंगी

लेखक

के० बी० क्षत्रिय

साहित्य सदन, देहरादून

प्रकाशक :
साहित्य सदन
देहरादून ।

प्रथम संस्करण
१९६१

मूल्य :
तीन रुपये ५० नये पैसे

मुद्रक :
सुरेन्द्रनाथ
सरस्वती प्रेस,
देहरादून।

कुछ ....

कुछ कहना आवश्यक नहीं—जानता हूँ, फिर भी विशेष कारणों से कह रहा हूँ !

रिस्पना नदी के किनारे सन् १८१४ के आंग्ल-नेपाल युद्ध के स्मृति रूप में अंग्रेजों द्वारा अपने 'वीर प्रतिद्वन्दी बलभद्र के शौर्य के सम्मानार्थ, —बनाये गये श्वेत स्मारक से मैं अपने विद्यार्थी काल में ही परिचित हो चुका था। नेपाली होने के नाते स्मारक एवं बलभद्र के प्रति जिज्ञासा-वृत्ति का जागृत होना स्वाभाविक ही था। वर्षों—अपनी जिज्ञासा-पूर्ति की अवधि में जो पाया, उसे स्व० इन्द्र विद्यावाचस्पति के शब्दों में रख दूँ—

"इस युद्ध में अनेक घटनाएं हुईं, जिन्होंने नेपाली सिपाहियों के यश को चार चाँद लगा दिये, परन्तु उनमें से एक घटना ऐसी है जिसे हम केवल भारत के इतिहास में ही नहीं, अपितु संसार के इतिहास में अद्वितीय नहीं तो अनूठी अवश्य कह सकते हैं। वह हमारी जाति की वीरता के इतिहास का एक उज्ज्वल परिच्छेद है, जिसे देशवासी—भूल से गये हैं, क्योंकि अँग्रेजी काल की पाठ्य पुस्तकों में उसे जान कर स्थान नहीं दिया गया है।"

—(भारत में ब्रिटिश साम्राज्य का उदय और अस्त)

इस विस्मृति-काल में, बलभद्र एवं उनसे सम्बन्धित जो थोड़ी बहुत बातें मिलती हैं उनका इतिहास में कुछ भ्रामक उल्लेख मिलता है। भारतीय इतिहासकारों ने इस घटना का जो थोड़ा बहुत उल्लेख किया है, लगता है, वह सब आंग्ल इतिहासकारों के आधार पर ही दिया है। G.R.C.Williams की पुस्तक "Memoir of Dehra Dun"-1874 ने नालापानी की पहाड़ी पर नेपालियों के स्थान को 'Kalunga-Fort' (कलुंगा या कलंगा किला) कहा है। वास्तव में यह किला न था, छावनी मात्र था। नेपाली भाषा में छावनी के लिये शब्द है—'खलंगा'। इतिहासकारों ने इस स्थान को कलंगा लिखा है, जो खलंगा का ही विकृत रूप जान पड़ता है।

इसी तरह कुछ भारतीय इतिहासकार बलभद्र को थापा वंशज मानते हैं। यह भी Williams के आधार पर लिखा जान पड़ता है। Williams ने बलभद्र को Nephew of Amar Singh Thapa लिखा है। Nephew का अर्थ भतीजा है, तो भानजा भी है। लगता है इसी भ्रम में कुछ इतिहास कारों ने बलभद्र सिंह थापा लिखा है। वास्तव में बलभद्र कुँवर वंशीय थे। महाराज जंग बहादुर राणा के मंत्रित्व काल से पूर्व, राणा वंश के पूर्वज, कुँवर वंश के नाम से प्रसिद्ध थे। अहिराम कुँवर के बड़े पुत्र राम कृष्ण के चौथे पुश्त में महाराज जंग बहादुर का जन्म हुआ और दूसरे लड़के जय कृष्ण की तीसरी पुश्त में बलभद्र का जन्म हुआ था।

Gillespie के उच्चारण में भी इतिहासकारों में मतभेद है—यथा, जेलेस्पी, जिलेस्पी, जिलेस्पाई—गिलेस्पी आदि। देहरादून तथा आस-पास जेलेस्पी और जिलेस्पी उच्चारण ही अधिक प्रचलित है। 'स्कॉच' नाम होने के कारण 'गिलेस्पी' नाम ही मुझे अधिक युक्तिसंगत लगा। श्री सूर्य विक्रम ज्ञवाली व स्व० श्री इन्द्र विद्यावाचस्पति ने भी गिलेस्पी ही लिखा है।

अनुक्रमणिका में दिये पुस्तकों, विभिन्न लेखादि तथा नालापानी के वयोवृद्धों से मुझे कुछ न कुछ मिला ही है, अतः उनके प्रति आभार प्रदर्शन करना मेरा पावन कर्त्तव्य है। श्री बालकृष्ण शमशेर जी के नेपाली महाकाव्य 'चिसो चूल्हो'' से मुझे बहुत कुछ मिला है। ''चिसो चूल्हो'' ने मेरी कल्पना को बल दिया—रंग दिया—साकार रूप दिया है, अतः श्री बालकृष्ण शमशेर जी का मैं विशेष आभारी हूँ।

अपने मित्र सर्वश्री डॉ० हरिदत्त भट्ट 'शैलेश,' डा० विश्वनारायण सिंह, श्री सुरेन्द्रनाथ तथा श्री उमेश शर्मा का आभार प्रदर्शन न करना उनके प्रति अन्याय ही तो होगा।

एक बात और—प्रेस के महात्माओं के द्वारा श का स, म का भ आदि हो जाना साधारण सी बात है। 'खलंगा खुकुरी और फिरंगी' भी इसका अपवाद नहीं।

उपन्यास क्षेत्र में यह मेरा पहला प्रयास है, अतः सभी त्रुटियों के लिये आपकी सहृदयता अपेक्षित है।

कुछ कहना आवश्यक नहीं—जानता हूँ, फिर भी इतना कुछ कह गया हूँ—क्षमा प्रार्थी हूँ।

९७ नैशविला रोड,
देहरादून।

—के० बी० क्षत्रिय

समर्पण

हे शारदे !
शुभ्रवसने, स्निग्धव्रते !
मैं स्वयं तो अभिशाप हूँ—
तू मुझे वरदान दे—वर दे !
हे शारदे !

तुम्हें !
जो तुम हो नहीं, मैं भी हैं !

—के० बी० क्षत्रिय

बलभद्र के शौर्य के सम्मानार्थ तथा जनरल गिलेस्पी की स्मृति में

फिरंगियों द्वारा निर्मित स्मारक
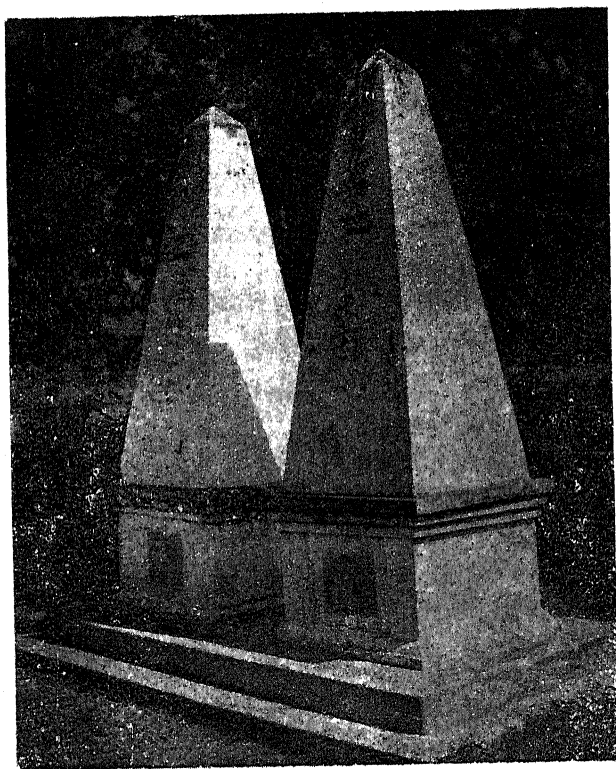
स्मारक में अंकित शिलालेख

एक

"प्रभु, श्रीनगर से पत्रवाहक आया है। सरकार के दर्शन चाहता है।"

"आने दो।" बलभद्र ने कहा।

पत्रवाहक उपस्थित हुआ। अभिवादन कर पत्र दिया और बोला "वीर शिरोमणि, थापा कुल भूषण, कमान्डर श्री अमरसिंह ज्यू की आज्ञानुसार, सेवा में उपस्थित होने का सौभाग्य सेवक को प्राप्त हुआ है।"

पत्र खोल बलभद्र पढ़ने लगे। पढ़ते पढ़ते मुखमुद्रा कुछ गम्भीर हो गई। पढ़ चुकने के पश्चात् कुछ देर चुप रहकर सोचते रहे, फिर बोले— "और भी कुछ कहा था ?"

"यही सरकार, कि उत्तर दें तो शीघ्र ले आना।"

"हूँ !" वे फिर कुछ देर चुप हो सोचने लगे। "अच्छा, अभी विश्राम करो, थके होगे। तीसरे पहर उत्तर लेकर चले जाना।"

"धृष्टता क्षमा हो सरकार, सैनिक जीवन में विश्राम का कोई महत्व नहीं। उत्तर तैयार होने पर आज्ञा होगी तो तुरन्त प्रस्थान करूंगा।"

"अच्छा तो जब तक मैं उत्तर लिखूं, तब तक तुम नहा-धो लो। फिर उपस्थित होना।"

"हौस प्रभु।" (जो आज्ञा) कुछ झुक उसने सलाम किया और द्वार की ओर चला।

बलभद्र उसे क्षण भर देखते रहे। मंझले कद का गठीला जवान था। चौड़ी पीठ, मांसल भुजायें और कमर पतली। सुडौल पांवों में पिंडलियां खूब उभरीं हुईं।

पत्रवाहक द्वार पार कर ही रहा था कि बलभद्र ने पुकारा—"सुनो।"

"सरकार!" वह मुड़कर पुनः कमरे में आ गया।

"तुम...खैर। मैं एक पत्र कप्तान रुद्र शमशेर के लिये भी दूंगा। उन्हें जानते हो न?"

"जी हां, वे मेरे पिता जी हैं।"

"क्या?" वह चौंक गये. फिर बोले—"तो तुम कनक हो कनक! छोटा सा था रे तू तो! इतना बड़ा हो गया अब! कब आया नेपाल से?"

"अभी दो महीने ही हुए हैं सरकार, फौज में भरती होकर आया हूँ।"

"कुछ बताया नहीं रुद्र ने! मेरे लिये कुछ कहा नहीं उसने?"

"उनसे मिलने का अवसर नहीं मिला। कमाण्डर साहब ने पत्र को अत्यन्त आवश्यक बता कर तुरन्त प्रस्थान करने की आज्ञा दी।"

"ओ! यह बात है।" कुछ क्षण चुप रहकर वे बोले—"तेरे पिता और हम बचपन के मित्र हैं। हम दोनों साथ खेलते, साथ ही घूमते! साथ

ही तराई के जंगलों में जाकर आखेट किया करते। साथ ही दिन भर बैठे बैठे पांसा खेलते। नेपाली सेना में हम दोनों साथ ही भरती हुए थे। कुमाऊं के युद्ध में-अल्मोड़े में, हम साथ साथ लड़े। साथ ही गढ़देश के श्रीनगर के युद्ध में लड़े। श्रीनगर के पतन के बाद वे वहीं रहे। मैं अपने पूज्य बुवा (पिता) चन्द्रवीर कुंवर के साथ इधर आया। जब हमारी सेना यमुना पार पश्चिम की ओर बढ़ी तो यहां की सुरक्षा का भार पिता जी पर पड़ा। इसी वर्ष के प्रारम्भ में, पूज्य पिता जी के स्वर्गवास होने पर यहां नालापानी की रक्षा एवं किला बनाने के लिए मैं नियुक्त हुआ। अरे! मैं तो बातों में लग गया। तुम्हारे नहाने धोने के बारे में बिलकुल भूल गया।"

"आज्ञा हो प्रभु।" वह जाने लगा।

बलभद्र तुरन्त बोले—"नहीं, नहीं, तुम मेरे मित्र के पुत्र हो सो यहीं मेरे पास रहोगे। को छ!" (कोई है?) उन्होंने पुकारा।

तुरन्त एक नौकर उपस्थित हुआ।

"माया कहां है? यहां भेजो।"

नौकर चला गया। सैनिक पत्रवाहक की ओर मुड़कर बलभद्र कहने लगे—"कनक, जानते हो माया को?"

"नहीं सरकार।" कुछ हिचक कर उसने उत्तर दिया।

"अरे हां-तुम कैसे जानोगे? तब तुम दोनों छोटे थे। फिर माया को, उसकी मां की मृत्यु के पश्चात मैंने सदा अपने पास ही रखा।"

"क्या आज्ञा है बुवा?" माया ने कमरे में प्रवेश करते ही कहा, फिर एक सैनिक को पास खड़ा देख कुछ हिचकी, ठिठक गई।

सैनिक ने कनखियों से देखा, केवल क्षण भर—जैसे बिजली कौंध गई। श्वेत 'गुन्यू',[1] श्वेत चोली[2] और श्वेत धलेक[3] और श्वेत चादर ओढ़े,

१. लुंगीनुमा साड़ी, २. चोली कुर्त्ता, ३. कंधे और बगल से लपेटा चादर नुमा कपड़ा।

साक्षात देवी का रूप। विशाल लोचन, लम्बी बरौनियां, सुन्दर सीधी नाक व कुछ गोल चेहरा। आनन पर अरुणिम आभा। वह देखता ही रह गया।

"आउ नानी[1] (आओ बेटी) यह कनक है। कप्तान रुद्र के छोरा (पुत्र)। आवश्यक कार्य से श्रीनगर से आये हैं। शीघ्र लौटेंगे भी, सो जल्दी से नहाने धोने का प्रबन्ध करवा दो और हां जलपान कराने का भार तेरा।"

विस्फारित लोचनों से माया ने कनक की ओर देखा। शायद बचपन का धुंधला सा चित्र आंखों के सामने घूम गया। शायद सोच रही थी-यही वह छोटा सा कनक है जिसे वह बचपन में कनु कह कर पुकारती थी! शायद उसे आश्चर्य हो रहा था कि कनक इतना बड़ा हो गया है। धीरे धीरे उसने पलकें झुका लीं और मौन खड़ी रही। बोल न फूटा मुख से। चेहरे पर लाली दौड़ गई।

बलभद्र ने देखा, सोचा लजा गई है, बोले—"यह अनजान थोड़े ही है, बचपन का साथी है तेरा।"

माया का रक्तिम आनन और अधिक रक्तिम हो उठा। कनक ने लक्ष्य किया और स्वयं भी लाल हो गया।

"लिएरजा नानी (ले जा बेटी)! मेरे मित्र का बेटा है और तेरे बचपन का साथी भी, पराया थोड़े ही है। तब तक मैं पत्र का उत्तर लिख लूं।"

"पालनहोस (आइये)!" माया ने धीरे से कहा और द्वार की ओर मुड़ गई।

"जाओ कनक" बलभद्र ने कहा।

कनक अभिवादन कर माया के पीछे पीछे चला। पास के एक कमरे के सम्मुख खड़ी हो कर माया ने कनक से कहा—"आप यहाँ तनिक विश्राम करें। मैं जाकर नौकर को भेजती हूँ। आकर आपको

---

१ पुत्री के लिये प्यार भरा सम्बोधन

स्नानागार में ले जायेगा।"

कनक को लगा जैसे किसी ने कानों में बांसुरी फूँक दी, कुछ बोला नहीं, एक टक माया की ओर देखता रहा, कुछ सोचता हुआ।

माया ने देखा, कुछ लजाई और बिना कुछ कहे वह वहां से चली गई।

कमरे में प्रवेश कर कनक ने अपनी टोपी उतारी। खुकुरी को कमर से खोलकर तिपाई पर रख दिया और कमरबंद ढीला कर एक चौकी पर बैठ सोचने लगा—माया कितनी बड़ी हो गई है! बचपन में कितनी दुबली पतली सी थी, अब अंग-प्रत्यंग भर चुका है। बड़ी चंचल थी माया! बात बात में हसती झगड़ती थी उससे!

बचपन के साथी को कैसे भूल सकता था वह? उसके पिता ने पूछा था—'कनक जानते हो माया को?' उसने कह दिया था नहीं। कैसे कह देता—हां, बहुत अच्छी तरह! उसके हृदय पट पर माया का अमिट चित्र अंकित है। अन्तःस्थल में उसी के मिलन की चाह लेकर ही तो वह सेना में प्रविष्ट हुआ...श्रीनगर आया और आज भाग्य से यहां। यह सब कहते लाज न आती उसे। फिर वे भी न जाने क्या सोचते? बचपन की बात और थी। तब वे स्वच्छंद मिल सकते थे। काठमाण्डू की गलियों में बेफिक्र खेल सकते थे। साथ साथ पशुपतिनाथ के मंदिर का दिन में एक आध चक्कर भी लगा लेते थे...पर अब? अब तो वे आपस में बातें करते हुए भी संकुचित होते हैं। वे दोनों अब जवान हो गये हैं न?

उसका दांया हाथ अनायास ही, अपनी निकलती हुई छोटी-छोटी मोछों पर जा पहुँचा। अनजाने ही उसने उन्हें सहलाया, सोचा अब मैं जवान हो गया हूँ—और हंस पड़ा।

तभी नौकर ने आकर कहा—"स्नान के लिये चलिये।"

"चलो" कनक बोला और नौकर के पीछे हो लिया। स्नानागार

की ओर चलते हुये, भीतरी दालान को पार करते समय उसकी आंखें किसी को खोज रही थीं।

स्नान से निवृत हो कनक सीधा उसी कमरे की ओर चला, जहां वह ठहराया गया था। वहां उसने माया को देखा। इस बार वह अकेली न थी, एक अन्य स्त्री उसके पास खड़ी थी। कनक ने उसकी ओर देखा। यद्यपि रंग गेहुँआ था, पर नखशिख सुन्दर और आकर्षक जान पड़े। हल्के पीले रंग की 'गुन्यू' और कत्थई रंग की चोलो[1] पहने थी। कमर में 'पटुका'[2] और उभरे वक्ष को ढकती सी, छींट की धलेक।

कनक ने माया की ओर देखा। तनिक हंसकर माया बोली—"यह है काँछी[3] नाम मात्र के लिये मेरी चेरी, पर मेरी प्रिय सहेली आइये 'ज्यूनार' कर लीजिये।

कनक कुछ बोला नहीं— चुपचाप सिर झुकाकर वहां पीढ़े पर बैठ गया जहां नाना प्रकार के खाद्य संजोकर थाली में रखे थे।

माया ने कांछी की ओर देखा और कांछी ने माया की ओर। दोनों मुस्करा दिये।

कांछी बोली—"आरम्भ कीजिए, भोजन ठंडा हो रहा है"।

बिना कुछ कहे ही कनक खाने लगा। कुछ क्षण तक सब चुप रहे। कांछी ने ही निस्तब्धता को भंग करते हुए कहा—"नेपाल से कब आना हुआ आपका ?"

"अभी दो महीने ही हुए हैं।" बिना सिर उठाये ही कनक बोला।

"हनुमान ढोका के पास जो मंदिर बन रहा था, पूर्ण हो गया होगा अब तो ?"

---

१. चोली कुर्त्ता, २. कमरबंद की लपेटा कपड़ा

३. छोटी के लिये स्नेह भरा सम्बोधन, ४. भोजन

"जी हां, विशाल मंदिर बन गया है।"

"और वह—पशुपतिनाथ जी के मंदिर के पुजारी दिलूराम बाज्या तो बूढ़े हो गये होंगे अब ?

"जी हां, श्वेत दाढ़ी रख ली है उन्होंने !"

'श्रीनगर में आप, पिता के पास आये होंगे ?"

"जी नहीं, सेना में भरती हुआ था, श्रीनगर भेज दिया गया।"

"अब तो वहीं रहेंगे ?"

"कह नहीं सकता। सैनिक हूँ, सेनानायक की मर्जी के ऊपर है, चाहे वहीं रखें अथवा कहीं और भेज दें।"

कनक ने खाना बंद कर दिया। उठने ही को था कि माया बोली—"अरे ! उठने लगे आप तो ..और खाइये न।"

"जी बहुत खा चुका हूँ।"—कुछ हंस कर कनक ने कहा।

"थोड़ा और सही" माया बोली।

"जी......"

"जी-वी कुछ नहीं—थोड़ा और खाइये।" माया ने अनुरोध भरे स्वर में कहा। कनक को अच्छा लगा। अनिच्छा होने पर भी उसने कुछ कौर और खाये। खाते-खाते कहने लगा—"आपका स्वभाव बिलकुल नहीं बदला। बचपन में भी आप बहुत जिद्द करती थीं।"

"और आप भी हमेशा, बिना कुछ कहे मान जाते थे।"— माया सहास बोली।

"जी हां,आज भी तो मान रहा हूँ। देखिये इतना अधिक खा गया हूँ कि डर है अजीर्ण न हो जाए।"

माया हंस पड़ी। जैसे लाल कमलों की सृष्टि रच दी। बोली—"आप इसकी चिन्ता न करें। कांछी कुछ वैद्यक जानती है—चूरन बना लावेगी।" तीनों हंस पड़े।

"अब तो सचमुच ही खा नहीं सकता।" कनक बोला।

"वाह ! अभी खाया ही क्या है आपने !" कांछी हंस कर

बोली।

"कहिये तो यह बचा हुआ माल पेट पर बांध लूं। आपकी बात भी रह जायेगी और राह का मेरा काम भी चल जायेगा।"

माया हंस पड़ी। कांछी कुछ लज्जित हुई। कनक उठने को हुआ, माया की ओर देखकर बोला— "तो आज्ञा है?"

माया ने पलकें झुका मौन स्वीकृति दी। कनक बाहर हाथ धोने चला गया। जब वह लौटकर आया तो देखा कांछी थाली उठाकर चली गई थी। केवल माया ही थी वहां।

कुछ संकुचित भी हुआ कनक और कुछ प्रसन्न भी। बोला— "अब विदा पाँउ।"

"कुछ विश्राम तो कीजिए।"

"विश्राम का समय नहीं है। मुझे आज्ञा थी, उत्तर लेकर शीघ्र चले आना।"

माया चुप रही।

"जी— एक बात पूछूं?"

"कहिए—"

"नेपाल की, अपने उस...उस सुन्दर बचपन की, कभी याद नहीं आती आपको?"

माया ने सिर झुका लिया। आनन कुछ रक्तिम हो उठा। पैर के अंगूठे से धरती कुरेदने का प्रयास करने लगी।

कनक चुप हो गया। बहुत कुछ कहना चाह कर भी वह कुछ न कह सका। एकटक माया की ओर देखता ही रह गया।

माया ने कुछ कहने के लिये सिर उठाया तो कनक को अपनी ओर अपलक निहारते पाया, वह लज्जा गई।

कनक सँभला, खुकुरी और टोपी को उठाता हुआ बोला, "अब विदा पाँउ?"

"फिर कभी आइयेगा?"—नतमस्तक हो माया ने प्रश्न किया।

"कह नहीं सकता किसी ने चाहा तो अवश्य।" कनक ने जल्दी से कहा और दांये हाथ से सलाम कर तुरन्त कमरे से बाहर हो गया।

वह बलभद्र के कमरे में पहुँचा। पुनः अभिवादन किया और एक ओर खड़ा हो गया। बलभद्र पत्र लिख चुके थे, बोले, "आउ (आओ) कनक, स्नान कर लिया ?"

"जी सरकार।"

"और जलपान भी ?"

"जी, सरकार की दया से।"

"तो लो, ये दो पत्र। एक कमाण्डर साहब के लिये और एक तुम्हारे पिता के लिये। कमाण्डर साहब का पत्र सरकारी है और गोपनीय भी! संभाल कर ले जाना।"

"आप चिन्ता न करें प्रभु! प्राण देकर भी मैं इनकी रक्षा करूंगा।"

"ठीक है। ऋषिकेश होकर ही तो जाओगे न ?"

"जी सरकार।"

"सुना है फिरंगियों के जासूस वहां फैले हुये हैं, सावधानी रखना।"

"विशेष सावधानी रखूंगा प्रभु।"

"तो जाओ, अस्तबल से घोड़ा बदल लेना। अपना घोड़ा यहीं छोड़ जाना, थका होगा।"

"जो आज्ञा सरकार। अब बिदा पाउं।"

सिर हिलाकर बलभद्र ने अनुमति दी।

कुछ झुक, दांये हाथ को मुंह के पास ला कनक ने नेपाली ढंग से अभिवादन किया और कमरे से बाहर चला गया।

दो

इधर घोड़े पर बैठा कनक तेजी के साथ ऋषिकेश की ओर चला जा रहा था, उधर उसका प्राण पंछी कल्पना के पंख लगा कर दून की ओर उड़ा जा रहा था।

थोड़ी ही देर पहले जब वह दून से चला, तो किसी की मधुर प्रतिच्छाया को हृदय पटल पर अंकित करके चला था। बार-बार माया का सुन्दर मुख उसकी आंखों के सामने आ रहा था। उसे अपना शैशव याद आया, जब माया और वह आपस में खेलते झगड़ते थे। कल्पना में उसे अपने आंगन का वह विशाल आम्रवृक्ष दिखाई दिया जहां खट्टी अम्बियों के लिए माया और वह आपस में रूठते मनाते थे। और उसकी वह झुकी डाल, जिसपर पड़े झूले पर पेंगें बढ़ा माया अत्यन्त प्रसन्न हो उठती थी। कितने सुन्दर थे वे दिन!

अतीत सजीव सा हो उसकी आंखों के सम्मुख नाच उठा। इन्हीं मधुर कल्पनाओं में निमग्न वह चला जा रहा था। वह जान नहीं पाया

कब बचियावाला ग्राम आ पहुँचा।

सड़क के पास ही के कुंए पर कुछ स्त्रियां कुंए से पानी खींच रहीं थीं, साथ ही सब मिल कर धीरे-धीरे गा रहीं थीं।

गाने की आवाज सुन कनक सचेत हुआ, देखा वह बचियावाला पहुँच गया है। समय का अनुमान लगाने के लिए उसने आकाश की ओर देखा।

सूर्य उन विशाल तुन के वृक्षों की आड़ में होने के कारण दिखाई नहीं पड़ा फिर भी सूर्यास्त होने में काफी देर थी। शाल, तुन, शीशम आदि वृक्षों के बीच काफी सुनहली धूप छन-छन कर आ रही थी।

अभी काफी समय है, कनक ने सोचा—यदि कुछ और तीव्र गति से वह चले तो रात्रि के प्रथम प्रहर से पहले वह अवश्य ऋषिकेश पहुँच सकता है। पर सूर्यास्त होने से पहले ही उसे इस बिस्तृत वन-खंड को अवश्य पार कर लेना चाहिये।

उसने तेजी से घोड़ा आगे बढ़ाया। चार कोस दूर उस पहाड़ी नदी सौंग को पार कर कनक उस पर्वतमाला की पगडंडी पर हो लिया, जिसे पार कर वह अपने लक्ष्य पर पहुँच सकता था। दून से यहां तक तो ढाल थी, पर अब कुछ चढ़ाई, अतः उसने घोड़े की चाल कुछ धीमी कर दी।

संध्या हो चली थी। पश्चिम के सुदूर क्षितिज में सूर्य का गोला डूबते-डूबते भी आकाश को लाल रंग से रंग रहा था। उत्तर की ओर हिमालय पर्वत श्रेणियों के शिखर, अस्ताचलगामी सूर्य की किरणों से उज्ज्वल हो रहे थे। झरनों के अविराम झर-झर कल-कल स्वर के साथ पक्षियों का स्वर मिलकर उस जड़ प्रान्त को सजीव सा बना रहा था।

सैनिक कनक प्रकृति के इस मुग्धकारी वेष को देख कर भावुक हो उठा। उसका कवि हृदय रागात्मक हो उठा, वह गाने लगा—

सीरी, सीरी, दन्तैमा बीरी,

मलाई पनि लै जाउन जुनकिरी ।।

सन्ध्या के उस सुनहले वातावरण में कनक ऊंचे स्वर से गाने लगा। इस गाने की उसे केवल एक कड़ी ही ज्ञात थी, पर फिर भी उसे बार-बार दुहराने लगा। आज से पहले भी, कई बार वह इस पंक्ति को गा चुका था, पर आज उसे यह विशेष प्रिय जान पड़ा। कितने कोमल भावों का समावेश है इसमें ! जुनकिरी-ज्योति रंगिणी से कहा गया— हे जुगनू मुझे भी वहां ले चलो जहां 'वह' है जिसके हास के कारण खुले दन्त पंक्तियों की आभा हास की आभा से भी अधिक सुन्दर है।

वह गाता गया ! वह के स्थान पर उसने माया का काल्पनिक चित्र लगाया और उमंग व उत्साह से गाता ही रहा। तभी जाने अन-जाने गाने की कुछ और पंक्तियां उसके मुंह से फूट निकलीं:—

'तिम्रो आँखा ऐंठन गर्ने—

तिम्रो बोली रक्शिको रिमझिमी !

(तुम्हारी आंखें मनमानी करने वाली हैं और तुम्हारी बोली मदिरा की मादकता सी मादक !)

हृदय में भरे उल्लास को शब्दों और संगीत में प्रकट कर वह बहुत प्रसन्न हुआ। वह पंचम स्वर में गाता ही रहा-पर एकाएक वह रुक गया। उसे लगा जैसे उसने घोड़े की टापों की आवाज सुनी है। उसने अपने घोड़े की बाग तानी और ध्यान से सुनने लगा, पर कुछ सुनाई न पड़ा। पीछे मुड़कर जहां तक दृष्टि जाती थी देखा, कुछ दिखाई न दिया। शायद उसे भ्रम हुआ है, उसने सोचा, और पुनः गाने लगा—

"सीरीमा सीरी बतासै लाग्यो

सीरीको भ्यालैमा।

भमरा भई भन घुम्दा-घुम्दा

बसेछ तिम्रो गालामा ।।"

('हे शोभाशालिनी ! मैं तुम्हें क्या बताऊं ! एक दिन मलय पवन का एक ऐसा झोंका आया जिसने तुम्हारे गृह के बंद झरोखों को खोल

दिया, तुम्हारे दर्शन हुए और उस दर्शन से मेरा मन-भ्रमर बन उड़ने लगा और उड़ते-उड़ते भ्रम से तुम्हारे कपोलों को पुष्प समझ कर उन पर बैठ गया।'

उस धूमिल अंधकार में जब उसे ऋषिकेश की रोशनी दिखाई देने लगी तो उसनें गाना बंद कर दिया। अब वह कल्पना क्रोड़ से उतर कर फिर वास्तविक जगत में आ गया। अब चिंता हुई, गाते समय टापों का जो भ्रम उसे हुआ था, कहीं सचमुच वह वास्तविक न हो। उसे ध्यान आया बलभद्रकुंवर जी ने कहा था—'पत्र आवश्यक है, संभाल कर ले जाना।' उसने उत्तर दिया था—'प्राण देकर भी इस पत्र की रक्षा करूंगा।' सच वह प्राण देकर भी पत्र की रक्षा करेगा! शत्रु-दल से दो-दो हाथ हो जायें, इसकी भी उसे चिन्ता नहीं। वह खेत रह जाये परवाह नहीं, परन्तु··· यदि पत्र कमाण्डर साहब को न मिले तो ?...जाने क्या अनर्थ हो जाये! और कनक ? वह जातीय कलंक बन जायेगा! तब क्या वीरांगना माया स्नेह से कभी उसे याद करेगी ? नहीं, कभी नहीं ? पत्र को वह सुरक्षित रखेगा; कम से कम, शत्रु-दल के हाथ में न जाने देने की चेष्टा करेगा।

उसने घोड़े को सड़क के किनारे एक विशाल वृक्ष के पीछे खड़ा कर दिया। चारों ओर सावधानी से देखा और भीतरी जेब से एक पत्र निकाला। दायें पैर के जूते को खोल उसने उसके भीतर के पतावे को उलट दिया और पत्र को शीघ्रता से उसमें रख, पतावे को पूर्ववत कर दिया। फिर जूतों को पहन लिया। पुनः सावधानी से चारों ओर देखा और पगडन्डी पर आ लिया। उसने कमर में लटकती खुकुरी को ऐसे ढंग से रखा कि पलक मारते ही उसे निकाल सके।

इतना कर उसने तेजी से घोड़ा आगे बढ़ाया। अभी मुश्किल से वह दो सौ गज ही गया था कि एकाएक वह घोड़े सहित जमीन पर गिर पड़ा।

पलक मारते ही कनक समझ गया, रस्सी या बेल बांध कर उसे रोका गया है, इसलिए गिरते-गिरते भी उसने खुकुरी निकाल ली और

भूमि पर गिरते ही तुरन्त उठ खड़ा हो गया।

उसे आशा थी उसके गिरते ही शत्रु-दल के कुछ आदमी उसे घेर लेंगे। परन्तु यह देखकर उसे आश्चर्य हुआ कि ऐसी कोई बात नहीं हुई।

थोड़ी देर तक कनक नंगी खुकुरी हाथ में लिये उस धूमिल अन्धकार में आंखें फाड़ फाड़ कर देखता रहा, पर जब कुछ न दिखाई दिया तो सावधानी से अपने घोड़े की ओर बढ़ा। घोड़ा गिरा हुआ था। सहारा देकर कनक ने उसे उठाया और जांच की। देखा आगे के पांव में काफी चोट लगी थी, रुधिर बह रहा था उससे।

अभी अपनी कमर-बंद से कपड़ा फाड़कर वह घोड़े के पांव में पट्टी बांध ही रहा था कि उसे घोड़े की टापों की आवाज सुनाई दी। अपने घोड़े को वैसा ही छोड़ कनक तुरन्त एक पेड़ की आड़ में हो गया।

टापों की आवाज क्रमशः तीव्र होती गई और अब एक सवार भी साफ साफ दिखाई देने लगा। सवार तेजी से चला आ रहा था पर राह में एक घोड़े को खड़ा देख, उसने अपना घोड़ा रोक लिया। शीघ्रता से चारों ओर देखा, फिर जोर से पुकारा— "कौन है? किसका घोड़ा है यहां?"

कनक ने पेड़ की आड़ से देखा। हृष्ट पुष्ट लम्बा सा जवान था। सिर पर बंधी पगड़ी और कमर में लटकती हुई तलवार को देख समझ गया कि यह नेपाली नहीं है। खुकुरी पकड़े सामने आकर बोला— "क्या है? कौन हो तुम?"

सवार ने फौरन घोड़े से उतर तलवार पकड़ ली और बोला— "यही तो मैं पूछता हूँ! पहला प्रश्न मेरा है, तुम उत्तर दो— कौन हो तुम?"

"आदमी! कम दिखाई देता है क्या?' व्यंग भरे स्वर में कनक ने कहा।

'सीधी तरह जवाब देते नहीं बनता? लड़ना चाहता है, तो ले'—कह कर सवार ने कनक की ओर बढ़, तेजी के साथ तलवार से वार किया।

फुर्ती से वार बचा कर कनक उसकी बगल में आया और खुकुरी का भरपूर हाथ मारा। सवार नौसिखिया नहीं था, साफ वार बचा गया।

दोनों मँझे हुए थे। वार पर वार करते और साफ बचा जाते। कनक को क्रोध आने लगा। भूखे शेर की तरह झपट कर उसने सवार के सिर पर वार किया। सवार ने एक कदम पीछे हट कर वार को तलवार से बचाया। वार तो बच गया किन्तु तलवार हाथ से छूटकर दूर जा पड़ी।

कनक ने लपक कर बायें हाथ से उसकी गर्दन पकड़ ली और बोला—"कौन हो तुम ? कहां से आ रहे हो ?"

"मैं—मैं ग्राम नवादा से आ रहा हूँ—गढ़वाली हूँ, नौकरी के लिए ऋषिकेश जा रहा हूँ।" घिघिया कर उसने कहा और गला साफ करने के लिए मानो उसने जोर से खखारा।

"झूठे कहीं के ! तुम-तुम फिरंगियों के—" कनक अभी इतना ही कह पाया था कि किसी भारी चीज की चोट सिर पर खाकर भूमि पर गिर पड़ा। उसकी आंखों के आगे अंधेरा छाने लगा। धीरे-धीरे वह संज्ञाहीन होकर निश्चेष्ट हो गया।

"शाबास रामू ! पर अभी तक क्या कर रहे थे—" अपने गले को सहलाते हुए सवार ने कहा—"कमबख्त ने किस जोर से गला पकड़ा।"

"खखारने की राह देख रहा था ! आपकी ही तो आज्ञा थी कि—"

"खैर—" बात काट कर सवार बोला—"जल्दी से तलाशी लो।"

रामू ने अचेत कनक की तलाशी ली। भीतरी जेब से एक पत्र पाया। बोला "एक पत्र मिला है।"

"ठीक है, इसी की आवश्यकता है। अवश्य इसमें सैनिक भेद की बातें होंगी, चलो।"

वे दोनों कनक को वैसा ही पड़ा छोड़, घोड़े पर सवार होकर ऋषिकेश की ओर चल पड़े।

तीन

रात आधी से अधिक बीत चुकी थी पर बूढ़े शंकर बाज्या की ज्योतिहीन आंखों में नींद न थी। खाट पर पड़े-पड़े करवटें बदल रहे थे। सोच रहे थे, उसे अभी तक आ जाना चाहिए था, पर आया नहीं क्या बात हुई?

पास ही दूसरी चारपाई पर लेटी कान्ता ने कहा, "बाबा, सोये नहीं अभी तक?"

"नीद नहीं आती बेटा, पर तू-तू भी सोया नहीं है कान्त!"

वृद्ध अपने पुत्र की पुत्री कांन्ता को सदा कान्त ही कहता। दो वर्ष की थी कान्ता कि उसकी मां स्वर्ग सिधार गयी। एक साल बाद पिता युद्ध में काम आये। तब से वृद्ध ने ही उसे पाला। पुत्र के अभाव की पूर्ति वह कान्ता से करता, इसलिये उसे कान्त कहता। यहां तक कि उसके लिये पुल्लिग वाचक शब्दों का ही प्रयोग करता।

"मुझे भी नींद नहीं आ रही है बाबा—"कान्ता ने कहा, फिर कुछ

सोच कर बोली—"बाबा !"

"हां बेटा ।"

"तुम सो जाओ बाबा, मैं जो जगी हूँ ।"

"पागल कहीं का --सो जा चुपचाप ।"

"बाबा ! तुम तो मुझे अपना बेटा कहते हो न ? फिर जो बेटा अपने वृद्ध बाबा को आराम न दे, उसे बेटा कहलाने का क्या अधिकार है ? तुम्हारी सेवा करना मेरा अधिकार है बाबा, वही मांग भी रही हूँ ।"

वृद्ध को हंसी आ गई । स्नेह से बोला—"भो रहन दे (बस रहने दे), बड़ा आया अधिकार वाला ! और दिन तो बिस्तर पर पड़ते ही सो जाता है, आज जागरण करेगा । नहीं रे कान्त, यह तेरे वश की बात नहीं, सो जा चुपचाप ।"

"तो बाबा आप समझते हैं, मैं जग नहीं सकती ?"

वृद्ध ने कोई उत्तर नहीं दिया । कान्ता फिर बोली—"बूझें बाबा, (समझी बाबा) मैं लड़की हूँ म, इस लिये ऐसा कहते हो !"

"नहीं-नहीं कान्त, यह बात नहीं"—वृद्ध ने जल्दी से कहा, फिर कुछ रुक कर कहा—"मैं तुझे हमेशा लड़का ही समझता हूँ, तभी तो सभी मर्दाने कार्य—तीर चलाना, तलवार चलाना, घुड़सवारी करना, खुकुरी से वार करना आदि तुझे सिखाये हैं । तेरा बाप जो मेरा इकलौता पुत्र था, उसके अभाव की पूर्ति तू ही तो करता है । और सच पूछो तो कान्त, यहां जन्म-भूमि नेपाल से दूर—विदेश में, आज हमें नारी का कोमल स्वरूप नहीं, पुरुष की कठोरता की आवश्यकता है । भारत में देख रहे हो, अंग्रेजों का जाल बढ़ता जा रहा है । ईस्ट इंडिया कंपनी इधर सहारनपुर तक अपना कब्जा जमा चुकी है । उधर गोरखपुर, त्रिहुत, पुर्निया, सारन, बरेली और हरिद्वार तक भी उसने अपनी सीमा बना ली है । हमारी सीमा का बुटौल स्थान भी विवादास्पद ही है । फिरंगियों ने जबरदस्ती उसे ले लिया है । हमारी नेपाली सेना ने

इस ओर विशेष ध्यान नहीं दिया क्योंकि इधर यमुना के पश्चिम के जो इलाके उन्होंने अभी जीते हैं उसकी व्यवस्था में वह लगे हैं। बुटौल—जहाँ अंग्रेजों ने अपनी पुलिस चौकी बना ली है, निश्चय एक दिन रंग लायेगी कान्त! तब अंग्रेजों से टक्कर होना असम्भव नहीं। फिर युद्ध की भयंकर ज्वाला भड़केगी और तब होम के लिये उसे पुरुष का रौद्र रूप चाहिए, नारी की स्निग्धता नहीं। इसीलिये तो जन्म से नारी होते हुए भी, मैं तुझे कर्म से पुरुष बनाना चाहता हूँ।''

''ठीक कहते हो बाबा! मैं कोमलता का परित्याग कर कठोरता वरण करूंगी। देश के लिये—तुम्हारे लिये बाबा, मैं पुरुष बनूंगी। ऐसा काम करूंगी कि तुम्हारा यह विश्वास अटूट बना रहेगा। और हाँ बाबा, अब तो मेरे जागने के अधिकार से तुम मुझे वंचित नहीं कर सकते।'' कान्ता ने स्नेह युक्त स्वर में फिर कहा—''तुम सो जाओ बाबा, मैं राह देखती हूँ। रात काफी बीत चुकी है, हो सकता है कुँवर हजूर (बलभद्र कुंवर) ने आज कनक को वहीं रोक लिया हो।''

''नहीं, ऐसा नहीं हो सकता, कनक आयेगा—उसे अवश्य आना चाहिए। शीघ्रातिशीघ्र उसे श्रीनगर पहुंचना है।''

''तो आप सो जायें, मैं राह देखूंगी बाबा।''

''अब नींद नहीं आती। ज्यों-ज्यों रात बढ़ रही है, त्यों-त्यों चिन्ता भी। कहीं कोई दुर्घटना तो नहीं हुई?''

''ऐसा नहीं हो सकता बाबा। कनक वीर हैं, अपनी रक्षा आप कर सकते हैं।''

इसी समय बाहर कुछ आहट हुई। कान्ता चुप हो गयी। वृद्ध चौकन्ना हो गया।

''शंकर बाज्या ढोका खोल!'' (शंकर दादा द्वार खोलो) कनक का परिचित स्वर सुनाई पड़ा। वृद्ध बिस्तर पर उठ कर बैठ गया। तुरन्त उठकर कान्ता ने द्वार खोल दिये। दीप के धुंधले प्रकाश में

कनक को देखा और बरबस मुख से निकल पड़ा—"अरे क्या हुआ ?"

"पहले द्वार बन्द कर दो ।" कनक बोला ।

"क्या हुआ कनक ?" वृद्ध ने अपने हाथों से उसकी देह टटोलते हुये कहा—"इन्हीं अवसरों पर मुझे अपनी आंखों की हीनता खटकती है ! "

"कोई दुर्घटना हुई है बाबा । सिर से रक्त बह कर मस्तक पर जम गया है । शरीर धूलि-धूसरित है और वस्त्र अस्त-व्यस्त ।"—कान्ता ने वृद्ध की जिज्ञासा शान्त करने के लिये संक्षेप में कहा ।

"हाँ बाज्या, मेरा झगड़ा हो गया था ।" कनक ने कहा ।

"झगड़ा ? किससे ? पर ठहर, अभी सुनूंगा । पहले तुम लेट जाओ । कान्त, पानी गरम कर ला और चोट को धो हल्दी-चूना लगा कर पट्टी बांध दे ।"

कनक कान्ता की चारपाई पर लेट गया । कान्ता पहले ही पानी गरम करने जा चुकी थी ।

जब कान्ता सिर पर लगे घाव को धो हल्दी-चूना लगा, पट्टी बांधने लगी, तब कनक ने सारा हाल कह सुनाया । सुनकर वृद्ध कुछ क्षण सोचता रहा, फिर बोला—"श्री हजूर (कमांडर साहब) का पत्र तो तुम्हारे पास सुरक्षित है ही, मेरी राय में तो दूसरे पत्र की तुम चिन्ता न करो ।"

"पर बाज्या, कौन जाने उसमें भी कुंवर हजूर ने कुछ हलचल की बात लिखी हो ? पिताजी और वे दोनों मित्र हैं और फिर पक्के सैनिक भी ! और फिर बाज्या, मेरे माथे का यह कलंक क्या कभी मिट सकेगा ? नहीं बाज्या, नहीं ! मैं अपने प्राण दे सकता हूँ, पर बिना उस पत्र को प्राप्त किये श्रीनगर जाना तो दूर रहा, जाने की बात सोच भी नहीं सकता ।"

कान्ता पट्टी बांध चुकी थी । बोली–"बाबा ! कनक ठीक ही कह रहे हैं; उन्हें वह खोया पत्र अवश्य प्राप्त करना चाहिये और मैं इसमें

उनकी पूरी सहायता करूंगी।"

कनक ने आश्चर्य से कान्ता की ओर देखा और कहा-"तुम ?"

"हां।"—सीधा संक्षिप्त सा उत्तर दिया कान्ता ने। कनक कुछ बोल न सका। वृद्ध ने कुछ सोच कर कहा—"ठीक कहता है कान्त, पर प्रश्न है, कैसे ? और कौन था वह आदमी ?"

"आपने ध्यान दिया होगा बाबा, ऋषिकेश के निकट ही यह घटना हुई। इसका अर्थ हो सकता है वह मनुष्य यहीं ऋषिकेश का है और यह जानकर कि ऋषिकेश में शत्रुदल के गुप्तचर हैं अवश्य, इससे इस बात की और भी अधिक पुष्टि होती है।"

"हो सकता है"—वृद्ध ने कहा—"पर……"

"और फिर बाबा, कनक की खुकुरी का वार बचाने वाला, तलवार का सिद्धहस्त होगा ही। ऐसे आदमी सारे ऋषिकेश में एक दो ही होंगे।"

वृद्ध की ज्योतिहीन आंखों में एक चमक आ गई। उत्सुकता से कुछ आगे की ओर झुक कर उसने कहा—"तो कहीं ……।"

"अब याद आ रहा है बाज्या !" कनक ने बात काट सोचते हुए कहा—"आघात खा कर गिरते हुये मैंने रामू शब्द सुना था।"

"तो बस अमर ही होगा कान्त ! रामसिंह उसका साथी है ही।' —वृद्ध ने उत्साह से कहा।

"मैंने भी यही सोचा था बाबा।" कान्ता बोली।

"कौन अमर बाज्या ? तुम जानते हो उसे ? मुझे बताओ बाज्या, मैं प्राण देकर भी उस पत्र को प्राप्त करूंगा।" कनक ने आवेश में वृद्ध के हाथों को पकड़ते हुए कहा।

"पर तुम तो घायल हो कनक !"

"यही अवसर है मेरे कलंक को मिटाने का, बाज्या ! बताओ कहां है अमर ?"

"उतावले न हो, मैं ले चलूँगी तुम्हें" कान्ता ने कहा—"और हो

सका तो पत्र भी दिलवा दूँगी।"

"कौन तुम ?" कनक ने आश्चर्य से कहा।

"हाँ—मैं ! मैं जानती हूँ उसे, उसके घर को, अच्छी तरह।" फिर वृद्ध की ओर मुड़ कर बोली—"बाबा ! तुम्हें भरोसा है न अपने बेटे पर ?"

"हाँ हाँ, क्यों नहीं कान्त।"

"तो बाबा, मैं ले चलती हूँ कनक को। मैंने सब सोच लिया है। पत्र मिलते ही उसी क्षण कनक को श्रीनगर रवाना कर दूँगी। रात्रि का तृतीय पहर है, शीघ्रता करनी चाहिए।"

"ठीक है बेटा। जा, देश के लिए, जाति के लिये प्राण भी देने पड़ें तो पीछे न हटना।" वृद्ध की ज्योति हीन आंखों में दो अश्रु मुक्ता झलक आये।

कान्ता ने, अपने बिस्तर के तकिये के नीचे, से एक छोटी खुकुरी निकाली और उसे चोली में छिपा बोली—'चलो।"

सघन रात्रि थी। सारा ऋषिकेश सोया पड़ा था, केवल तारे आकाश में आँख मिचौनी खेलते हुए जाग रहे थे। चारों ओर सन्नाटा था, पर गंगा के अविराम गति से बहते हुए जल की कल-कल ध्वनि सुनाई पड़ रही थी।

खेतों से होकर कान्ता आगे-आगे चली जा रही थी, पीछे-पीछे कनक चल रहा था। दोनों मौन थे। कुछ देर तक ऐसे ही चलते रह कर कान्ता फिर एक पगडंडी पर हो ली, जिसकी बाईं ओर नीलकंठ की ऊँची बाढ़ थी। बाढ़ से लगकर चलते-चलते कान्ता एक स्थान पर रुक गई, जहाँ बाढ़ कुछ हल्की थी। हाथ के संकेत से उसने कनक को मौन रहने का संदेश दिया, कुछ देर आहट लेती रही फिर उस बाढ़ में से घुस कर दूसरी ओर निकल गई। कनक ने भी अनुकरण किया और देखा, वे किसी उद्यान में थे। सामने कोई पचास गज की दूरी पर एक मकान था जिसकी एक खिड़की से प्रकाश छन-छन कर आ रहा

था। बिना आहट किये वे दोनों उस खिड़की के निकट एक आम्र वृक्ष के नीचे पहुँच गये।

धीरे से कान्ता ने कनक के कान में फुसफुसा कर कहा—"यही मकान है। शायद वह जाग रहा है। तुम यहीं ठहरो, मैं पता लगाती हूँ।"

कनक ने सिर हिलाकर स्वीकृति दी। कान्ता जाने ही को थी कि कनक ने हाथ पकड़ कर रोक लिया और धीरे से बोला—'सुनो।"

कान्ता ध्यान से सुनने लगी। रात्रि की निस्तब्धता को भंग करते हुए उसे घोड़े की टापों की क्षीण आवाज सुनाई दी। दोनों उसी वृक्ष के नीचे दुबक कर आहट लेने लगे।

धीरे-धीरे टापों की ध्वनि स्पष्ट हुई और अब निकट ही दक्षिण दिशा की ओर स्पष्ट सुनाई दी। "शायद यहीं आ रहा है"—धीरे से कान्ता ने कहा। इसी समय खिड़की में एक छाया दिखाई दी जो तुरन्त ही अदृश्य हो गई।

कुछ ही क्षण बीते होंगे कि एक सवार उन्हें दिखाई दिया। औसत कद का जवान था। सिर पर राजपूती ढंग की पगड़ी थी। शरीर पर अंगरखा और चूड़ीदार पैजामा। कमर में कमर-बंद, जिससे तलवार लटक रही थी। वह सीधे मकान के पास जा कर रुका। घोड़े को समीप के एक पेड़ से बांध कर उसने द्वार पर तीन बार दस्तक दी। तुरन्त द्वार खुल गया और वह अन्दर चला गया।

कनक ने कान्ता की ओर देखा। कान्ता ने चुप बैठने का संकेत दिया और धीरे-धीरे बिना आहट किये एक ओर अंधकार में विलीन हो गई।

एक-एक पल काटना कनक को पहाड़ हो गया। थोड़ी देर बाद जब कान्ता लौटी तो कनक का धैर्य टूट चुका था। कुछ कर मरने की तीव्र आकांक्षा थी उसमें। धीरे से उसने कान्ता से कहा—"कब तक ऐसे बैठे रहेंगे, कुछ करना चाहिए—हाँ कुछ पता लगा ?"

"हाँ, अभी जो सवार भीतर गया है, वह अंग्रेज है।"

"अँग्रेज ?" आश्चर्य से कनक ने कहा।

"हाँ, और शायद जासूस ! अमर की उससे उसी पत्र के विषय में बात चीत हो रही थी। अंग्रेज पत्र माँग रहा था, पर अमर ने कहा—'ठहरो साहब, जल्दी क्या है ! पहले कुछ मदिरा-पान कर लें, साथ ही लेन देन की बातें भी करेंगे।"

"तो पत्र अभी अमर के पास ही है न ?"

"शायद, पर हो सकता है अब तक वह पत्र दे चुका होगा। अच्छा सुनो, तुम द्वार के पास जाकर छिप जाओ। यहाँ से थोड़ी दूर जा कर मैं चिल्लाऊँगी। अमर मुझे पहचानता है, मुझ पर आसक्ति भी रखता है, सुन कर वह अवश्य आवेगा। मैं उसे यहाँ से दूर ले जाऊँगी। तुम भीतर जा उस अंग्रेज को वश में करके उसकी तालाशी लेना। यदि पत्र मिले तो उसी के घोड़े को लेकर तुरन्त, सीधे श्रीनगर चले जाना। अगर पत्र न मिले तो बाबा के पास शीघ्र लौट कर मेरी प्रतीक्षा करना। समझ गये ?"

"हाँ ... पर तुम ... ?"

कान्ता ने तनिक हंस कर कहा—"मेरी चिन्ता न करो। मेरी नसों में भी नेपाली रक्त दौड़ता है, पानी नहीं। मैं अपनी रक्षा आप कर सकती हूँ। जाओ, सावधानी से द्वार के पास छिप जाओ। शीघ्र—समय अधिक नहीं है।"

कनक के जाने के थोड़ी देर बाद कान्ता दक्षिण दिशा की ओर सावधानी से चली। फाटक के पास पहुँच कर उसने जोर की चीख मारी, साथ ही चिल्लाई—"बचाओं-बचाओ।"

अमर, अंग्रेज के साथ शराब का प्याला पी रहा था कि उसने कान्ता के चिल्लाने की आवाज सुनी। वह तुरन्त खड़ा हो गया और खिड़की के पास आया।

फिर सुनाई दिया—'बचाओ-बचाओ।'

'निश्चय ही यह कान्ता का स्वर है'—उसने मन ही मन कहा।

,'क्या है ?'' अंग्रेज ने पूछा।

''कुछ नहीं साहब, यहीं की एक लड़की की आवाज है, शायद किसी मुसीबत में फंस गई है। मैं अभी आया।''

''पर सुनो ... हो सकटा है ...... ।''

''अभी आया साहब।'' अमर ने चलते-चलते कहा और तेजी से द्वार से बाहर हो गया।

अंग्रेज ने खिड़की के पास आकर देखा। अमर तेजी के साथ फाटक की ओर जा रहा था। क्षण भर सोच, उसने मुस्करा कर कहा—''ओ आई सी, मस्ट बी हिज़ बिलवेंड'' (अब समझा, अवश्य उसकी प्रेयसी होगी।)

वह मुड़ कर कुर्सी पर बैठना ही चाहता था, कि कनक ने दबे पांव पीछे से आकर, बांह से उसकी गर्दन दबायी और दूसरे हाथ की हथेली से कस कर मुंह बन्द कर दिया। अंग्रेज ने छूटने की बहुत कोशिश की, बहुत हाथ-पैर छटपटाया, पर कनक की भुजाओं से अपने को छुड़ा न सका। इधर कनक ने गर्दन वाली बांह को कसना आरम्भ किया। अंग्रेज की आंखों के आगे असंख्य तारे चमकने लगे। धीरे-धीरे बेहोश होकर वह जमीन पर गिर पड़ा।

कनक ने धड़कते हुए हृदय से तालाशी ली। भीतर वाले जेब में पत्र मिला। देखा अभी तक खोला नहीं गया था। अंग्रेज की जेब में एक पिस्तौल मिला, उसे भी कनक ने अपने हवाले किया और सावधानी से बाहर आया। द्वार के पास पेड़ से घोड़ा खोला। दूर कान्ता की धीमी पुकार सुनायी दी—'बचाओ-बचाओ ।'

'तुमने अपने प्राणों को संकट में डाल कर मेरे माथे का कलंक पोंछ दिया है कान्ता! जीवन भर तुम्हारी इस कृपा से मैं उऋण नहीं हो सकता देवी !''—मन ही मन कनक ने कहा और घोड़े पर बैठ कर फाटक से बाहर हो गया।

चार

श्रीनगर पहुँचते ही कनक, नेपाली सेना-नायक कमाण्डर श्री अमरसिंह थापा ज्यू (जी) की सेवा में उपस्थित हुआ। सैनिकोचित अभिवादन के पश्चात् उसने बलभद्र कुँवर का पत्र दिया और आज्ञा की बाट जोहता हुआ एक ओर चुपचाप खड़ा हो गया।

पत्र लेते समय कमाण्डर साहब की दृष्टि कनक के झुके हुये मस्तक पर बंधी उस पट्टी पर पड़ी जिसका अधिकांश भाग तिकोनी टोपी से ढका हुआ था। उन्होंने ध्यान से कनक के कपड़ों की ओर देखा। धूल में सने और एक आध स्थान पर फटे दिखाई दिये। समझ गये अवश्य राह में कुछ गड़बड़ी हुई है। बिना पत्र पढ़े ही पूछा—"यह सिर में क्या हुआ ?"

"चोट लग गई प्रभु ! ऋषिकेश के निकट अंग्रेजों के एक जासूस से मुठभेड़ हो गयी थी"—कनक ने कहा।

"अंग्रेजों के जासूस से—? तो मतलब यह है कि फिरंगियों का जाल

भारत की सीमा को पार कर अब हमारी हद में घुस कर फैलने लगा है !"—कमाण्डर साहब ने धीरे-धीरे गम्भीरता पूर्वक कहा और कुछ सोचने लगे।

थोड़ी देर तक चुपचाप सोचते रहे मानों कुछ निश्चय कर रहे हों फिर पत्र खोल पढ़ने लगे। पढ़ कर फिर कुछ देर मौन, चिन्ता सागर में गोते लगाते रहे।

कनक चुपचाप खड़ा रहा।

कई क्षण इसी तरह बीते। अंत में कमाण्डर साहब ने कहा—"अंग्रेज के जासूस से अपनी मुठभेड़ का पूरा-पूरा हाल सुनाओ।"

कनक ने सारी घटना दुहरा दी। सुनकर कमाण्डर साहब ने कहा—"देश को आज शंकर बाज्या जैसे लोगों की ही आवश्यकता है। अच्छा तुम जाओ।"

"और सरकार उस जासूस अमर ... ?"

"हाँ, उसको गिरफ्तार करना अत्यंत आवश्यक है। तुम कल सवेरे ही ऋषिकेश चले जाओ। वहाँ हमारी चौकी के सैनिकों की सहायता लेकर उसे कैद करके यहाँ ले आना। अब जाओ।"

"हौस प्रभु (जो आज्ञा)।" कनक ने झुक कर सलाम किया और कमरे से बाहर चला गया।

कनक के जाने के बाद अमरसिंह जी ने पत्र फिर पढ़ा और अपने आप कहने लगे —"यह असम्भव है। ऐसा कैसे हो सकता है ? नहीं बलभद्र तुमने ठीक नहीं सोचा।"

थोड़ी देर तक इसी प्रकार सोचते रहे फिर पुकारा—"को छ ?" (कोई है)

एक चाकर उपस्थित हुआ।

"कर्नल मानसिंह, कर्नल लाल बहादुर, मेजर धनराज और कप्तान रूद्रशमशेर के पास जाकर कहना मैंने तुरन्त बुलवाया है। जितनी जल्दी हो सके आ जायें। जाओ।"

नौकर के चले जाने के बाद अमर सिंह जी ने एक बार फिर सारा पत्र पढ़ डाला। फिर सोचने लगे—दून की घाटी में किला बनाकर मोर्चा बनाना ठीक नहीं, कारण शिवालिक पहाड़ को पार करके शत्रुदल दून पर आक्रमण करने की अपेक्षा सीधे गोरखपुर के अपने बुटौल चौकी से नेपाल की सरहद पर आक्रमण कर काठमांडू तक पहुँचने की कोशिश करेगा। नहीं, दून में मोर्चा न बनाकर गोरखपुर प्राँत में ही सरहद के पास अधिक ध्यान देना चाहिये।

तभी नौकर ने सूचना दी, कर्नल मानसिंह, कर्नल लाल बहादुर, और मेजर धनराज आ गये हैं और उन्होंने सरकार से विनती चढ़ाने को कहा है।''[1]

"लौ पठाइदे" (ठीक है भेज दो) अमरसिंह जी बोले।

आगन्तुकों ने कमरे में प्रवेश करते ही अभिवादन किया। अभिवादन का उत्तर दे अमर सिंह जी ने उन्हें बैठने का संकेत किया और बोले—

"कप्तान रूद्र नहीं आये ?"

कर्नल मान ने उत्तर दिया—"पता नहीं सरकार, शायद आते ही होंगे। आपकी आज्ञा पाते ही हम तो दर्शनों के लिये चले आये।"

"किसलिये याद किया सरकार ?"—कर्नल लाल बहादुर ने प्रश्न किया।

"कुंवर के यहां से मेरे पत्र का उत्तर आया है, उसी कारण ! अब कप्तान रूद्र आ जायें तो पूरी बातें हों।"

इसी समय रूद्र शमशेर ने कमरे में प्रवेश किया और अभिवादन व क्षमा याचना करते हुये कहा—"दर्शन गरें सरकार, विलम्ब के लिये क्षमा प्रार्थी हूँ—।"

"नहीं विशेष देर नहीं हुई। आइये हम सब आपकी ही राह देख रहे थे।" अमरसिंह जी बोले।

---

१. सेवा में उपस्थित होने की आज्ञा।

जब रुद्र शमशेर गलीचे पर कर्नल मानसिंह के पास बैठ गये तो अमरसिंह जी ने कहा—"आप लोग जानते हैं, मैंने बलभद्र कुंवर को एक पत्र भेजा था जिसमें उन्हें अपने अधीन सेना को दृढ़ बनाने तथा कूच के लिये तैयार रहने को कहा था। उसी का उत्तर आया है—यह ?" उन्होंने गाव तकिये के नीचे से पत्र निकाला और आगे बढ़ाते हुये कहा— "लीजिये, आप लोगों में से कोई इसे जोर से पढ़िये।"

मेजर धनराज ने हाथ बढ़ा कर पत्र लिया और खोलकर पढ़ने लगे। पत्र नेपाली भाषा में था जिसका अनुवाद इस प्रकार था।

"श्रीथापा कुल भूषण, वीर शिरोमणि कमांडर श्री अमर सिंह थापा के श्री चरणों में सेवक बलभद्र का सादर प्रणाम पहुँचे। सेवक को आपके कृपा पत्र पाने का सौभाग्य तथा मान प्राप्त हुआ है। सेवक आपकी समस्त आज्ञाओं का पालन, प्राण देकर भी करेगा।

दून की इस घाटी में हमारी नेपाली सेना की कुल शक्ति पांच सौ जवान हैं, जिनमें ३०० तो नेपाली सेना के गोरख और बरक पल्टन की टुकड़ी के और शेष बिसचुर से गढ़वाल तक के इलाके के आदमी हैं। उन्हें पूरी शिक्षा दी जा रही है। मैं स्वयं समय-समय पर उनकी विशेष देख रेख करता हूँ। फिलहाल शान्ति के काल में हमारी यह टुकड़ी ही दून की रक्षा के लिये काफी है, परन्तु यदि फिरंगियों से युद्ध छिड़ जाये तो यह संख्या रक्षार्थ नगण्य है। इसीलिये सेवक अपनी तुच्छ बुद्धिनुसार श्री चरणों में बिनती पेश करता है कि यहां सैनिकों की संख्या को बढ़ा दिया जाये। कम से कम एक हजार नेपाली सैनिक और हों।

इसके अतिरिक्त, सम्भव है युद्ध छिड़ने पर फिरंगी दून पर आक्रमण करें। इसलिये यहां दून में ही किला बनाकर उनसे मोर्चा लिया जाय। शत्रुदल का सहारनपुर पर, जो दून के दक्षिण पश्चिम में है, अधिकार तो है ही, सो हो सकता है कि वह दून पर आक्रमण करे। ऐसी हालत में वे शिवालिक पर्वत को पार करेंगे। इसलिये टिमली या मोहन घाटी

पर ही मोर्चे बनाये जायें। क्योंकि यही दो घाटियां ऐसी हैं जिनसे हो कर शत्रुदल चाहे तो शिवालिक को पार कर दून घाटी में प्रवेश कर सकता है। अन्य जो दर्रे हैं उनमें से एक ही दक्षिण पूर्व का कफरो दर्रा ऐसा है जिसमें से होकर वे आ सकते हैं, पर इसका रास्ता रायवाला से होकर आता है, जो काफी घुमावदार है।

शत्रु बहुत चालाक है। वह नेपाल पर सीधा आक्रमण न करके पहले हमारे अधीन देशों को जीतने का प्रयास कर सकता है। ऐसी दशा में सहारनपुर की ओर से दून पर आक्रमण होना असम्भव नहीं। इसलिए सेवक अपनी तुच्छ बुद्धिनुसार सेवा में यही विनती करता है कि दून में ही नाला पानी के पास जहां हमारा खलंगा[1] है, किला बनाकर टिमली और मोहन घाटियों पर मोर्चे बनाये जायें और यदि शत्रुदल उधर दक्षिण से आक्रमण करे तो वहीं उससे टक्कर ली जाय। इसके अतिरिक्त पांच-पांच सौ की, कम कम नेपाली सेना की दो टुकड़ियों को शीघ्रातिशीघ्र यहां भेज दिया जाय।

सरकार आप स्वयं विद्वान हैं, वीर हैं, दूरदर्शी हैं। आप स्वयं ही मेरी बातों की सत्यता पर विचार कर सकते हैं। आशा है अपने विचार प्रकट कर आप सेवक को गौरवान्वित करेंगे। इति—

सेवा में प्राणों की बाजी लगा देने वाला

बलभद्र

पत्र पढ़ लेने के पश्चात्, मेजर धनराज ने अमरसिंह जी की ओर देखा। कर्नल मानसिंह, कर्नल लालबहादुर और कप्तान रूद्र शमशेर ने भी उनका अनुकरण किया।

"बलभद्र का पत्र आप सभी ने सुना। उसपर आपके विचार क्या हैं?" अमर सिंह जी ने सीधा प्रश्न किया।

"कप्तान बलभद्र अनुभवी सेनानी हैं। मेरे विचार में उन्होंने दून

---

१. छावनी के लिये पाली शब्द

पर आक्रमण की जो सम्भावना प्रकट की है वह निर्भ्रान्त एवं उपेक्षा योग्य नहीं।" कप्तान रूद्र ने भी सीधा उत्तर दिया।

कर्नल मान ने मुड़कर रूद्र से कहा—"आपका कथन ठीक तो है, पर यह उचित नहीं जान पड़ता कि शत्रु नेपाल पर आक्रमण न करके पहले हमारे अधीन देशों पर आक्रमण करेगा; जब कि नेपाल की सीमा पर ही बुटौल में उसकी अपनी पुलिस चौकी है।"

"और भला जड़ को छोड़ कर कौन मूर्ख शाखाओं को काटेगा, जब कि वह सारे पेड़ का नाश चाहता हो।"—मेजर धनराज ने उनकी हाँ में हाँ मिलाते हुये कहा।

"ठीक है, पर ध्यान रहे शत्रु बहुत चालाक है। अपनी सैन्य-शक्ति के द्वारा नहीं प्रत्युत अपनी इसी चाल बाजी के कारण ही ये फिरंगी आज सारे भारत में अपना प्रभुत्व फैला बैठे हैं। हमारे अधीन देशों पर आक्रमण करके वह हमारे विजित देश के निवासियों की सहानुभूति एवं सहायता पाकर अपने को दृढ़ करना चाहेंगे। और यह भी हो सकता है कि इस चाल के द्वारा वे इस समस्त उत्तराखण्ड को हमारे विरुद्ध करके हमारे खिलाफ एक शक्तिशाली मोर्चा बना लें। फिर जितनी आसानी से वे हमारे अधीन इस उत्तराखण्ड को ले सकते हैं उतनी आसानी से नेपाल की भूमि को नहीं—इसे वे खूब जानते हैं।"

कर्नल लाल बहादुर अभी तक चुप थे। अब बोले—"कप्तान रुद्रशमशेर जी, आपका कथन निर्भ्रान्त नहीं, साथ ही कर्नल मान तथा मेजर धनराज के कथन को भी निर्मूल नहीं कहा जा सकता। पेड़ को गिराने के लिये सीधे जड़ पर भी प्रहार किया जा सकता है और उसकी टहनियों पर भी। पर जहां तक बात मुझे जंचती है, समझदार व्यक्ति पहले जड़ पर ही प्रहार करेगा।"

"मेरा भी यही विचार है।"—अमरसिंह जी बोले, "गोरखपुर से आक्रमण करके शत्रुदल हमारी यहां—उत्तराखण्ड की सेना को, नेपाल से अलग कर देना चाहेगा। क्योंकि इससे उसे काठमांडू तक पहुँचने

तथा जय प्राप्त करने में सुगमता होगी। फिर काठमांडू के पतन के पश्चात, यहां उत्तराखण्ड में हमारी शक्ति का पतन आप ही हो जायेगा। ठीक उसी तरह, जिस तरह पेड़ की जड़ को काट दो तो उसकी टहनियां फिर कहां पनप सकती हैं! और फिर दून की ओर से आक्रमण की सम्भावना मुझे तो बहुत कम है, क्योंकि भौगोलिक परिस्थितियों के अनुसार दून की घाटी, पहाड़ों से घिरे होने के कारण अभेद्य है। हां, शत्रुदल चाहे तो सतलज की ओर से……।"

"प्रभु!"—नौकर ने कमरे में प्रवेश कर कहा।

"क्या है?"

"गोरखपुर की ओर से आदमी आया है। शीघ्रातिशीघ्र दर्शन चाहता है।"

"भेजो"—अमरसिंह जी ने कहा। मेजर धनराज, कर्नल मानसिंह कर्नल लाल बहादुर तथा कप्तान रूद्र शमशेर एक दूसरे की ओर देखने लगे।

"सरकार—!" हाथ जोड़े हुए एक आदमी ने कमरे में प्रवेश किया,—"फिरंगियों की बुटौल पुलिस चौकी पर फौजदार मनराज ने आक्रमण कर दिया है।"

"क्या!"—अमरसिंह जी तथा उपस्थित सभी चौंक पड़े।

पांच

गोरखपुर जिले के अन्तर्गत, बुटौल से पांच मील दूर, उस छोटे से गांव के एक मकान में कुछ तरुण बैठे बातें कर रहे थे।

एक ने कहा—"फौजदार साहब, बुटौल पर फिरंगियों का अधिकार, हमारी शक्ति के लिये स्पष्ट चुनौती है।"

दूसरे ने पहले का समर्थन किया—"हमारी ही सीमा में घुस, बुटौल आदि स्थानों पर पुलिस चौकियां खोल, फिरंगियों ने हमारी छाती पर मूंग दली है। सीमा निर्णायक संयुक्त पंचायत के नेपाली पंच के नेता सुब्बा कुलानन्द का अपमान, व जो अशिष्ट व्यवहार, अंग्रेजी पंच के नेता मेजर ब्रेडशॉ ने किया था, वह उनका नहीं, समस्त नेपाली जाति का अपमान था। पंचायत भंग होने के २६वें दिन ही उन्होंने गोरखपुर के निकटवर्ती प्रदेशों पर अधिकार कर लिया। यह हमारे लिये अपमान की बात है कि हमने, वीर नेपाली सेना ने, जिनका प्रभुत्व आज सतलज से काली नदी तक फैला हुआ है, फिरंगियों के इस हस्तक्षेप को बिना

लड़े ही चुपचाप सहन कर लिया।"

"यही बात उसी दिन से, जिस दिन बुटौल पर फिरंगियों का अधिकार हुआ, मेरे सीने में कांटे की तरह चुभ रही है। मैं भी तुम्हारी तरह इसे अपना, अपनी जाति का, देश का अपमान समझता हूँ। पर क्या करूं मन मार कर रह जाता हूँ, क्योंकि हमारे सेनानायक की आज्ञा नहीं।"—फौजराज मनराज ने उदास होकर कहा।

"कमांडर साहब तो बूढ़े हो चले हैं। उनकी रगों में अब वह शक्ति कहां कि ईंट का जवाब पत्थर से दें! यह काम तो आप और हम, गर्म रक्त वाले तरुण ही कर सकते हैं।"—पहले व्यक्ति जनार्दन ने कहा।

"ठीक है—पर सेनानायक अनुभवी हैं। बिना उनकी आज्ञा के हम कर ही क्या सकते हैं?" मनराज ने उत्तर दिया।

"इस गाँव की सेना के नायक तो आप हैं, चाहें तो सब कुछ कर सकते हैं।"—दूसरे व्यक्ति जीतलाल ने कहा।

"कम से कम अपने विचार तो आप कमांडर साहब पर प्रकट कर ही सकते हैं।"—एक अन्य व्यक्ति किशन बहादुर ने कहा।

"कोई लाभ नहीं।"—मनराज ने हताश सा हो उत्तर दिया—"तुम स्वयं सैनिक हो, सैनिक अनुशासन जानते ही हो।—नहीं—मैं कुछ नहीं कर सकता, मेरे हाथ बँधे हैं।"

"यह तो आप जानते ही हैं, फिरंगियों के साथ युद्ध होना निश्चित है, फिर अवसर को हाथ से जाने देना ठीक नहीं, फौजदार साहब!" जनार्दन ने कहा।

"क्या मतलब तुम्हारा?" पूछा मनराज ने।

"बुटौल की चौकी पर जो फिरंगियों की टुकड़ी है, वह बरसात के कारण शीघ्र ही वापस जाने वाली है। बरसात में बुटौल, फिरंगी सेना के लिए स्वास्थ्यप्रद नहीं। उनका स्थान हिन्दुस्तानी पुलिस ले लेगी। यह हिन्दुस्तानी पुलिस उतनी योग्य नहीं जितनी फिरंगी सेना, और न

ही उनके पास बहुत अच्छे हथियार हैं। इसी अवसर पर उन पर आक्रमण करके बुटौल पर अपना अधिकार कर लेना चाहिये। हमारे देखा-देखी निश्चय ही तब त्रिहुत, पुनिया आदि फिरंगी पुलिस चौकियों पर हमारी अन्य टुकड़ियाँ आक्रमण करके फिरंगी सत्ता को नेपाल की सीमा से दूर फेंक देंगी।"

जनार्दन ने तनिक रुक कर फिर कहा—"हमारी यहां की टुकड़ी की शक्ति दो सौ जवान हैं और उनकी मुश्किल से एक सौ। बड़ी आसानी से हम बुटौल को अपने अधिकार में कर सकते हैं। फिरंगियों के विरुद्ध यह हमारी पहली जय होगी और उसका श्रेय मिलेगा आपको—फौजदार मनराज को।"

"ठीक तो है, पर कमान्डर साहब·········।"

"कमांडर साहब जानते हैं, युद्ध होगा ही। हम सब फिरंगियों की इन चौकियों के पास जो पड़ाव डाले बैठे हैं, सो इसी लिए! फिर जब बुटौल पर नेपाली पताका फहरायेगी, तब भी क्या कमाण्डर साहब प्रसन्न न होंगे?"

"पर·· पर हमारी यहां की सेना··· ···?" मनराज ने प्रश्न किया।

"सब उस अपमान को भस्म कर देने के लिए फूस बने बैठे हैं, चिंगारी की देर है—ज्वाला भड़क उठेगी।"

"तो·· तो ठीक है। तैयारी करो। फिरंगी सेना के जाते ही आक्रमण कर देंगे। जो होना होगा, देखा जायेगा। हमारे माथे पर जो कलंक लगा है, उसे मिटा तो देंगे ही!"—मनराज ने उत्साहित होकर कहा।

"यह बात शोभा देती है आपको—वीर फौजदार मनराज को।" जनार्दन ने गद्‌गद्‌ होकर कहा—"मैं सब प्रबन्ध कर लूंगा, आप निश्चित रहें।"

उसके बाद बड़ी देर तक आपस में बातें होती रहीं।

× × ×

उपर्युक्त घटना के बाद कई दिन तक जनार्दन मनराज से नहीं

मिला। सहसा एक दिन शाम को वह मनराज के सामने उपस्थित हुआ। फौजदार अपने अन्य साथियों के साथ बैठे हुक्का पी रहे थे। जनार्दन के तमतमाये मुख को देखकर सहम गये। पूछा—"क्या बात है जनार्दन ?"

"क्या बताऊँ फौजदार साहब ! वह बुटौल का दारोगा रामजीलाल है न ? कम्बख्त ने आज मुझे चौकी के आसपास घूमने के कारण सिपाहियों से पकड़वाया और जासूस होने का संदेह किया। उसने मुझसे पूछा—'तुम कौन हो ?' मैंने नम्र हो उत्तर दिया—'मैं एक साधारण किसान हूँ', तो उसने सिपाहियों से कहा—'साला ऐसे नहीं बतायेगा, जरा पूजा करो इसकी।"

"इतनी हिम्मत उसकी ?" मनराज ने क्रोधित होकर कहा—"फिर ?"

"फिर क्या ! मुझे लात घूंसों से पीटा गया। स्वयं उस पाजी दारोगा ने मेरे गाल पर थप्पड़ मारा।"—जनार्दन क्रोध से चुप हो गया।

"फिर ?"

"फिर भी मेरे इनकार करने तथा यह कहते रहने पर कि मैं एक किसान हूँ—मुझे छोड़ दिया गया।"

"यह अपमान ! दारोगा ने तेरे गाल पर थप्पड़ नहीं मारा जनार्दन, उसने अपनी मौत को निमंत्रण दिया है। पर तू इतने दिनों तक कहाँ था, क्या कर रहा था ?"

"बुटौल पुलिस चौकी की नींव से पत्थर उखाड़ने में लगा था फौजदार साहब ! इतने दिनों तक वहाँ का सारा भेद लेता रहा। फिरंगियों की टुकड़ी को बुटौल से गये आज तीसरा दिन है। उनकी कुल शक्ति ८० जवान हैं, जिनमें से करीब २५ नये रंगरूट जान पड़ते है। मेरे विचार में तो जितनी जल्दी हो उनका फैसला कर देना चाहिए। रात्रि के अंतिम प्रहर में यदि आक्रमण करें तो हमें कोई

विशेष बाधा न पड़ेगी, क्योंकि उस समय केवल दो संतरी जागते रहते हैं, और शेष सब सोये।

"ठीक है, ऐसा ही होगा। हमारी फौज तो तैयार है न ?"

"पूरी तरह से फौजदार साहब ! आज्ञा भर की देर है।"

"तुम लोग भी तो सेनानी हो।" मनराज ने जीतलाल, किशन आदि लोगों की तरफ मुड़ कर कहा—"कल ही आक्रमण कर दिया जाये, क्या कहते हो ?"

"ठीक है, शुभस्यशीघ्रम !" सबने एकमत हो उत्तर दिया।

"तो कल—कल मई १८१४ की २९वीं तिथि को ही यज्ञारम्भ के पुण्य दिवस होने का सौभाग्य मिले।" उत्साहित होकर मनराज ने कहा—"अच्छा अब आप लोग जायें और कल सवेरे २ बजे १५० आदमी लेकर आक्रमण के लिए तैयार रहें।"

"जो आज्ञा।" सब उठकर चले गये।

× × ×

दूसरे दिन चार बजते न बजते ही मनराज ने अपनी टुकड़ी को ले कर पुलिस चौकी पर छापा मारा। ड्यूटी पर सिपाही सजग थे, फायर करके उन्होंने अन्य सिपाहियों को सचेत किया और देखते ही देखते चौकी के सब सिपाही तैयार होने लगे, परन्तु जब तक वे तैयार हों तब तक मनराज और उसके सैनिक थाने के भीतर घुस आये और खुकुरी ले भूखे शेर की भांति उन पर झपट पड़े। भयंकर मारकाट आरम्भ हुआ। जिसके सामने जो आया वह उसी से जूझ पड़ा। चौकी की पुलिस इस अकस्मात आक्रमण के कारण धबरा कर युद्ध कर रही थी। इसके विपरीत नेपाली सैनिक बहुत उत्साहित हो कर, अपने माथे के कलंक को मिटाने के लिए हथेली पर प्राण ले कर, लड़ रहे थे। थोड़ी देर तक घमासान युद्ध होता रहा, पर कुछ ही समय पश्चात् पुलिस सेना का साहस टूटने लगा। नेपाली सैनिक और अधिक उत्साहित होकर लड़ने लगे।

इधर दस आदमी ले कर जनार्दन बारूद घर की ओर चला और बिना विशेष विरोध के उसने उस पर अधिकार कर लिया। बारूद-घर का द्वार बंद कर उसने आदमियों को वहाँ पर उसकी हिफाजत के लिए छोड़ा और स्वयं अकेले नंगी खुकुरी ताने दारोगा के कमरे की ओर चला।

दारोगा के कमरे का द्वार बंद था। उसके पास ही कुछ नेपाली सैनिक और पुलिस आपस में भिड़ रहे थे। जनार्दन ने ऊँचे स्वर में अपने सिपाहियों को ललकार कर कहा—"सिपाहियों को छोड़ो। दारोगा कहाँ है, उसे पकड़ो।"

"दारोगा वहीं अपने कमरे में है"—किसी ने जोर से उत्तर दिया।

जनार्दन द्वार की ओर लपका। धक्का मारा, देखा वह भीतर से बंद था। चिल्ला कर उसने कहा—"दारोगा रामजीलाल, तुम्हारे सिपाही बुरी तरह पिट रहे हैं। हार मान लो, हथियार डाल दो। नाहक सिपाहियों को कटवाने से कोई लाभ नहीं।"

भीतर से कोई उत्तर न आया।

जनार्दन ने फिर ऊँचे स्वर में कहा—"दारोगा, जान की खैर चाहते हो तो हार मान लो। हमारे बन्दी बन जाओ, नहीं तो याद रखना इस पुलिस चौकी की ईंट से ईंट बजा दूँगा।"

फिर भी भीतर से कोई उत्तर न आया।

जनार्दन का धैर्य टूटने लगा। क्रोधित हो कर वह चिल्लाया—"अंतिम बार कह रहा हूँ दारोगा! जान की सलामती चाहते हो तो हथियार डाल दो। बाहर निकल आओ!"

अब की बार भीतर से दारोगा ने उत्तर दिया—"अच्छी बात है। मार-काट रुकवा दो। मैं बाहर आ रहा हूँ।"

चिल्ला कर जनार्दन ने कहा—"दारोगा ने हार मान ली है। वह हमारा कैदी बनने को तैयार है।"

मनराज का ऊँचा स्वर सुनाई पड़ा—"युद्ध रोक दो।"

बिजली की भांति पुलिस चौकी के सभी स्थानों पर यह बात फैल गई—दारोगा पकड़ा गया, उसने हार मना ली है।

पुलिस के सिपाही निरुत्सा तो थे ही, इस खबर को सुनते ही उनका रहा सहा साहस भी जाता रहा। हथियार डाल दिये। युद्ध बन्द हो गया।

कैदी दारोगा रामजीलाल, फौजदार मनराज और उसके साथियों के सामने लाया गया। जनार्दन के होठों पर कुटिल हँसी खेल गई। सामने आकर उसने पुछा—"क्यों दारोगा ? पहचानते हो मुझे ?"

रामजीलाल ने एक बार उसकी ओर देखा भर, मुँह से कुछ न कहा।

"याद है दारोगा, तुमने मेरी पूजा की थी। मेरे गालों पर पाँच उंगलियों का फूल भी चढ़ाया था ! मैं भी तुम्हारी पूजा करूँगा, ऐसी पूजा कि जिसके बाद तुम सचमुच भी भगवान बन जाओगे !" कहते-कहते उसने दारोगा के गाल पर जोर का थप्पड़ मारा।

क्रोध से दारोगा की आंखें लाल हो गईं।

"रातों आँखा देखाउँछस !" (लाल-लाल आँखें दिखाता है)—जनार्दन का क्रोध अपनी सीमा को पार कर चुका था, और बिना सोचे समझे उसने दारोगा पर लात और घूँसों की वर्षा सी कर दी।

फौजदार मनराज ऐसी परिस्थिति के लिए तैयार न थे। वह क्षण भर अवाक् रह गये, पर फौरन संभल कर बोले—"जनार्दन रुको ! यह क्या कर रहे हो ? पागल हो गये क्या ? भूलो मत यह हमारा कैदी है।"

जनार्दन रुक गया। अपने से बड़े अफसर की आज्ञा जो थी, पर आंखें क्रोध से लाल हो रहीं थीं।

दारोगा ने धीरे धीरे जमीन से उठते हुये कहा—"फौजदार साहब, कैदी के साथ आपका यह व्यवहार कहाँ तक ठीक है, यह नायक की हैसियत से आप ही जानें। पर नेपाली सेना के वीर सैनिकों की क्या

यही वीरता है ?'' वीरता शब्द में उसने व्यंग का पुट दिया।

मनराज तिलमिला उठा। जनार्दन की ओर देखकर क्रोध से बोले—''जनार्दन तुमने—तुमने अपने नीच कर्म से समस्त नेपाली जाति का सिर नीचा कर दिया। दरोगा हमारा बन्दी है—युद्ध बन्दी ! और हम नेपालियों ने अपने बन्दी के साथ सदा सहृदयता का व्यवहार किया है। युद्ध में तुम अपनी खुकुरी से उसका सिर उड़ा देते, मैं तुम्हें साधुवाद देता। पर बन्दी रूप में निहत्था, तुम्हारे सामने आने पर तुम अपना पुराना बैर निकालने पर तुल गये ! यह धर्म और नियम विरुद्ध है, साथ ही तुम्हारे काले हृदय का द्योतक है ! तुम्हें माफी मांगनी चाहिये।''

''पर इसने भी मुझे लात घूँसों से पिटवा कर मेरा अपमान किया था।'' —जनार्दन ने दलील दी।

''पर तुम उसके युद्ध बन्दी न थे। माफी माँगो !'' फौजदार मनराज का स्वर कड़ा था।

जनार्दन के चेहरे का रंग उड़ गया। उसे स्वप्न में भी यह आशा न थी। विजय का भूत उसके सिर पर से उतरने लगा।

जिसे अभी अभी लात घूँसों से पीटा, उसी से माफी ? यह अपमान ! नहीं, वह माफी नहीं माँग सकता—नहीं माँगेगा। वह चुपचाप खड़ा रहा।

''नायक जनार्दन ! सुना नहीं तुमने ? मैं फौजदार मनराज, इस टुकड़ी का सरदार, तुम्हें आज्ञा दे रहा हूँ। दरोगा से माफी मांगो।''

एक लहमे तक जनार्दन चुप रहा, फिर जल्दी से बोला—''मुझे माफ करना।'' उसकी आंखों में आँसू आ गये, पर यह पश्चाताप के न थे, थे बेबसी और क्रोध के।

मनराज के मुख पर संतोष की छाया दिखाई दी। बोले—''अब ठीक है जनार्दन। जब तक मैं यहाँ का प्रबन्ध करूं, सब को ले जा कर उधर जेल में बंद कर दो।'' और वे दरोगा के कमरे की ओर चले।

साथ जीतलाल और किशन भी चले। जनार्दन वहीं खड़ा रहा।

थोड़ी देर तक जनार्दन चुप खड़ा रहा, फिर अपने सिपाहियों को कहा—"ले जाओ, सब पुलिस वालों को, जेलवाले कमरे में बंद कर दो। दारोगा को मैं अलग वाले कमरे में बंद करूंगा।

जब सब पुलिस के सिपाही ले जाये गये तब जनार्दन ने गम्भीरता से कहा—"चलिये दरोगा साहब, मंदिर में—उधर पूरब वाले कमरे में।"

आगे-आगे दारोगा और पीछे-पीछे जनार्दन चला। कमरे में घुसते ही जनार्दन ने फुर्ती से खुकुरी निकाल कर एक ही वार में दारोगा का सिर उड़ा दिया। जमीन पर तड़फती लाश को देख कर उसने जोर का कहकहा लगाया—"मन्दिर में देवता की स्थापना हो रही है। भगवान स्वर्ग जा रहे हैं। यहाँ उनकी पाषाण मूर्ति ही रह जायेगी—हा-हा-हा मैंने अपने अपमान का बदला लिया। अब मेरा कलेजा ठन्डा हुआ।"—तभी कुछ सजग होकर उसने सोचा—अब मुझे यहाँ से भाग जाना चाहिए। फौजदार साहब को पता लगने से पहले नहीं तो प्राण के बदले प्राण देना पड़ेगा। चुपके से वह चौकी से बाहर निकल गया।

दारोगा की मृत्यु और जनार्दन का भागना, जब फौजदार मनराज ने सुना तो वह स्तब्ध रह गये। माथे पर हाथ मार कर बोले—"ऐसे ही लोग देश और जाति के द्रोही और कोढ़ होते हैं। यह घटना हमारी इस जीत के लिये हार बनकर आयी है।"

छः

बुटौल के पतन का समाचार जब कम्पनी के गवर्नर जनरल मार्क्विस ऑफ हेस्टिंग्स के कानों में पड़ा तो वे झल्ला उठे। 'चींटी के पर निकल आये', उन्होंने सोचा। प्रबल ब्रिटिश सिंह को सोते से जगा कर भिड़ना चाहता है, पहाड़ी चूहा? सात समुद्र पार से आकर भारत भूमि के विस्तृत प्रदेश पर झंडा फहराने वाली वीर आंग्ल सेना से, नेपाल पहाड़ी के असभ्य जंगली छेड़-छाड़ कर रहे हैं? भारतीय इतिहास में वीरता के लिये प्रसिद्ध, राजपूत, मराठे आदि अनेक जातियों का हमने मान-मर्दन किया! यह जंगली जाति! चुटकी में मसल कर फेंक देंगे!

तभी उन्हें याद आया—गोरखपुर प्रान्त के पास का वह भू-भाग जो पहले पाल्पा राज्य के अधीन था। पाल्पा राज्य पर अधिकार कर नेपाल ने उसके पहाड़ी अंश को अपने राज्य में मिला लिया था, तथा तराई के भू-भाग पर अवध के नवाब ने अधिकार कर लिया था।

इस तराई के प्रदेश का शासनाधिकार, अवध के नवाब ईस्ट इंडिया कम्पनी को दे चुके थे। इसी प्रदेश के अन्तर्गत पुर्निया, त्रिहुत आदि भागों पर नेपाली सेना ने जब कुछ माह पहले अधिकार किया था, तब हम चाहते तो उनका मान मर्दन कर सकते थे। पर शान्ति तथा न्याय प्रिय हम, हमने शान्तिपूर्वक नेपाल सरकार से उस मामले को सुलझाना चाहा। पत्र व्यवहार किया—उनके इस अनाधिकार का विरोध किया। देहरादून, गढ़वाल तथा कुमाऊं की विजय का भूत नेपाल के सिर से न उतरा था, सो उसके कानों, जूँ न रेंगी। यहाँ तक कि दोनों राज्यों की स्थायी सीमा बनाने के लिये एक संयुक्त कमीशन नियुक्त किया, पर कोई हल न निकलना था, न निकला। अपने प्रबल प्रतिद्वन्द्वी मराठे तथा अन्य भारतीय नरेशों को पराजित करने वाले हम, इसे कैसे सहन कर सकते थे! २५ दिन की अवधि में इस विवादास्पद भू-भाग को छोड़ने की चुनौती दी और २६वें दिन गोरखपुर के जिलाधीश ने हमारे आदेशानुसार हमारी तीन पल्टन सेना ले उक्त भू-भाग पर निर्विरोध कब्जा किया और स्थान-स्थान पर अपने थाने कायम किये। अब बुटौल के थाने पर आक्रमण तथा अधिकार स्पष्ट बता रहा है शान्तिपूर्वक यह उलझन न सुलझेगी। नेपाल के रूप में एक नये प्रतिद्वन्द्वी का सामना करना पड़ेगा हमें!

अपने पाइप में तमाखू भर उसे जला वह कुर्सी पर बैठ कश खींच, सोचने लगे। इस पहाड़ी प्रान्त से इतनी जल्दी छेड़छाड़ की आशा नहीं थी। सोचा था—जैसे साम-दाम-दंड से भारत के अन्य रियासतों को अपने वश में कर लिया उसी प्रकार इस पहाड़ी प्रदेश को भी धीरे-धीरे अपनी छत्रछाया में ले आवेंगे, पर बुटौल की घटना ने दूसरा ही रंग दे दिया है इसे! अब तो कुछ करना ही होगा! युद्ध? समस्या को सुलझाने के लिये यही एक तरीका है—युद्ध! नेपाली? पहाड़ी असभ्य जाति! हथियारों से भी हीन है, टक्कर क्या ले सकेगी, भली भांति ट्रेन्ड तथा आधुनिक हथियारों से लैस हमारी सेना से!

हाँ प्रदेश पहाड़ी है—भारी तोपों एवं युद्ध सामग्रियों को ले जाने में कुछ दिक्कत हो सकती है हमें !

पाइप पर कुछ कश खींच उन्होंने फिर सोचा। युद्ध तो नेपाल के साथ अब करना ही होगा। ईंट का जवाब पत्थर से देकर तुरन्त युद्ध छेड़ दिया जाय, या कुछ ठहर कर ? वर्षा के कारण हमारी अंग्रेज सेना वहाँ के थानों से लौट आई है, तभी तो वे असभ्य साहस कर सके हैं हमसे छेड़-छाड़ करने का ! अभी दो तीन महीने तक वर्षा का जोर रहेगा। ऐसी दशा में हमारी सेना उनके इस बुटौल के आक्रमण का मुँह तोड़ जवाब देने में क्या समर्थ होगी ? फिर यदि वर्षा आदि की परवाह न कर हम अभी आक्रमण करें और जय प्राप्त करने तथा उनका मान-मर्दन करने में हमें कुछ विलम्ब हो तो भारत में हमारी शक्ति को कितनी ठेस पहुँचेगी ? भारत में जमी हुई हमारी प्रतिष्ठा के लिए यह विलम्ब कितना घातक सिद्ध होगा ? साथ ही शत्रु कितना ही असभ्य, कितना ही छोटा क्यों न हो, उसे छोटा नहीं समझना चाहिए। युद्ध की पूरी तैयारी करके ही ऐसा आक्रमण करना चाहिए जिससे शत्रु की कमर ही टूट जाये। फिर युद्ध के लिए धन की भी आवश्यकता होगी। अभी तक देशी नरेशों से भिड़ते रहने के कारण कम्पनी का खजाना भी रिक्त-प्रायः है, अतः इसका इन्तजाम भी किसी देशी नरेश से ही करना होगा। इस प्रबन्ध में भी समय लगेगा। तो..., क्या किया जाय ? आज बुटौल चला गया, कल पुर्निया त्रिहुत आदि भी हमारे अधिकार से जा सकते हैं। इससे हमें न केवल उन प्रदेशों का नुकसान होगा वरन हमारी प्रतिष्ठा को भी क्षति पहुँचेगी। बुटौल पर आक्रमण का उत्तर तो देना ही चाहिये—देना ही होगा। यह तो निश्चित है। तुरन्त युद्ध की घोषणा कर दें—तो वर्षा, पहाड़ी उबड़-खाबड़ एवं दुर्गम प्रदेश, तथा धनाभाव के कारण तुरन्त जय की आशा क्षीण है। इससे हमारी विजयी सेना की मान-हानि का भय अधिक है। तो ? कुछ ठहर कर, वर्षा के पश्चात् पूरी

तैयारी करके युद्ध किया जाय ? पर इससे शत्रु यह न सोचे कि हम कमजोर पड़ गये हैं —डर गये हैं ! भारत में जमती हुई हमारी मर्यादा पर कितनी ठेस पहुँचेगी इससे ! युद्ध तो अब निश्चित है, जय को निश्चित करने के लिये कोई बीच का मार्ग निकल सके तो अच्छा हो ।

वह कुर्सी पर से उठ खड़े हुए । पाइप की राख झाड़ कर उन्होंने उसे मेज के एक किनारे पर रख दिया । धीरे-धीरे कमरे में टहलते हुये वे गम्भीर चिन्ता में निमग्न हो गये । थोड़ी देर तक ध्यान मग्न रहे फिर दीवार पर टँगे भारत के विशाल मानचित्र के सम्मुख खड़े हो गये । कुछ देर एकटक उसे देखते रहे, मानो किसी निश्चय पर पहुँच जाना चाहते हों । फिर कमरे में टहलते हुये सोंचने लगे—युद्ध का ऐलान अभी भी हो सकता है, और कुछ ठहर कर भी । ठहर कर हो तो धनाभाव की पूर्ति और सेना की तैयारी दोनों भली भांति हो सकते हैं । फिर वर्षा के रूप में प्रकृति का विरोध भी तब तक कम हो जावेगा । तब तक नेपाल सरकार को उनके इस हस्तक्षेप का विरोध करते हुए एक कड़ा पत्र लिखा जाये और उन्हें चेतावनी दी जाये कि इस प्रकार के उनके अनाधिकार यदि नहीं रुके तो युद्ध की ज्वाला में नेपाल को भस्म कर दिया जायगा । इस प्रकार, इस पत्र के द्वारा युद्ध की तैयारी के लिये पर्याप्त समय भी मिलेगा, साथ ही हमारी न्याय और शान्ति-प्रियता, हमारी प्रतिष्ठा में चार चाँद लगा देगी ।

अब तक के गम्भीर खिंचे होठो पर सहज मुस्कान की एक रेखा खिंच गयी, मानो विचार ने निश्चय का रूप धारण कर लिया हो ।

× × ×

एक माह पश्चात्—

कलकत्ते के एक विशाल हाल में ईस्ट इंडिया कम्पनी के प्रमुख सदस्यों की एक गुप्त बैठक हुई । विशेष रूप से बुलवाये गये सेना के अनेक उच्च पदाधिकारी भी इसमें सम्मिलित थे । सभा को कम्पनी के

गवर्नर जनरल हेस्टिंग्स ने बताया कि कम्पनी के प्रतिनिधि की हैसियत से उन्होंने दो पत्र लिखे। एक नेपाल सरकार को, जिसमें गोरखपुर प्रान्त के भू-भागों पर नेपाली सेना के हस्तक्षेप की कड़ी निंदा की, तथा बुटौल आदि अंग्रेजी थानों पर उनके आक्रमणों का कड़ा विरोध करते हुये उन्हें चेतावनी दी है कि यदि गोरखपुर प्रान्त के समस्त प्रदेश जो उन्होंने हथिया लिए हैं, शीघ्र ही कम्पनी को लौटा न दिये जाँय तथा ऐसा फिर कभी न करने का लिखित आश्वासन न दें तो विवश होकर हमें युद्ध की घोषणा करनी होंगी। दूसरा पत्र उन्होंने अवध के नवाब गाजीउद्दीन के नाम लिखा, जिसमें उन्होंने नेपाल राज्य की छेड़खानी का उल्लेख करते हुए युद्ध की सम्भावना प्रकट की है, तथा इस युद्ध का अनुमानित व्यय ढाई तीन करोड़ रुपये की तुरन्त व्यवस्था कर, कम्पनी सरकार के प्रति अपनी मित्रता एवं वफादारी प्रकट करने के अवसर का सदुपयोग करने के लिए लिखा है।

नेपाल राज्य ने पत्रोत्तर में इन प्रान्तों को नेपाल का ही अंग बताया है। उनका कथन है कि पाल्पा राज्य के विजय के साथ-साथ समस्त गोरखपुर प्रान्त नेपाली राज्य के अन्तर्गत हो गया था। तराई भू-भाग पर अवध के नवाब ने अधिकार किया। यह उनका अनाधिकार था। समय आने पर उनके इस अनाधिकार का उचित उत्तर दिया जाता परन्तु गद्दार तथा कायर नवाब ने कम्पनी सरकार को भू प्रान्त का शासनाधिकार बेच दिया। तुम्हारी कम्पनी सरकार ने स्थान-स्थान पर अपने थाने खोलकर अपनी सत्ता को जमाना चाहा। क्या यह तुम्हारी अनाधिकार चेष्टा नहीं ? सात समुद्र पार विलायत से आने वाले फिरंगी कब से भारत भूमि को अपनी बपौती समझने लगे ? कल के व्यापारी आज राज्य सम्बन्धी मामलों में दखल देने चले हैं ! भारतीय नरेशों की आपसी फूट का लाभ उठाने वाले तुम ! स्मरण रहे, हिमालय के आंचल में बसा यह हिन्दू राज्य तुम्हारी बन्दर घुड़कियों से डर नहीं सकता -- अपनी सत्ता

को खो कर अपनत्व से हाथ धो नहीं सकता। यह राज्य क्षत्रिय राज्य है, वैश्य राज नहीं जो युद्ध शब्द से डर जाय, वरन इस शब्द के उच्चारण मात्र से ही उसके रोम-रोम में प्रफुल्लता भर जाती है। तराई का भू-भाग हमारा है, हमारा रहेगा। लौटाने का प्रश्न ही नहीं उठता! रही लिखकर क्षमा माँगने की बात, सो तो हास्यास्पद है। युद्ध का स्वागत करते हुए हम तुम्हारी घोषणा की प्रतीक्षा करेंगे।

दूसरे पत्र के उत्तर में लिखते हुए अवध के नवाब गाजीउद्दीन ने कम्पनी सरकार के प्रति अपनी मित्रता का आश्वासन देते हुए भरसक सहायता देने का विश्वास दिलाया है। उन्होंने लिखा है कि वे युद्ध के लिये डेढ़ करोढ़ रुपये का तो तुरन्त इन्तजाम कर सकते हैं। शेष की व्यवस्था के लिये वे प्रयत्नशील हैं, और आशा है शीघ्र ही उनका भी प्रवन्ध हो जायेगा।

नेपाल राज्य के पत्र से स्पष्ट है, बिना युद्ध यह समस्या सुलझ नहीं सकती। अब आप लोग निश्चय करें कि ऐसी अवस्था में क्या करना ठीक है।''

इतना कह कर हेस्टिंग्स बैठ गये। उनके बैठते ही सदस्यों में खुसपुसाहट मच गयी। थोड़ी देर तक सभा के सदस्य आदि इसी प्रकार खुसपुसाहट करते रहे। अन्त में एक सदस्य ने उठकर कहा—''क्या सभापति महोदय इस विषय पर अपनी राय प्रकट कर हमें गौरवान्वित करेंगे?''

सभापति महोदय ने एक बार गवर्नर जनरल हेस्टिंग्स की ओर देखा और खड़े हो गम्भीर मुखमुद्रा से कहने लगे—''गवर्नर जनरल हेस्टिंग्स ने नेपाली राज्य की छेड़खानी का पूरा वृत्तान्त आप लोगों के सम्मुख रखा है। स्पष्ट है युद्ध-प्रिय नेपाली सेना से शान्तिपूर्वक समझौता नहीं हो सकता। यदि इसे छोटा पहाड़ी राज्य समझ ध्यान न दिया जाय तो यह हमारे लिये घातक सिद्ध हो सकता है। ध्यान रहे नेपाली सेना कुमाऊं, गढ़वाल आदि को जीतता हुआ सतलज के पास

तक पहुँच चुकी है। अभी केवल पहाड़ी प्रान्तों तक ही वे सीमित हैं। यदि हमारे दो-आब की ओर उनका रुख हो जाय तब क्या बिना ध्यान दिये हम रह सकते हैं ? और फिर अभी युद्ध न करना, भारत में हमारी जमती धाक के लिये घातक हो सकता है। अतः मेरी राय में युद्ध होना ही चाहिए।''

वह बैठ गये। पुनः सभा में खुसफुसाहट फैल गयी। अन्त में सर्व-सम्मति से तय हुआ—युद्ध हो। परन्तु सेना, युद्ध की योजना आदि की पूरी तैयारी होने तक इसे गोपनीय रखा जाय। तैयारी-सेना-अस्त्र-शस्त्र योजना आदि आवश्यक बातों के लिये गवर्नर जनरल हेस्टिंग्स के नेतृत्व में सेना के उच्च अफसरों की कमेटी बनी। यह भी तय हुआ कि जितनी जल्दी हो सके यह कमेटी अपनी योजना सभा के सम्मुख रखे।

× × ×

सात दिन बाद—

हेस्टिंग्स की सैनिक कमेटी ने कम्पनी के सदस्यों के सम्मुख युद्ध की यह योजना रखी।

बनारस, मेरठ, दीनापुर और लुधियाना में सेना के चार प्रमुख विभाग (डिविजन्स) बने।

दीनापुर में सेना का पहला (डिविजन) दल, सबसे बड़ा और शक्तिशाली बने। इस दल में कम से कम छः हजार सैनिक हों। इस दल का कार्य होगा, मकवानपुर के दर्रे को कब्जे में कर, नेपाल राज्य की राजधानी काठमाँडू की ओर बढ़ना और इस तरह युद्ध को शत्रु देश के हृदय प्रदेश तक पहुँचाना। इसका नेतृत्व मेजर जनरल मार्ले करें।

दूसरा दल बनारस में बने। इस दल की शक्ति दो से तीन हजार सैनिक तक हों। गोरखपुर पहुँच इस दल का कार्य होगा, पूर्व की ओर बुरतुइल दर्रे से होकर पहाड़ी प्रान्तों से होता हुआ काठमांडू की ओर चले, तथा दीनापुर के पहले दल को सहायता प्रदान करे। इस दल

के द्वारा नेपाल की सेना के दो विभाग कर दिये जायें, जो अलग-अलग पहले और दूसरे दल से लड़ेंगी। कुमाऊं तथा गढ़देश की उनकी सेना का, राजधानी की सेना से सम्बन्ध तोड़ दिया जाय जिससे वे कुछ सहायता न कर सकें। इस दल का नेतृत्व मेजर जनरल उड करें।

तीसरा दल मेरठ में बने। इसकी शक्ति तीन से चार हजार सैनिक हो। यह दल सीधा देहरादून की ओर बढ़े और वहाँ दून घाटी पर अधिकार कर या तो पूर्व की ओर श्रीनगर को अधिकार में करें अथवा पश्चिम की ओर सिरमूर प्रान्त के नाहन, मुख्य शहर को अधिकार में कर सतलज की ओर बढ़े और इस तरह सतलज की ओर की नेपाली सेना का कुमाऊं और गढ़वाल की नेपाली सेना से सम्बन्ध विच्छेद कर दें। इसका नेतृत्व मेजर जनरल गिलेस्पी करें।

चौथा दल लुधियाने में बने। इसकी शक्ति लगभग तीन हजार सैनिक हो। यह दल पहाड़ियों पर नेपाली सेना की चौकियों से भिड़ता हुआ, उत्तरोत्तर बढ़े और नालागढ़, रामगढ़ आदि किलों को अधिकार में कर तथा नेपाली सेना को पहाड़ों से नीचे तराई की ओर भगाते हुये तीसरे दल से मिले। इसका नेतृत्व ब्रिगेडियर जनरल ओक्टरलोनी करें।

ईस्ट ईण्डिया कम्पनी के सदस्यों की सभा ने सैनिक कमेटी की योजना को सर्व-सम्मति से स्वीकार किया।

सात

मेरठ छावनी वाली सड़क पर दो सन्यासी गाते जा रहे थे। एक बूढ़ा था और दूसरा तरुण। दोनों भगवे रंग के कुछ फटे चोगे पहने हुए थे, जो घुटनों से कुछ नीचे तक जाते थे। चोगे के नीचे भगवे रंग ही की धोतियाँ थीं। तरुण की कमर में भगवे रंग का एक कपड़ा लिपटा हुआ था। दायें कंधे से एक पुराना झोला लटक रहा था, जिसका लाल रंग प्रायः उड़ चुका था और जिसमें अन्य रंग के कपड़ों की पैबंदियाँ लगीं थीं। बूढ़े की छोटी-छोटी सफेद दाढ़ी थी और सिर पर मैले भगवे रंग का कनटोप। गले में कुछ रुद्राक्ष की मालाएं थीं जिनमें रुद्राक्षों की संख्या बहुत कम थी। तरुण की मसें भी नहीं भीगीं थीं, परन्तु उसके सिर पर लम्बे-लम्बे रूखे बाल थे, जिन्हें लपेट कर जटा बनाई गई थी। छोटी सी रुद्राक्ष की एक माला जटा को लपेटे हुए थी। कानों में कुंडल थे और माथे पर त्रिपुंड। तरुण के सलोने मुख पर ऐसी लुनाई थी कि लोग

देखते और सोचते- यह तरुणाई और यह सन्यास ! यह विरोधाभास ! और अनायास ही उन्हें सहानुभूति हो जाती थी उससे ! प्रायः लोग पूछ ही बैठते—"बाबा, कहाँ से मूँड लाये हो चेला ? यह किशोरावस्था और सन्यास की इस कठिन साधना में ?"

बूढ़ा सदा उत्तर देता—"क्या करें बाबा ! नीली छतरी वाले की यही इच्छा है" फिर पेट की ओर संकेत कर कहता—"उसने यह बनाया है तो इसे भरने के लिये कुछ तो चाहिए ही। सूरदास बाबा तो कह ही गये हैं—"यह लो अपनी कंठीमाला, भूखे भजन न होई गोपाला।"

बूढ़ा अंधा था। बाएं हाथ में लाठी पकड़े, दाएँ से तरुण का कंधा थामे, बूढ़ा—सूरदास, कबीर आदि के पद गाते चलता और तरुण खंजड़ी से ताल देता हुआ, कभी-कभी बूढ़े के स्वर से स्वर मिला गा उठता।

पिछले दो महीने से ये दोनों नित्य सवेरे इस सड़क पर गाते फिरते थे। दुपहरी होती तो सड़क के किनारे ही किसी वृक्ष की छाँह में बैठ जाते। संध्या तक बैठे-बैठे गाते रहते। राह चलते लोग कभी कुछ दे देते, कभी छावनी के सिपाही अवकाश के समय उन्हें बुला गाना सुनते। सूर, मीरा, तुलसी, कबीर आदि भारतीय संत कवियों के पद, बूढ़ा मीठे और मधुर स्वर में गाता। धर्मभीरू भारतीय सिपाहियों को यह अच्छा लगता। छावनी के समस्त सिपाही उसे जान चुके थे और अत्यधिक, सूरदास के पद गाने एवं नेत्र विहीन होंने के कारण उसे 'सूर बाबा' नाम से ही संम्बोधित करते।

रविवार के दिन छावनी में अवकाश रहता। इस दिन सिपाही, छावनी के घेरे से बाहर, शहर के रंगीन वातावरण में कुछ क्षण आनन्द मनाते। बाजारों में घूमते। सामान आदि खरीदते, नटों का तमाशा देखते। माँगने वालों के नाच गाने से दिल बहलाते। सैनिकों के कठोर नियंत्रित जीवन में रविवार का अपना महत्व है। बूढ़े

सूर और उनके तरुण चेले के लिये भी यह दिन कम महत्व का नहीं था। इस दिन छावनी से बाहर जाने वाले सैनिक, बाजार जाते या लौटते हुये कुछ क्षण उसके पास ठहर, कुछ बातें करते, गाना सुनते और कुछ देकर चले जाते थे। बाजार से लौटने वाले कई तो कुछ क्षण उसके पास बैठ, सूर और मीरा के एक-आध पद अवश्य सुनते। अन्य दिनों की अपेक्षा रविवार के दिन अंधे सूर और उसके चेले को अधिक भिक्षा मिलती थी।

ऐसे ही रविवार की एक संध्या थी। सड़क के किनारे एक विशाल वृक्ष के नीचे बैठा हुआ बूढ़ा सदा की तरह सूरदास का पद गा रहा था। बाजार से लौटते हुए दो सिपाही उसके पास आकर बैठ गये। बूढ़े ने गाना बन्द कर दिया, बोला—"आओ दाता।"

एक ने कहा—"सूर बाबा, आज क्या सुनाओगे?"

"जो सुनोगे दाता।"—बूढ़े ने कहा।

"झूठा लोग कहैं घर मेरा"...... दूसरे ने कहा।

बूढ़े ने सस्मित कहा—"दाता, और दिन तो राधा के आँसुओं के गीले गीतों में रस लेते थे, प्रेम दिवानी मीरा के दर्दीले गीतों में डूबते थे, संसार की निस्सार्थकता वाले गीतों में रस मिलेगा क्या?"

"आज तो यही सुनने को जी चाहता है बाबा!" पहले ने कहा।

"वही सुनाऊँगा दाता, जो चाहोगे, जो कहोगे।" बूढ़े ने उत्तर दिया।

तरुण ने खँजड़ी संभाली, बूढ़े ने गाना शुरू किया—

"झूठा लोग कहैं घर मेरा।
जा घर माँहैं बोलै डोलैं, सोई नहीं तन तेरा॥
बहुत बंध्या परिवार कुटुंव मैं, कोई नहीं किस केरा।
जीवत आँषि मूंदि किन देखौ, संसार अंध अँधेरा॥
बस्ती मैं थै मारि चलाया, जंगलि किया बसेरा।
घर कौं खरच खबरि नहीं भेजी, आप न किया फेरा॥

नौ मन सूत उरझि नहीं सुरझै, जनमि-जनमि उर झेरा ।
कहै कबीर एक राम भजहु रे, बहुरि न ह्वैगा फेरा ॥

बूढ़े सूर बाबा के स्वर में आज दोनों सिपाहियों ने अधिक लोच पाया, विशेष रस पाया । तन्मय हो गये ।

बूढ़ा गाना गा चुका था । पहले ने पूछा—'क्यों सूर बाबा, क्या सचमुच यह घर, यह संसार, इतना निस्सार है कि जिसे हम अपना कहते हैं —न मेरा है न तेरा ?''

"हम वीतराग सन्यासियों से पूछते हो दाता ! सांसारिक माया मोह को छोड़ चुके हम ! ऊँचे ऊँचे महल, यह मेरा यह तेरा, कोई महत्व नहीं रखता है हमारे लिए ! संसार को हमने तो सदा निस्सार ही समझा है, तभी तो उससे उदासीन होने के लिये सन्यास का व्रत ले रखा है, पर बाबा, आज यह विचार कैसे उठा तुम्हारे मस्तिष्क में ?''

"ऐसे ही बाबा, ऐसे ही पूछ लिया था ।'' पहले ने कुछ अनमने से हो उत्तर दिया ।

"नहीं बाबा, बात तो कुछ अवश्य है । घर से बुरी खबर आई है क्या ?''

"नहीं—ऐसी तो कोई बात नहीं ।''

"दाता, बात तो कुछ है । कुछ दिनों से भिक्षा भी कम मिल रही है, और आज रविवार के दिन, सदा की तरह छावनी से अधिक सैनिक भी दिन को शहर की तरफ नहीं गये ।''

"बात विशेष तो नहीं बाबा ! इतना ही है कि यह किशन है न ! ''—दूसरे ने पहले वाले सैनिक की ओर संकेत करते हुए कहा—"इसके माँ-बाप ने इसी महीने गाँव में इसकी शादी तय कर दी थी । पन्द्रह दिन की छुट्टी भी मिल चुकी थी परसों से, पर कल ही कमाँडिंग साहब ने इसकी छुट्टी रद्द कर दी ।''—कहते-कहते वह मुस्करा उठा ।

किशन को अच्छा न लगा, बोला—"छोड़ो भी यार—" फिर बूढ़े की ओर मुड़ कर कहा—"कुछ और सुनाओ बाबा । वह कबीर

का—'कौनो ठगवा नगरिया लूटल हो।''

बूढ़े ने कुछ न कहा--गाने लगा। गाना समाप्त होने पर किशन और उसके साथी ने कुछ पैसे दिए और कहा—"अच्छा बाबा, चलें अंधेरा हो रहा है।''

''जय हो दाता!" बूढ़ा बोला, "अब हम भी चलेंगे, चलो भगत।" तरुण ने झोली संभाली, बूढ़े ने लाठी। छावनी की ओर दोनों सैनिक चले और उनके विमुख बूढ़ा और उसका तरुण चेला।

झुटपुट का अंधकार सघन हो चला था, जब बूढ़ा सूर और उसका तरुण चेला शहर के बाहर, गरीबों की गंदी बस्ती के बीच अपनी झोंपड़ी में पहुँचे।

रूखी-सूखी खा लेने के पश्चात् दोनों जमीन पर पड़े रहे। थोड़ी देर तक दोनों चुपचाप रहे, फिर तरुण ने धीमे स्वर में पूछा—"बाबा सो गये क्या?"

''नहीं बेटा, सोच रहा हूँ।'' बूढ़े ने कहा।

"क्या सोच रहे हो बाबा?''

''यही, कि लगता है हमारी तपस्या का फल शीघ्र ही मिलने वाला है। आज उन दो सैनिकों—किशन और उसके साथी की बात सुनी तूने?"

"हाँ बाबा, और कुछ समझा भी।"

"तो कल से आँख कान अधिक चौकन्ना रखना बेटा।''

''अच्छा बाबा।"

"अब सो जा, बेटा।''—बूढ़े ने दुलार के साथ कहा।

''अच्छा बाबा।''—तरुण करवट बदलते हुए बोला।

× × ×

चार दिन बीत गये।

रात्रि के द्वितीय प्रहर में, अपनी झोंपड़ी में लेटे हुए बूढ़ा सूर धीमे स्वर में अपने चेले से बातें कर रहा था।

"तो अब छावनी में चहल-पहल होने लगी है बेटा !"

"हाँ बाबा, कल हिन्दुस्तानी फौज की एक टुकड़ी आई थी, आज गोरा पल्टन भी आ पहुँची है। छावनी के फाटकों पर संतरियों की संख्या भी बढ़ गई है।"

"तैयारी कर रहे हैं शायद ! हाँ—कोई तोपखाना तो नहीं आया अभी तक ?"

"अभी तक तो शायद आया नहीं बाबा ! देखा नहीं।"

बूढ़ा कुछ देर तक चुप रहा, मानो सोच रहा हो, फिर बोला—"बेटा, अब हमें यहाँ अधिक दिन नहीं रहना है।"

तरुण ने कुछ न कहा, चुप रहा।

बूढ़े ने कुछ सोचते हुये कहा—"लगता है शनि दृष्टि दून की ओर है, पर युद्ध की कोई घोषणा तो नहीं हुई अभी तक न ?"

"नहीं बाबा, घोषणा तो नहीं हुई है। छावनी में सुनाई नहीं दी अभी तक ! पर बाबा इस छावनी में जो इतनी तैयारियां हो रही हैं, वह क्या बिना घोषणा के युद्ध के लिए है ? यह तो अधर्म युद्ध होगा।"

"युद्ध में धर्म अधर्म का विचार केवल आत्मिक शक्ति वाले वीर ही रखते हैं, छल-कपट वाले कायर नहीं। इन फिरंगियों का चरित्र तो जानता ही है ! इससे उसको लड़ाया। इसके साथ हो उसको मारा, फिर इसको धीरे-धीरे हजम कर गये। धर्म-अधर्म का विचार फिरंगी नहीं, हिन्दू धर्म के अनुयायी करते हैं।"

तरुण चुप रहा। बूढ़ा भी चुप हो गया मानो कुछ सोच रहा हो। कुछ क्षण तक दोनों चुप रहे, फिर बूढ़े ने कहा—"अब निश्चय हो जाना चाहिये, कब, किस ओर सेना चलती है। इनकी कुल शक्ति कितनी है। कल से इसी बात का विशेष ध्यान रखना बेटा।"

अच्छा बाबा।" तरुण ने कहा।

"अब सो जा, रात अधिक बीत चुकी है।"—बूढ़े ने कहा और गले

तक चादर खींच ली।

× × ×

पिछले कुछ दिनों से, नित्य की तरह बूढ़ा सूर और उसका तरुण चेला छावनी वाली सड़क पर गाते फिर रहे थे। इन दिनों उन्हें बहुत कम भिक्षा मिली, पर छावनी की हलचल का बहुत कुछ अंदाज मिला। लड़ाई की पूरी तैयारी हो चुकी थी। दिल्ली से तोपखाना भी आ चुका था। यह भी पता चला कि कुल मिलाकर इस समय छावनी में फिरंगी तथा देशी सैनिकों की शक्ति लगभग ४५०० जवान हैं। शीघ्र ही पल्टन कहीं जाने वाली है, इस बात का पता लग चुका था। आक्रमण दून घाटी की ओर होगा, इसका भी आभास मिला, पर निश्चय न हो सका था। निश्चय की आशा में ही आज अन्य दिनों की अपेक्षा, वे अधिक देर तक छावनी के निकट बैठे थे।

संध्या गहरी हो चली थी। छावनी वाली सड़क के पास ही पीपल के एक विशाल वृक्ष के नीचे बैठा हुआ बूढ़ा मधुर स्वर में मीरा का पद गा रहा था। तरुण खँजड़ी से ताल देता हुआ साथ-साथ गा रहा था। इसी समय दो सैनिक सड़क पर चलते हुए उसके निकट आकर रुक गये। एक किशन था और दूसरा उसका वही साथी। किशन ने सड़क के जरा किनारे आकर कहा "सूर बाबा, अँधेरा काफी हो चला है। आज अभी तक गये नहीं ?"

"जाने ही वाला था मालिक।" बूढ़े ने उत्तर दिया।

किशन ने जेब से कुछ पैसे निकाले और देते हुए कहा—"लो बाबा।"

दोनों हाथ फैलाते हुए बूढ़े ने कहा—"जीते रहो मालिक।"

"अच्छा चलें बाबा।" किशन बोला और मुड़कर जाने लगा।

"आज कोई पद नहीं सुनोगे क्या ?"—बूढ़े ने पूछा।

"नहीं, अब क्या सुनेंगे बाबा।" किशन ने रुक उत्तर दिया।

"क्यों दाता ? कुछ अपराध बन पड़ा है मुझसे ?"

"नहीं बाबा, यह बात नहीं है।"—फिरकुछ रुक कर बोला—"अब शीघ्र ही हम लोग जाने वाले हैं यहाँ से। शायद आज से तीसरेदिन !"

"कहाँ दाता, घर ? छुट्टी मिल गई है क्या ?"

"छुट्टी ?"—किशन हंस पड़ा—"अरे छुट्टी नहीं बाबा, लाम पर जा रहे हैं। सैनिक हैं न हम ? लाम पर ही छुट्टी करेंगे।"—वह फिर हँस पड़ा।

"लाम पर ?" बूढ़े ने आश्चर्य के साथ कहा—"लड़ाई छिड़ी है क्या ? कहाँ—किससे दाता ?"

चलते-चलते किशन ने उत्तर दिया—"पूरा पता ती नहीं, बस इतना जानते हैं कि लाम पर जा रहे हैं—सहारनपुर की तरफ।"

"भगवान भला करें, लाम में तुम्हारी रक्षा करें।"—बूढ़े ने आशीर्वाद दिया और जमीन पर हाथों से अपनी लाठी टटोलने लगा।

तरुण चेले ने लाठी उसके हाथों में थमा दी। झोली उठा कंधे पर लटका लिया और हाथों का सहारा दे बूढ़े सूर को उठाया। उठाते हुए बूढ़े सूर के चेहरे पर दृष्टि डाली। देखा झुर्रियों से भरे बाबा के चेहरे पर गम्भीरता का साम्राज्य छा गया है। माथे की स्थायी शिकनों में वृद्धि हो गई है। सफेद छोटी दाढ़ी के बीच खुले होंठ सिकुड़-सिकुड़ से गये हैं। ज्योतिहीन आँखों की पलकें अधमुंदी सी हैं। तूफान आने से पहले प्रकृति का वातावरण ऐसा ही शान्त और गम्भीर होता है—सोचा और सहम गया। खँजड़ी उठाई और धीमे स्वर में बोला—"चलें बाबा ?"

उत्तर की आशा उसे नहीं थी, शायद इसीलिए बिना उत्तर की प्रतीक्षा किये ही उसने बूढ़े सूर के दायें हाथ को अपने कंधे पर रख दिया और धीरे-धीरे चलने लगा।

रास्ते भर दोनों चुपचाप चलते रहे। झोंपड़ी में पहुँच बूढ़े ने कहा—"सवेरे की दो रोटियां रखी होंगी, खा ले।"

"और आप बाबा ?" तरुण ने पूछा।

"तू खा ले, मेरी इच्छा नहीं है आज !"

"एक आप खा लें बाबा—एक मैं, बस !"

"कह तो दिया इच्छा नहीं है, तू खा ले।"

"तो मैं भी नहीं खाऊँगा आज !" रूठते हुए सा तरुण ने कहा। तरुण के इस कथन में भरे आत्मीयता को बूढ़ा सूर टाल न सका, हँसता हुआ बोला—"तू जिद्द बहुत करता है रे ! अच्छा ला आधी रोटी दे दे।"

"आधी नहीं, पूरी एक बाबा" कहते-कहते तरुण ने एक रोटी, एक प्याज का टुकड़ा और कुछ नमक, रोटी पर ही रख कर थमा दी। फिर एक रोटी स्वयं ले कर पास ही बैठ कर खाने लगा।

रोटी खा लेने के पश्चात् तरुण ने चिलम भरी और बूढ़े सूर को दे दिया। चिलम पर कश खींचता हुआ सूर नेत्र बंद किये कुछ देर सोचता रहा। इसी बीच तरुण ने फटी गुदड़ी जमींन पर बिछा दी और ओढ़नी की फटी चादर को गुदड़ी के एक किनारे रखते हुए कहा—"बाबा बिस्तर लगा दिया है—लेटोगे ?"

सूर ने कोई उत्तर न दिया, मानों कुछ सुना ही नहीं। उत्तर की आशा में तरुण ने सूर की ओर देखा। देखा वह आँखें बंद किये ध्यान मग्न है। धीरे से बोला—"बाबा !"

बूढ़े ने फिर कोई उत्तर नहीं दिया, वह आँखें मूँदे रहा। तरुण ने धीरे से अपना हाथ उसकी बांह पर रखते हुए कहा—"बाबा !"

हाथ के स्पर्श से जैसे सचेत हो बूढ़े ने उत्तर दिया—"हाँ—क्या है रे ?"

"क्या सोच रहे हो बाबा !"

"यही, किशन की बातों के बारे में ! उसकी बातें सुनी न तूने ?"

"हाँ बाबा, पर—"

"पर वर कुछ नहीं। सुन किशन की बातों ने आज संदेह को निश्चय का रूप दे दिया है। सहारनपुर की तरफ सेना का चलना

स्पष्ट इंगित करता है कि उनका लक्ष्य दून है। अब हमें यहाँ अधिक ठहरना नहीं चाहिए कान्त! कुँवर हजूर को यहाँ की सारी खबरें शीघ्रातिशीघ्र देनी होंगी।"

"पर बाबा, आज से तीसरे दिन सेना चलेगी। चार दिन से पहले सहारनपुर क्या पहुँचेंगे। फिर शिवालिक पार करने में भी पाँच दस दिन लगेंगे ही। काफी समय है, तेज चलें तो दून तक तीन ही दिन का रास्ता है। ऐसा करें बाबा, हम कल सबेरे ही चलें। मेरठ के आगे जो गाँव है, वहाँ से हो सका तो एक घोड़ा लेकर हम और तेज जा सकते हैं। तो कल चलें बाबा हम?"—तरुण ने उत्साहपूर्वक पूछा।

"हम नहीं, केवल तू!"

"केवल मैं—मैं बाबा?"

"हां, यही तो मैं इतनी देर से सोच रहा था। दो से एक तेज जा सकता है। मैं ठहरा अंधा, फिर बूढ़ा भी। साथ रहने से तेरी गति में बाधा पड़ेगी।"

"पर बाबा तुम—तुम अकेले—" तरुण काँपते स्वर में बोला।

"अकेला? मैं अकेले थोड़े ही हूँ पगले! मेरा देश मेरे साथ है—देशवासी साथ हैं। नालागढ़ राजगढ़, राइनगढ़, सूर्यगढ़, तारागढ़, जौतगढ़, मस्तगढ़, यह सब नेपाली गढ़ जो उत्तराखंड में फैले हैं, सब मेरे—मेरे देश के ही तो हैं। गढ़देश में बख्तावर सिंह वरन्यात, श्रीनगर में अमरसिंह थापा, कुमाऊँ में बमशाह, जैथक में रणजोर सिंह, सुगा में भक्तिथापा, दून में भलभद्र कुँवर आदि सब मेरे ही तो साथ हैं बेटा, फिर मैं अकेला कैसा?"

तरुण चुप रहा, बोला नहीं। बूढ़े ने फिर कहना शुरु किया—"फिर तुझे यह तो मालूम ही है कि अभी पूर्ण रूप से हम नेपाली, उत्तराखंड में गढ़ों को सुदृढ़ नहीं कर पाये हैं। और दून में नालापानी के ऊपर की ओर, चार पाँच सौ हाथ ऊँची, आधे कोस लम्बी पहाड़ी पर खलंगा (छावनी) ही डाले बैठे हैं बलभद्र कुँवर—दून की रक्षा

के लिए। चार पांच हजार, अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित आंग्ल सेना के मुकाबले में, छावनी के चार पांच सौ, मुट्ठी भर नेपाली क्या कर पायेंगे ? विशेष कर जब खलंगा की दीवार तक पूर्ण नहीं हो पाई है। माना पहाड़ी की भयंकरता, सघन विशाल शाल वृक्ष, दुर्गम चढ़ाई, कटीली झाड़ियां और यत्र-तत्र बिखरे शिला-खंडों के रूप में हमें प्रकृति का सहयोग प्राप्त है, पर उत्तम युद्ध-सामग्री से भली-भांति लैस, टिड्डी दल के समान विशाल इस शत्रु सेना के समक्ष वह नगण्य है।"

रुक कर उसने फिर कहा—"विपत्ति के काले बादल, बादल ही हैं। बरसेंगे तो धरती को तर कर देंगे। ऊपर बादलों को देखते रहने से ही काम न चलेगा। सिर को वर्षा से बचाना चाहो तो सिर के ऊपर कुछ रखना आवश्यक है। जानता हूँ कुँवर हजूर खलंगा को सुदृढ़ कर रहे होंगे, पर क्षितिज रेखा पर उठे यह बादल एकाएक सिर पर छा बरसना चाहते हैं, जाने इसका आभास उन्हें है या नहीं। यह काम तुझे करना है कान्त! देश के लिये, जाति के लिये, मेरे लिये और अपने लिये भी कान्त!"

तरुण चुप रहा, बोला कुछ नहीं। केवल बूढ़े के हाथों को अपने हाथ में ले स्नेह से सहलाने लगा।

'समय कम है। कल सवेरे ही चला जा बेटा। सारी बातों को कुँवर हजूर को बता देना और तैयारी में भरसक सहयोग देना। मुझे तुझ पर उतना ही विश्वास है, जितना अपने पर बेटा!"

"और बाबा आप?"—तरुण ने रुँधे कंठ से पूछा।

"मेरी चिन्ता न कर कान्त! ऋषिकेश से भटकते यहाँ आया, यहाँ से भटकते दून पहुँच ही जाऊँगा। पहुँचते ही तुझसे मिलने की चेष्टा करूंगा। चिंता न कर!"

"बाबा, आपकी अवस्था —"

"मेरी अवस्था—"बीच में ही बात काट बूढ़े ने उत्तेजित होकर कहा—"मेरी अवस्था की अधिक चिंता है तुझे? देश और जाति की

अवस्था की नहीं ? क्या इसी लिये प्राणों को संकट में डाल अमर से कनक को पत्र दिलवाया था तूने ? क्या इसीलिये रातों रात ऋषिकेश छोड़ा था ? क्या इसीलिये यह साधुओं का स्वांग रचाया है ?"

तरुण चुप हो गया। बहुत कुछ कहना चाहते हुये भी वह कुछ न कह सका। कनक का नाम सुन उसके आनन पर क्षण भर हल्की अरुणिम आभा फैल गयी। आंखें आर्द्र हो उठीं, पर बूढ़े बाबा की ज्योतिहीन आँखों ने न देखना था, न देखा।

"अच्छा बाबा जो कहोगे वही करूँगी। कभी मना किया है मैंने?" कहते-कहते उसने अपना सिर बाबा की गोद में रख दिया।

"ठीक है बेटा, कल तड़के, अंधेरे ही चले जाना। कपड़े बदल लेना। यह साधुओं का भेष छोड़ दूसरा धारण कर लेना। चाहे तो चूड़ीदार पैजामा और पगड़ी बाँध लेना। शेष कहने को कुछ विशेष नहीं— तू सब समझता ही है। जल्दी से जल्दी दून पहुँचने का प्रयत्न करना। पशुपतिनाथ तेरी सहायता एवं रक्षा करें—।" कहते कहते बूढ़े शंकर ने स्नेह से कान्ता के सिर पर हाथ फेरा। ज्योतिहीन आंखों से दो अश्रु-मुक्ता ढुलक पड़े।

आठ

कान्ता से सारी बातें जानकर बलभद्र गम्भीर हो उठे। क्षण भर सोच कर उन्होंने पूछा—"और शंकर बाज्या?"

"उनकी चिन्ता इस समय व्यर्थ है सरकार। वे यहाँ पहुँचने का प्रयत्न तो करेंगे ही।"—कान्ता ने उत्तर दिया।

"आक्रमण की सम्भावना तो मुझे पहले से ही थी, पर इतने शीघ्र हो सकती है इसकी कम ही आशा थी। काफी कुछ तैयारियाँ तो हो चुकी हैं, पर उतनी नहीं जितनी होनी चाहिए। सैनिक केवल ५०० के लगभग हैं। इनकी ही सबसे अधिक कमी है। रसद मैंने काफी जमा कर लिया है। फलाम (लोहा) भी काफी है। एक जिजंल तोप व पाँच छोटे तोप तैयार हैं और २० बन्दूकें भी। पर्खाल (दीवार) का काम आरम्भ तो कर दिया था, पर अभी कुछ दिन पहले 'दसाईं चाड़' (दशहरा त्योहार) के कारण कार्य कुछ शिथिल पड़ गया। अभी सरदार को बुलाकर सब प्रबन्ध करता हूँ। तुम ···।"

चुप होकर कान्ता की ओर देखते हुए वह कुछ सोचने से लगे। कान्ता चुपचाप उनकी ओर देखती बैठी रही।

"तुम-तुम, आज ही यहाँ से लौट कर शंकर बाज्या से जा मिलो।"

"सरकार छोटी सी बिनती है मेरी! मुझे यहीं रहने दिया जाय। बाबा की भी यही इच्छा थी कि देश की सेवा में पीछे न हटूँ। इस सेवा से मुझे वंचित न कीजिये प्रभु! बाबा ने मुझे बचपन से ही जैसा पाला पोसा, जैसा बनाया है उससे आप अनभिज्ञ नहीं।"

"यह तो मैं जानता हूँ, पर शंकर बाज्या को तुम्हारी विशेष आवश्यकता है।"

"सरकार का कथन उचित ही है। छोटी मुँह बड़ी बात कैसे कहूँ—क्षमा चाहती हूँ उससे भी अधिक आवश्यकता है देश को, जननी जन्मभूमि नेपाल को। मुझे यहीं रहने दिया जाय सरकार।"

कान्ता ने हाथ जोड़ दिये—"मैं कोई काम ऐसा नहीं करूंगी कि नेपाल, नेपाली और श्री हजूर को कुछ कहने का अवसर मिले। मैं आपकी छाया में रह देश की स्वाधीनता के लिये प्राणों की बाजी लगा दूँगी—और भी बहुत कुछ करूँगी···"

बात काटते हुए बलभद्र ने सस्मित कहा—"अच्छा! मैं सुनूँ तो और क्या करेंगी?"

"सैनिकों के साथ कन्धे से कन्धा भिड़ा मैं लड़ूँगी।" उत्साह से भर कान्ता बोली—"और देश के लिये जो भी करना पड़ेगा, करूंगी। जो आप कहेंगे वही करूंगी सरकार! शत्रु सेना का भेद लेना, आहतों की सेवा करना आदि।"

बलभद्र बोले नहीं, चुप हो कान्ता को एकटक देखने लगे। उनके मौन में स्वीकृति का आभास सा पाते हुये कान्ता बोली—"सरकार मुझे आइमाई (औरत) समझ रहे होंगे! पर प्रभु मुझे अवसर दीजि,ए मैं प्रमाणित करूँगी कि नेपाल की बाला अबला ही नहीं सबला भी है।"

बलभद्र फिर भी कुछ न बोले, उसी प्रकार कान्ता को देखते रहे।

कान्ता ने फिर कहा—"सरकार की सदा जय मनाऊँगी, मुझे स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने के यश से वंचित न किया जाय प्रभु !"

बलभद्र ने धीरे-धीरे पर गम्भीरतापूर्वक कहा—"तेरे विचारों को जान मैं प्रसन्न हुआ कान्ता पर ·····।"

'पर, पर विचार न कीजिए प्रभु—मेरा विश्वास कीजिए। मुझे यहीं रहकर सबके सुख-दुख में भागी होने का सौभाग्य दीजिए स्वामी !"

"तेरी यही इच्छा है तो देश-सेवा के तेरे मार्ग में मैं बाधक न बनूँगा। कुछ ठहर कर फिर बोले—"अच्छा रह सकती हो। छोरी (पुत्री) माया से मिल लो, उसी के साथ रहना। तुम्हारे उचित वस्त्रादि का प्रबन्ध वह स्वयं कर देगी।"

"पर प्रभु ! मैं वहाँ नहीं रहना चाहती। मै स्त्री-वेष धारण नहीं करूँगी।"—दृढ़ता भरे स्वर में कान्ता ने कहा।

"के के भनिस ! (क्या-क्या कहा ?) बलभद्र ने चौंकते हुए पूछा।

"स्त्री वेष धारण नहीं करूँगी प्रभु !" कान्ता ने फिर दुहराया—"मैं पुरुष वेष में ही रह आपकी व इस खलंगा की सेवा करूँगी।"

"पर इससे लाभ ?"

"लाभ बहुत है प्रभु ! पुरुष वेष धारण कर मैं पुरूषों के साथ मिल कठोर से कठोर काम कर सकती हूँ। प्रभु यदि मुझ पर कृपा कर इस भेद को अपने तक ही रखें तो अन्य सैनिकों की तरह मैं भी सब काम कर सकती हूँ। अन्य सरदार निस्संकोच मुझे कठिन से कठिन काम दे सकते हैं। मेरा पालन पोषण ही ऐसा हुआ है कि नारी होते हुए भी मुझमें नारी की कोमलता नहीं है पुरूषों की कठोरता है। कोमलता में मेरा पतन है, कठोरता में उत्थान प्रभु ! आज्ञा दीजिये कि जिस वातावरण में मेरा लालन-पालन हुआ, उसी वातावरण में रह कर मुझे वीरगति प्राप्त हो।"

बलभद्र ने विस्मय से कान्ता की ओर देखा और सोचा, जिस देश में

ऐसी ललनायें हैं वह महान है, जीवित है। वह देश पराजित नहीं हो सकता। सूर्य, चन्द्र से सुशोभित हमारे देश का झंडा सूर्य और चन्द्र के समान ही स्वतंत्रता के आकाश में सदा ऊँचा उठा रहेगा। कुछ सम्मान और कुछ विश्वास सा हो चला उन्हें कान्ता पर। बोले—"ठीक है, पर मेरी दृष्टि में तो तुम सदा स्त्री ही रहोगी, फिर मैं तुम्हें युद्ध की भयंकरता और पुरुष की कठोरता कैसे दूँगा ?"

"आप वीर पुत्र हैं प्रभु ! मेरा विश्वास है कि आपकी दृष्टि वीरता पर रहेगी, स्त्री-पुरुष के सामान्य भेद पर नहीं। पुरुष को ही देश पर, जाति पर, अपनी स्वाधीनता पर मर मिटने का अधिकार है, स्त्री को नहीं ? फिर यह सामान्य भेद क्योंकर आपकी दृष्टि में प्रमुख रूप धारण कर सकेगा ! अपनी कठोरता के अनुरूप ही मैंने पुरुष रूप का वरण किया है, मुझे सफलता का आशीर्वाद दीजिए ! मेरा विश्वास कीजिए प्रभु, मेरे इस कारण आपको कभी लेशमात्र भी चिन्ता न होगी।"

बलभद्र अभी कुछ कहने जा ही जा रहे थे कि चाकर को कमरे में प्रवेश करते देख रुक गये। उन्होंने प्रश्नवाचक दृष्टि से चाकर की ओर देखा।

"प्रभु ! कनक शमशेर श्रीनगर से पधारे हैं। सेवा में विनती चढ़ाया है।"

"कनक ! अच्छा उन्हें आने दो।" चाकर के चले जाने के बाद उन्होंने कान्ता की ओर देखा। कान्ता बोल उठी —"प्रभु मेरा भेद अपने तक ही सीमित रखकर मुझे कृतार्थ करें। किसी से भी न कहें, कनक से भी नहीं।" कान्ता ने हाथ जोड़ लिये।

"अच्छा-अच्छा, पर कान्ता लगता है यह सब ठीक नहीं है। मैं चाहता था ......।"

इसी समय कनक ने नेपाली ढंग से अभिवादन करते हुए कमरे में प्रवेश किया और बोला—"दर्शन गरें सरकार!"

"आउ आउ बस ! (आओ आओ बैठो) और कनक के बैठने पर

कान्ता की ओर संकेत करते हुये कहा—"ये का······।"

"कमल कान्त पांडे"—शीघ्रता से हाथ जोड़ कान्ता ने उनकी बात पूरी की। कनक ने अभिवादन करते हुये उड़ती नजर कान्ता पर डाली, फिर बलभद्र की ओर देखा। लगा, उनके अधरों पर क्षणिक स्मित की रेखा चमकी।

"ये कमल कान्त पांडे सहारनपुर की तरफ से आये हैं, कुछ विशेष खबर ले कर"—फिर कान्ता की ओर मुड़ कर उन्होंने कहा—'ये कनक शमशेर हैं. मेरे मित्र के पुत्र और श्रीनगर की सेना में हैं। और हाँ कनक, कैसे आना हुआ? रुद्र शमशेर तो अच्छे हैं न?"

"जी हाँ, प्रभु की दया से वे स्वस्थ हैं।"

संक्षेप में उसने ऋषिकेश के निकट पत्र खोने और फिर कान्ता की सहायता से प्राप्त करने का उल्लेख किया। श्रीनगर में कमाण्डर साहब की आज्ञा से अमरसिंह को गिरफ्तार करने तथा शंकर बाज्या व कान्ता देवी को देखने वह ऋषिकेश आया था। न अमरसिंह मिला, न शंकर बाज्या। कई दिनों तक खोज खबर करते रहने पर सुराग मिला कि अमरसिंह दून की तरफ गया है, सो श्रीनगर से आज्ञा पा यहीं चला आया।

"अच्छा किया। कुछ दिन इधर ही ठहर कर खोज खबर करो अमरसिंह की।"

"हौस सरकार! (जो आज्ञा) शंकर बाज्या का कोई समाचार तो प्राप्त नहीं हुआ सरकार को?" कनक ने हाथ जोड़ते हुये पूछा।

क्षण भर सोच कर बलभद्र बोले—"नहीं, अच्छा अब तुम जाओ।"

कनक अभिवादन कर जब चला गया तो उन्होंने कान्ता की ओर देखा और मुस्कराते हुए धीरे-धीरे कहा—"पाँडे! हाँ, कमल कान्त पाँडे! अब तुम भी जाओ। थके होगे, हाथ पाँव धो कर विश्राम करो कनक से भी मिल लो, शंकर बाज्या और तुम्हारे लिये चिन्तित हैं।

खा पीकर बाद में आना।"

कान्ता के जाने के बाद बलभद्र कुछ देर विचार मग्न रहे, फिर उन्होंने सरदार रिपुमर्दन को बुलवा भेजा। आने पर उन्होंने अंग्रेजी सेना की हलचल एवं उसके सहारनपुर की ओर चलने का उल्लेख किया।

रिपुमर्दन ने कमल कान्त पाँडे द्वारा दिये समाचार की सत्यता पर संदेह प्रकट किया तो बलभद्र ने—'मैले बूझी सकें। पांडेलाई योहि काममा खटाए थियें" (मैंने सब जाँच लिया है। पाँडे को इसी काम में लगाया था), कह कर उनके संदेह का निराकरण किया और कहा—"जो भी हो सरदार, युद्ध के आसार तो हैं ही। तैयारी पूरी कर लेनी चाहिये। हानि कुछ नहीं, अपना ही लाभ है, सैनिकों का आत्म विश्वास बढ़ेगा। तुम तुरन्त चार छः गुप्तचर शिवालिक के पहाड़ी दर्रों पर भेज दो और जौंतगढ़, तारागढ़ व श्रीनगर भी खबर अवश्य भेज दो। कुछ और सेना के लिये मैंने खबर भेजी थी, पर कोई फल न हुआ। अपनी गोरख और बरक टुकड़ी के लगभग ५०० सैनिक हैं, इन्हीं को पाँच हजार के बराबर बनाना है।"

वह रुक गये। सरदार रिपुमर्दन भी चुप रहे। फिर बोले—"अभी जा कर सब सूबेदारों को स्थिति की गंभीरता बताते हुए विभिन्न कामों में लगा दो। तोप और बंदूक बनाने का काम तुम स्वयं देखना। धनुष बाणों की संख्या में भी वृद्धि करो। पर्खाल का काम मैं स्वयं देखूँगा। राज शंकरमान को और अधिक सुविधाएं दे दो। बरक टुकड़ी के सभी सिपाहियों को पर्खाल के लिये पत्थरों आदि के प्रबन्ध में लगा दो। गोरख टुकड़ी के सिपाहियों से अन्य कामों में सहायता लो। पर्खाल के काम में तीव्रता आनी चाहिए। काम करने वालों की संख्या बढ़ा दो—हर काम में शीघ्रता करो। यह महामंत्र सबके कानों में फूंक दो। चाड़ँ-चाड़ँ (जल्दी-जल्दी)। अभी तुम जाओ। मैं पूरी योजना बना कर बाद में मिलूँगा।"

"हौस प्रभु !" कहकर रिपुमर्दन विदा हुए ।

बलभद्र देर तक कागज पर लिख-लिख कर योजनायें बनाते रहे। लगभग दो घन्टे बाद उन्होंने फिर सरदार रिपुमर्दन को बुलवा भेजा। आने पर उन्हें अपनी योजनाएँ समझाने लगे। पर्खाल दस-पन्द्रह हाथ ऊंची और दृढ़ बने। एक ही मुख्य द्वार हो उसमें। जिजल तोप वहाँ पश्चिम की ओर मुँह करके लगे। पर्खाल पर अन्य तोपें कुछ-कुछ दूरी पर लगें। गढ़ी तक पहुँचने की एक ही मुख्य पगडंडी है। काफी दुर्गम है पर उसके हर सम्भावित निर्बल स्थानों पर मोर्चा लगे। उत्तर की ओर से जो घूम कर पगडंडी आती है, उस पर भी यही प्रबन्ध हो। भौगोलिक कारणों से आक्रमण पश्चिम की ओर से ही सम्भव है, क्योंकि उत्तर, पूर्व और दक्षिण की ओर पहाड़ियां हैं, इसलिये स्त्री-बच्चों के रहने का प्रबन्ध पूर्व की ओर हो। पत्थरों की संख्या खलंगा में पर्याप्त हो। पर्खाल के पास ही पत्थरों की चट्टानें एवं ढेर हों। रसद पानी और जमा कर लिया जाय। फलाम भी जितना मिले जमा कर लिया जाय। तोप के गोले, बन्दूक की गोलियां, खुकुरी भाले आदि अधिक से अधिक संख्या में तैयार किये जाएँ।"

रिपुमर्दन ने सब सुन कर कहा—"उचित है काजी।[1] गणेश सूबेदार को मैंने फलाम इकट्ठा करने के लिये भेज दिया है। सूबेदार भक्ति थापा को पत्थरों के संग्रह में खटा (लगा) दिया है। सूबेदार बीरू थापा को धनुष-बाण के काम में खटा दिया है। बंदूकों का काम मैं स्वयं देख रहा हूँ। लोहार को मैंने पच्चीस आदमी और दे दिये हैं। पर्खाल के लिए शंकरमान के साथ पचास आदमी और लगा दिये हैं।"

"बेस छ (अच्छा है)"—बलभद्र ने योजना वाले कुछ कागज उन्हें देते हुये कहा—'समय बहुत कम है सरदार, चलो अभी से काम में तेजी करें।"—कहते कहते वह उठ खड़े हुये। सरदार रिपुमर्दन भी

---

* राजा के प्रतिनिधि के लिये आदर सूचक सम्बोधन।

उठकर खड़े हो गये।

बलभद्र और रिपुमर्दन सबसे पहले दीवार के पास पहुँचे। काम जोरों पर चल रहा था। स्थान-स्थान पर पत्थरों के चट्टे लगे थे। कई लोग पत्थर ला रहे थे। कई कारीगर पत्थर तराश रहे थे। कई लोग बंटे (गागर) में पानी भर-भर कर, मिट्टी, रेत आदि मिला मसाला तैयार करने में लगे थे। कई लोग बल्ली गाड़, उस पर तख्ते बाँध रहे थे। इस ओर दीवार बनाने के काम में लगभग चालीस आदमी जुटे थे। दीवार लगभग तीन हाथ ऊँची उठ चुकी थी। राज शंकरमान तथा उसके कुछ अन्य साथी दीवार पर चढ़े चिनाई कर, पत्थर पर पत्थर जमा रहे थे।

बलभद्र ने पास पहुँच कर देखा, कुछ संतुष्ट हुए, फिर बोले—"नाइके !" (नायक, राज मजदूरों के नायक)

"सरकार!" —कहते-कहते शंकरमान ऊपर से कूदा और हाथ जोड़कर खड़ा हो गया।

"ढीलो म गरे बुझीस ? जति सके चाँड़ै सिद्धाउनू पर्दछ।" (ढीला काम न करना। जितनी जल्दी हो काम पूरा करना चाहिए) —बलभद्र ने कहा।

"हौस सरकार। (जो आज्ञा सरकार) !" शंकरमान ने नम्र हो उत्तर दिया।

"अच्छा जा काम कर ?" उसे बलभद्र ने आज्ञा दी।

फिर कुछ जोर से सभी काम करने वालों को सम्बोधित करते हुये कहा—"पर्खाल का काम अत्यन्त आवश्यक एवं महत्वपूर्ण है। जितनी जल्दी हो सके काम पूरा होना चाहिए, पर ध्यान रहे, उसकी दृढ़ता, उसकी मजबूती में फर्क न आए। ऊंची और मजबूत पर्खाल, गढ़ी की सुरक्षा की दृष्टि से कितनी महत्वपूर्ण होती है, यह तुम सब अच्छी तरह जानते हो। अभी तीन चार हाथ ही दीवार उठी है, दस बारह हाथ कम से कम और ऊपर उठनी चाहिए। तुम सब जवान,

पत्थर लाने वाले से लेकर पत्थर जमाने वाले तक, पर्खाल बनाने में लगे कारीगर से लेकर गारा-मिट्टी बनाने वाले तक, अपने-अपने काम में अच्छी तरह पिल जाओ, तभी यह सम्भव है। जवानों ! यह याद रखना यह मेरा या तेरा, किसी एक का काम नहीं। हम सब का अपना काम है। नेपाल—हमारी मातृभूमि नेपाल का काम है। हमारी नेपाली आन-बान का काम है, नेपाली मान-मर्यादा का सवाल है। काम में किसी तरह की ढील न देना। मुझे तुम लोगों पर बहुत विश्वास है।"

'काजी ! यह हमारा अपना काम है, हम जी-जान से लगकर पूरा करेंगे।" —एक साथ कई लोगों ने कहा।

"शाबाश ! मुझे इसका पूर्ण विश्वास है।"

कह कर बलभद्र वहाँ से चल पड़े और लोहारखाने की ओर बढ़े। वहाँ का काम देखा, दो चार उत्साह के बोल बोले और भंडार की ओर चले। वहाँ पहुँच कर भण्डारे दलभंजन पांडे से रसद के बारे में पूछ-ताछ की और संतुष्ट से होकर सरदार रिपुमर्दन से कहा—"सरदार, पत्थर लाने व जमा करने के काम में कुछ आदमी और खटा दो। जितना हो सके यहां जमा कर लो। पर्खाल में बहुत पत्थर लगेंगे।"

सरदार रिपुमर्दन ने आश्वासन दिया तो लौट कर वह अपनी बैठक की ओर आये। द्वार पर ही कान्ता और कनक मिले। दोनों ने अभिवादन किया।

तनिक रुक कर बलभद्र ने कान्ता की ओर देखा। सोचा—मैल-पोश, (बगलबन्दी नेपाली कमीज) 'सुरुवाल' (नेपाली पायजामा) पहने और पगड़ी बाँधे इसे कौन 'आइमाई' कहेगा। फिर बोले—"कमल-कान्त पाँडे और कनक शमशेर ! जान पहचान हो गई आपस में ?"

वह कुछ मुस्कराये और बिना उत्तर की प्रतीक्षा किये उन्होंने कहा—"आउ" (आओ) और बैठक में प्रवेश किया।

सरदार रिपुमर्दन के पीछे-पीछे कनक और कान्ता भी कमरे में

आ गये तथा बलभद्र से संकेत पा फर्श पर रखी चौकियों पर बैठ गये।

बलभद्र ने रिपुमर्दन की ओर देख कर कहा—"सरदार, कनक और पाँडे को भी काम में लगा दें। खलंगा के बाहर, मार्ग की सुरक्षा के काम में। क्या ख्याल है?"

"उचित है काजी।"—रिपुमर्दन बोले।

"खाना खा चुके न?" बलभद्र ने कनक और कान्ता की ओर देखा।

"जी सरकार!" —दोनों ने करबद्ध उत्तर दिया।

"त दुवै जाउ र खलंगामा आउने बाटोको जांच गर। (तो दोनों जाओ और खलंगा में आने के मार्ग का निरीक्षण करो। 'बाटो' (मार्ग) के सभी सम्भावित निर्बल स्थानों पर विचार करो। फिर आकर मुझे खबर देना।"

आज्ञा पा जब कनक और कान्ता बिदा हुए तो बलभद्र ने कुछ सोचते हुए रिपुमर्दन से कहा—"सरदार, गढ़िमा आउने बाटो धेरै महत्व राख्तछ। बाटो छेकी, सकेसम्म शत्रुलाई गढ़ी बाट टाढ़ैनै राख्नु पर्छ। (किले में प्रवेश करने का मार्ग अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। मार्ग रोक कर ही जहाँ तक हो सके शत्रुदल को किले से दूर ही रखना चाहिए।)

"बाटो सारै गारोछ। तेती को उकालछ, सितिमिति चढ़न सहजै छैन।" (मार्ग काफी दुर्गम हैं। उतनी चढ़ाई है, ऐसे-वैसे चढ़ना सहज नहीं)

"हो, (हाँ) पर दुर्गम मार्ग की दुर्गमता और बढ़नी चाहिये, इतनी कि मार्ग पर चढ़ते, शत्रु की कमर टूट जाय। मेरे विचार में तो सरदार इस मार्ग के अपेक्षाकृत सरल भागों में कुछ मोर्चे-बंदी हो। ऐसे कि कम से कम आदमियों से हम शत्रु सेना को भारी से भारी क्षति पहुँचा सकें। क्या ख्याल है? लकड़ी के खूँटे गाढ़ कर उन पर पत्थरों के ढेर लगा दिये जांय, ऐसे कि खूँटे खींचते ही पत्थरों की वर्षा हो।

ऐसे ढेर पहाड़ी के ऊपर की ओर लगें। उन्हें झाड़-झंकाड़ से छिपा कर रखें और ऊपर चढ़ती शत्रु सेना के सीध में आते ही, इस्तेमाल में लायें। यही नहीं, मेरा विचार है इस तरह के कई ढेर हमें पहाड़ी के अन्य स्थानों पर भी काफी संख्या में तैयार रखने चाहिएँ, जिससे यदि शत्रु मार्ग से न आ, स्वयं मार्ग बनाते किले तक चढ़ आने का प्रयास करे तो उससे वहीं निपटा जाय। कैसा?"—उन्होंने सरदार की ओर देख आँखों से भी प्रश्न किया।

"बहुत उत्तम रहेगा काजी!" सरदार ने सहमत हो कहा।

"अच्छा, अभी जाओ! अन्य काम देखो। जब कनक आदि मार्ग का निरीक्षण कर आएँगे, तब उनकी बातों पर विचारार्थ हम स्वयं मार्ग का निरीक्षण करेंगे।"

अभिवादन कर सरदार रिपुमर्दन चले गये।

लगभग दो घंटे बाद मार्ग का निरीक्षण कर कनक और कान्ता ने आकर जब कप्तान बलभद्र को खबर दी, उस समय वे चाय पी रहे थे। पास ही पुत्री माया व उसकी केटी (दासी) कांछी बैठी थी। माया उठकर जाने लगी तो बलभद्र ने कहा—"बसी रहौ नानी[1] कनक छ। (बैठी रहो बेटी, कनक है)। माया कुछ बोली नहीं, उठते-उठते बैठ गई। उसने पास बैठी कांछी के कान में कुछ कहा। सुन कांछी उठकर भीतर चली गई। उसे जाते देख बलभद्र ने प्रश्नवाचक दृष्टि से माया की ओर देखा। माया ने संक्षिप्त सा उत्तर दिया—"चिया।" (चाय)

बलभद्र ने मुस्करा कुछ सिर हिला मानो अपनी सम्मति दी।

इसी समय कनक व कान्ता ने कमरे में प्रवेश किया। माया को वहाँ बैठे देख कनक मन ही मन प्रसन्न हो गया। अभिवादन स्वीकृति के पश्चात् बलभद्र ने कहा "नानी! कनक को तो तुम जानती ही हो। और ये हैं पांडे, कमलकान्त पाँडे। सहारनपुर की ओर से आये हैं,

---

१. संतान के लिए स्नेहपूर्ण सम्बोधन।

यहीं रहेंगे ।"

कान्ता ने अभिवादन करते हुए माया की ओर देखा। सुन्दर जान पड़ी। कुछ ऐसी सौम्यता, कुछ ऐसी लुनाई का आभास मिला कि कान्ता प्रभावित हुई। माया ने भी देखा—अच्छा ही लगा। जल्दी से कान्ता के पास बैठे कनक की ओर एक दृष्टि डाल उसने पलकें झुका लीं। कनक ने लक्ष्य किया और विभोर हो उठा।

कांछी तब तक दो गिलास चाय लेकर आ गई थी। उसने कनक और कान्ता के सामने चाय रख दी और माया के पास बैठ गई। हाथ से उन्हें चाय पीने का इशारा करते हुए बलभद्र ने पूछा—"मार्ग देख आये न ? क्या विचार है तुम्हारा ?"

कनक मन में माया के बारे में सोच रहा था, सो उसने कान्ता की ओर देखा, मानो अनुरोध किया—तुम ही कहो। कनाता ने उत्तर दिया—"प्रभु मार्ग तो दुर्गम है। उत्तर का मार्ग दक्षिण मार्ग की अपेक्षा अधिक दुर्गम है। दक्षिण का मार्ग आरम्भ में खोला (पहाड़ी सूखी नदी) के पास अधिक सुगम है। ऊपर आते-आते पहाड़ी के लगभग बीच में, मार्ग कुछ समतल हो गया है। उत्तर के मार्ग में प्रकृति के सहयोग रूप में कुछ बड़ी-बड़ी चट्टानें हैं, और साल, बबूल व बेर की झाड़ियों ने मार्ग को अधिक दुर्गम बना दिया है। उत्तर का यह मार्ग पगडंडी रूप है। दक्षिण का मार्ग आरम्भ में कुछ विस्तृत है, समतल स्थान तक। उसके बाद उसका भी पगडंडी रूप है। साल के बड़े-बड़े वृक्ष समतल स्थान से ऊपर की ओर अधिक घने हैं। नीचे की ओर कंटीली झाड़ियाँ एवं बबूल आदि के पेड़ अधिक हैं।"

"हूँ !"—बलभद्र आंख मूँद सोचने लगे। कान्ता ने कनक की ओर देखा। वह था तो सिर झुकाये हुए, पर देख रहा था माया की ओर। कान्ता ने बलभद्र की ओर देखा फिर सिर घुमाकर माया को ओर दृष्टिपात किया। धरती की ओर आंखें लगाये वह चुपचाप पत्थर की मूर्ति सी बैठी थी। ऐसा लगा कान्ता को कि आनन कुछ अरुणिम है

उसका। माया के पीछे कांछी की ओर जो दृष्टि गई तो उसे अपनी ओर देखते पाया। संभल कर झट नजरें हटा लीं कान्ता ने!

"अच्छा थोड़ी देर में हम आते हैं पर्खाल देख कर स्वयं मार्ग देखने चलेंगे। तुम अभी जाओ, पर्खाल के पास ही मिलना।" बलभद्र ने कहा।

अभिवादन कर दोनों चले गये। माया ने पूछा—"बुबा (पिता जी) कनक यहीं रहेंगे कुछ दिन ?"

"हाँ नानी, दो चार दिन ठहरने के लिए कह दिया है मैंने! अच्छा मैं जाता हूँ। कनक आज हमारे साथ ही खायेगा।"

"और पांडेज्यू ?—माया ने धीरे से पूछा।

"पांडे ? हां—वह भी।" कहते-कहते वह उठ गये।

वहाँ से वह सीधे मुख्य द्वार के पास पर्खाल पर पहुँचे। काम पूर्ववत जोरों पर था, संतुष्ट हुए। कनक और कान्ता पहले ही वहाँ मौजूद थे। उन्हें अपने पीछे आने का इंगित कर वे लोहारखाने पहुँचे। वहाँ सरदार रिपुमर्दन काम में हाथ बँटा रहे थे। देखकर प्रसन्न हुए और उन्हें साथ ले दक्षिण मार्ग की ओर चल पड़े। पश्चिम ओर के मुख्य द्वार से न जाकर वे दक्षिण से नीचे की ओर उतरे। यहाँ अभी पर्खाल न थी। नींव ही खोदी जा रही थी। कुछ विशाल शाल वृक्ष नींव की सीध में आ रहे थे।

बलभद्र ने उन विशाल वृक्षों को पर्खाल का ही भाग बनाने की राय दी, दोनों तरफ पत्थर चिनकर। कुछ उत्साहवर्द्धक वचन कहे। जल्दी जल्दी काम करने के लिए कहा और दूसरी ओर जाकर पगडंडी पर, जो कुछ दूर नीचे की ओर थी, उतर गये। सबने उनका अनुकरण किया। नीचे की ओर बढ़ते हुए, उस समतल स्थान पर पहुँचे, जिसका उल्लेख कान्ता ने किया था, तो रुक गये। कान्ता से बोले—"पांडे, एक यह जगह बताई थी न तुमने ?"

स्वीकारात्मक उत्तर पा वह पुनः बोले—"ठीक है, यहाँ—"

उन्होंने पगडंडी के ऊपर, दो एक स्थलों की ओर संकेत करते हुए कहा-
"यहाँ र (और) यहाँ खूँटों के सहारे ढुँगा (पत्थर) जमा करो।"

उन्होंने उपस्थित लोगों को समझाया—किस तरह इन साल वृक्षों का सहारा ले खूँटें गाड़ें और फिर किस तरह पत्थरों के ढेर उस पर जमा दिये जायं। किस तरह उन खूटों को उखाड़, पत्थरों को गिराने के लिए उनमें रस्सी या मजबूत बेलें बाँधी जाँयँ।

इस प्रकार सम्पूर्ण दक्षिणी मार्ग का सम्पूर्ण निरीक्षण कर उन्होंने कई स्थानों पर पत्थरों के मचान बाँधने के लिए कहा। जहाँ-जहाँ मार्ग कुछ प्रशस्त था, विशेष कर खोला के निकट, वहाँ कुछ-कुछ अन्तर पर मार्ग में गड्ढे बना उन गड्ढों में नोंकीले खूँटे गाड़ने और ऊपर से पेड़ों की पतली टहनियों को मिट्टी से ढांप देने के लिए भी कहा। इसी प्रकार उत्तरी मार्ग का निरीक्षण कर उसकी सुरक्षा का भी प्रबन्ध किया। इतना कर वे सब मुख्य द्वार के पास आ गये।

पत्थरों के ढेर यत्र-तत्र जमा थे। पत्थर संग्रह के काम में ही अधिक लोग लगे हुए थे। दीवार की चिनाई में कुछ कम थे। बलभद्र ने सोच कर रिपुमर्दन से कहा—"सरदार पत्थर तो ठीक आ रहे हैं, पर इधर पर्खाल के काम में आदमी कुछ कम लगते हैं। यही नहीं पूरे पर्खाल में कमी है, और अधिक आदमियों की आवश्यकता है। दक्षिण की तरफ तो बहुत कम आदमी हैं।"

"जितने आदमी थे, मैंने लगा ही दिये हैं काजी।" रुककर रिपुमर्दन ने फिर कहा—"आदमियों की कितनी कमी है, इससे आप अपरिचित नहीं। कुल मिलाकर किसी हालत में पांच सौ से अधिक नहीं हैं। अस्सी, पिचासी के लगभग 'आइमाई' हैं और तीस-पैंतीस के लगभग 'केटाकेटी' (लड़के-लड़कियां)।

कान्ता ने जल्दी से कहा—"प्रभु! स्त्री-बच्चे भी तो दीवार बनाने में सहायक हो सकते हैं!"

बलभद्र ने कान्ता की ओर देखा और बात की गहराई, बात की

महत्ता तुरन्त समझ गये। सरदार रिपुमर्दन ने उत्साहित होकर कहा—"पाँडे ने उचित ही कहा है काजी ! छोटे मोटे कामों में, जैसे पत्थर राज को देना, मिट्टी पानी लाना, मसाला बनाना आदि तो वे सरलता से कर सकते हैं।"

"मैं भी यही सोचता हूँ, पाँडे तुमने बड़े मौके की, सामयिक बात कही है।" और उन्होंने मानो कृतज्ञता प्रकाशन के लिए अपने हाथ से उसकी पीठ थपथपाई।

"मैं इस पर सोचूँगा।" कहते-कहते वे पत्थर पर पत्थर जमाते हुए शंकरमान व अन्य राजों की ओर मुड़कर उन्हें देखने लगे। कुछ देर देखते रहे फिर बोले—"नाइके ! तिम्रा कारिगरी का शिपालु हात मसिनोतिर नै ढल्कन्छ कि—" (नायक, कारीगरी के काम में अभ्यस्त तुम्हारे हाथ बारीकी की ओर ही झुकते से हैं, क्यों ?) जानता हूँ शंकरमान कि जनकपुर में तुमने पत्थर की सुन्दर मूर्तियाँ बनाई हैं। युद्ध समाप्ति पर निश्चय ही मैं यहाँ पर तुमसे श्री पृथ्वीनारायणशाह की विशाल मूर्ति बनवाऊँगा। पर नायक अभी तो शीघ्रातिशीघ्र प[illegible] बनाना है।"

क्षण भर रुक उन्होंने फिर कहा—"हेर नाइके ! अहिलेत यी खस्रो मोटो ढुँगाले हत्तपत्त बलियो पर्खाल उठाउनू छ र खलंगा लाई अभेद्य बनाउनछ।" (देख नायक ! अभी तो इन मोटे खुरदुरे पत्थरों से झटपट मजबूत दीवार उठानी व छावनी को सुदृढ़ बनाना है) यसैले जतिसके चाड़ै-चाड़ै गर्नु पर्छ (इसी से जहाँ तक हो सके जल्दी करनी होगी)।"

शंकरमान कुछ बोला नहीं। केवल हाथ जोड़ दिये और नतमस्तक हो गया।

कान्ता ने बलभद्र की ओर देखते हुए कहा—'मशाल प्रभु ?" फिर शकरमान की ओर मुड़कर पूछा—"मशाल का प्रबन्ध होने पर रात में भी काम सम्भव हो सकता है नायक ? काजी जानना चाहते हैं।"

बलभद्र कुछ विस्मित हुए।

शंकरमान को जैसे बल मिला। बलभद्र की ओर देख बोला—"हो सकता है काजी, अवश्य हो सकता है। और हम करेंगे, रात दिन काम करेंगे। उसने अपने साथ के अन्य राजों की ओर देखा। संकेत पाकर कई बोल उठे—"हाँ काजी, हम रात में भी काम करेंगे। जितनी जल्दी हो सकेगा, हम पर्खाल पूरा करेंगे।''

"शाबास ! तुम लोगों से मुझे ऐसी ही आशा थी। जाओ अब काम करो। भोजन के बाद कुछ विश्राम करना, तब तक मशाल का प्रबन्ध हो जायेगा।''

"तिम्रो जिम्मा।'' (तुम्हारी जिम्मेदारी) कहकर उन्होंने रिपुमर्दन की ओर देखा। यहाँ से वह अपने कक्ष की ओर चले। द्वार पर पहुँच उन्होंने कनक व कान्ता को सांध्य-भोजन के लिए निमंत्रण दिया और सरदार से रात चौक में मिलने के लिए कहा।

सब बिदा हुए।

संध्या हो चली थी। खलंगा में स्त्री पुरुषो ने संध्या, पूजा पाठ आदि किया, फिर सूर्यास्त के कुछ बाद ही भोजनादि से निवृत हो गये। ऐसा ही चलन था वहाँ। दशहरा को बीते अभी थोड़े ही दिन हुए थे। त्योहार की उमंग तो समाप्त हो चुकी थी, पर अभी खुमार बाकी था। अतः अब भी चौक में भोजनोपरान्त नाच गाने का उल्लास रहता—मजमा जमता। रात्रि के प्रथम प्रहर में आज भी काफी लोग आकर जमा हो गये। मने दमाई ने अपने साथियों के साथ 'पंचे बाजा' (पाँच प्रकार के बाजे) बजाया। 'गाइने' (भाट की जाति के गाने वाले) शिब्बू ने तान छेड़ी—

"ति री री री
मुरली बाज्यो बनैमा बनैमा
लौ माया न मारे।''

—दो सिपाहियो ने मादल (मृदंग की तरह का छोटा बाजा) पर थाप दी। छः सिपाहियों ने उठ कर ताल

पर नाचना आरम्भ कर दिया । शिब्बू ने गाना आगे बढ़ाया ..

"सि री री री
समझना आओ मनैमा मनैमा
लौ माया न मारे ॥
थि री री री
धारा को पानी प्यासैमा प्यासैमा
लौ माया न मारे ॥"

—धीरे-धीरे लय स्वर और ताल में तीव्रता आने लगी । नाच की गति में भी तीव्रता आने लगी । दर्शकों में अनेक ने गाने में सहयोग दिया और अनेकों ने ताल पर ताली बजा बजा कर आनन्द प्रकट किया । संगीत और नृत्य में धीरे धीरे तीव्रता बढ़ती गई और अपनी चरम स्थिति पर पहुँच गीत और नाच समाप्त हो गये । इस गीत व नृत्य के समाप्त होते-होते, खलंगा के प्रायः सभी स्त्री, पुरुष, बच्चे चौक में जमा हो चुके थे । अतः पहले नृत्य की समाप्ति पर पंद्रह पुरुषों ने उठकर अपने मादल बजाये, और नौ आदमियों के दूसरे नर्तक-दल ने उनके सामने खड़े हो कर गाना आरम्भ किया —

"रूवा को थुप्रो बादल लाग्यो
हिमाल चुलीमा, हाइ हाइ हिमाल चुलीमा ॥
आशा को थुप्रो मनैमा रह्यो
गरिबी जुनिमा, हाइ हाइ गरिबी जुनिमा ॥
बादल उड्यो हावा को मीठो
सुसार पाएर, हाइ हाइ सुसार पाएर ॥
मन को आशा मनैमा रह्यो दिन दिनै कुरदामा
रुवाको थुप्रो बादल लाग्यो
हिमाल चुलीमा, हाइ हाइ हिमाल चुलीमा ॥

गाने की एक कड़ी वे गाते, फिर झूम-झूम कर, लचक-लचक कर उछल-उछल कर मादल के ताल पर नाचने लगते । दूसरी कड़ी गाते

और फिर उसी तरह नाच उठते। स्त्रियों ने भी गाने में उनका साथ दिया। बच्चों ने मादल के ताल से ताल मिला अपने नन्हें हाथों से थाप दी। नाच गाने के सरस सुखद वातावरण से वह पहाड़ी मुखरित हो उठी।

इस नाच गाने की समाप्ति पर सरदार रिपुमर्दन ने जोर से कहा—"साथियो—काजीज्यू तुमसे कुछ कहना चाहते हैं, सुनो।"

सब शान्त हो अपने-अपने स्थानों पर बैठ उस और देखने लगे जहाँ बलभद्र, कनक, कान्ता व सरदार रिपुमर्दन के साथ खड़े थे।

बलभद्र एक कदम आगे बढ़े। ऊंचे और गम्भीर स्वर में उन्हों निकट भविष्य में युद्ध की सम्भावना प्रकट करते हुए उनके स्वाभिमान को जगाया। देश और जाति की इज्जत के लिए आत्म त्याग करने की शिक्षा दी। फिर खलगा की सुरक्षा समझाते हुए कहने लगे—"यहाँ हम मुट्ठी भर सैनिक हैं। केवल पाँच सौ के लगभग, पर नेपाली सैनिक हैं अतः पांच हजार से भिड़ने की क्षमता रखते हैं। अस्त्र शस्त्र से भले ही हम हीन हों, पर शौर्य, शक्ति व वीरता के गुणों से भरपूर हैं। हमारा खलंगा अभी अभेद्य नहीं है, हमें इसे अभेद्य बनाना है। सिर पर छाये युद्ध के बादल किसी समय भी बरस पड़ें। हमें समय की दौड़ से भी तेज दौड़ना है। पर्खाल पूर्ण करना है—अधिक से अधिक अस्त्र-शस्त्र बनाने हैं—बाटो (मार्ग) को सुरक्षित बनाना है। खलंगा के सभी जवान जी जान से काम कर रहे हैं पर हम मुट्ठी भर ही हैं। कम हैं—समय भी कम है और काम बहुत। इसलिये हर एक को काम करना है, तुमको, मुझको, सबको ! यहाँ एक सौ के लगभग स्त्री बच्चे हैं। मैं चाहता हूँ वे भी हाथ बटाँए-काम में सहयोग दें।"

"हम तैयार हैं काजी !"—कई स्त्री बच्चों ने कहा—"जो कहोगे काजी हम वही करेंगे। हुक्म बकसा जाय। (आज्ञा दी जाय) !"

"सब पुरुष स्त्री बच्चे अपने योग्य कामों में सहयोग "—विशेष

कर पखाल के काम में।"—बलभद्र ने कहा।

"ऐसा ही होगा काजी, ऐसा ही होगा"—उपस्थित जनसमूह ने कहा।

एक ने नारा लगाया—"जय पशुपतिनाथ !।".

कई कंठों से फूट पड़ा—"जय गोरख, जय काली, जय श्री ५ महाराजाधिराज" और अन्त में सबने मिलकर नारा लगाया—"जय नेपाल।"

तत्पश्चात् सभा विसर्जित हुई।

नौ

१२ अक्टूबर १८१४ को मेरठ पहुँच जनरल गिलेस्पी ने तीसरे दल की कमान संभाली। एच० एम० ५३ वीं रेजिमेंट के कर्नल मॉबी, जो इस दल के उपसेनापति थे, ने उन्हें सेना की शक्ति आदि का पूर्ण विवरण दिया —

आर्टिलरी (तोपची दल)	२४७ जवान
एच० एम० ५३ वीं रेजिमेंट (गोरा पल्टन)	७८५ ,,
हिन्दुस्तानी इन्फैन्ट्री तीन दल (पहली बटालियन की ६ वीं, ७ वीं व १७ वीं टुकड़ी)	२३४८ ,,
पायनियर (अग्रिम दल)	१३३ ,,
कुल शक्ति	३५१३ जवान

तोपखाना—

१२ इंची तोपें	२
६ इंची तोपें	८
भारी तोपें	४
कुल तोपें	१४

दल के अन्य अंग्रेज अफसर, ले० कर्नल कारपेन्टर, मेजर कैली, कप्तान फास्ट, कप्तान कैम्पबैल, ले० एलिस, ले० यंग आदि से भी वे उसी दिन मिले। दूसरे दिन प्रातःकाल उन्होंने सेना का निरीक्षण किया और पूर्ण संतोष प्रकट किया।

१४ तारीख, प्रातःकाल ५ बजे सेनापति जनरल गिलेस्पी के नेतृत्व में तीसरा दल मेरठ से सहारनपुर की ओर रवाना हुआ। चार दिन बाद यह सेना लगभग ४ बजे सहारनपुर पहुँची। कम्पनी सरकार के वफादार, खीरी के जमींदार बहादुरसिंह के बेटे राना जीवन सिंह ने जनरल गिलेस्पी से भेंट की। उसने बताया कि शिवालिक के पार दून घाटी में उसकी कुछ जमींदारी पर किस तरह नेपालियों ने बलपूर्वक अधिकार कर लिया है। यदि कम्पनी सरकार उन्हें वापिस हासिल करने में सहायता करे तो वह बदले में जनरल की सेना को सरलता से शिवालिक पहाड़ी के दो दर्रों—मोहन और टिमली से पार करवा देगा। इसके अलावा वह कुछ घोड़े और हाथी भी देकर उनकी सहायता करेगा।

जनरल गिलेस्पी ने बात मान ली।

उसी रात जनरल गिलेस्पी ने कर्नल मॉबी तथा अन्य सभी प्रमुख अंग्रेज अफसरों को अपने खेमे में बुलवाया। सबके आने पर उन्होंने कहा—"आफिसर्स (अफसरो) मैंने तुम्हें विशेष कारणों से यहाँ बुलवाया है। आप सब जानते हैं नेपाल के खिलाफ जंग का ऐलान अभी नहीं हुआ है, फिर भी थर्ड डिविजन (तीसरा दल) कूच कर चुका है। हमारा लक्ष्य है दून घाटी में स्थित नेपालियों का किला—'कलंगा।' जासूसों से मिली सभी खबरों को मैंने 'स्टेडी' (अध्ययन) किया और

इस 'कनक्लूजन' (निष्कर्ष) पर पहुँचा हूँ कि 'कलंगा' नाम मात्र को ही किला है। कठिनता से उनकी शक्ति पांच सौ जवान हैं और तथा कथित किले का रक्षक है—एक मामूली कैप्टन (कप्तान) बलभद्दर (बलभद्र)। गोले बारूद आदि युद्ध सामग्री से भी वे हीन हैं। हमारी तीन हजार पाँच सौ, हथियारों से भली भांति लैस सेना के मुकाबले में वे तुच्छ हैं। अतः किले को हथियाने के लिये हमें शत्रु की ओर से विशेष बाधा न होगी। 'आई एम श्योर ऑफ इट' (मुझे इसका पूर्ण विश्वास है)। खीरी के राना जीवनसिंह से यह भी ज्ञात हुआ है कि कलंगा, किला न होकर छावनी मात्र है। नालापानी की पहाड़ी पर कुछ घर हैं—बस ! 'ए फोर्ट ! इफ यू कॉल इट सो ! (किला ! यदि तुम उसे किला कहना चाहो तो।) ऐसे तुच्छ किले "

उपहास की मुद्रा में खिंचे अधरों पर हास्य की रेखा स्पष्ट दिखायी दी—"ऐसे तुच्छ किले को जीतने के लिये ऐसा विशद आयोजन ? 'वेल ट्रेंड आर्मीऑफ थ्री थॉउजैन्ड फाइभ हन्ड्रेड !' (तीन हजार पांच सौ की सुशिक्षित सेना) दो हजार ही बहुत...बहुत काफी हैं। मेरा पक्का विश्वास है पहले तो शत्रु बिना युद्ध किये ही 'सरन्डर' (आत्म-समर्पण) कर देगा, क्योंकि हमारी शक्ति से टक्कर लेना मूर्खता ही होगी। पर मान लें शत्रु लड़ना ही चाहे तो इस किले पर अधिकार करने में हमें दो दिन से अधिक नहीं लगेंगे। ऐसी हालत में मैं अपनी 'प्रेजन्स' (उपस्थिति) दून में अनावश्यक और व्यर्थ समझता हूँ। इधर तीन हजार पांच सौ जवान भी बहुत हैं। अधिक सेना भी मैं अनावश्यक समझता हूँ। 'नेटिव इन्फैंट्री सिक्सथ बटालियन (हिन्दुस्तानी फौज की छठवीं टुकड़ी) 'आर्टिलरी एण्ड पायनियर्स' (तोपची दल व आगे चलने वाली टुकड़ी) के कुछ जवानों को यहीं रहने दो। शेष लगभग दो हजार पाँच सौ बहुत होंगे। उन्हें ही कल कूच करने के लिये तैयार रखो। सेना का 'कमाण्ड' (संचालन) कर्नल मॉबी, 'सैकेन्ड इन कमाण्ड' (उप सेना नायक) करेंगे। मैं चाहता हूँ कल ही कर्नल मॉबी, दो

हजार पाँच सौ जवानों को लेकर दून के लिए कूच करें। शिवालिक के दर्रों को पार करने में राना जीवनसिंह के आदमी सहायक होंगे। दो दर्रे हैं—मोहन और टिमली, जो क्रमशः शिवालिक के उत्तर तथा पश्चिम में हैं। कर्नल मॉबी उत्तर से मोहन दर्रे से और ले० कर्नल कारपेन्टर पश्चिम के टिमली दर्रे से दून घाटी में प्रवेश करें। इन दर्रों पर किसी प्रकार के विरोध की सम्भावना नहीं है, ऐसा राना जीवनसिंह ने बताया है।"

क्षण भर रुककर उन्होंने पूछा—"एनी क्वैश्चन्स ?" (कोई प्रश्न ?)

कर्नल मॉबी ने सैनिक अनुशासन से सीधे खड़े होकर पूछा—"सर आर वी टू गिव ए चान्स टू द एनिमी टू सरन्डर ?" (जनाब, क्या शत्रु को आत्म समर्पण करने का मौका दिया जाय ?)

"अफकोर्स (जरूर) ! दून पहुँचते ही पहला काम यही करना चाहिए। शत्रु 'सरन्डर' (आत्म समर्पण) करे तो व्यर्थ की मार काट बच जायेगी। और मेरी बात पर ध्यान दो, शत्रु एकदम 'सरेन्डर' (आत्म समर्पण) करेगा, एकदम !" मुस्कराते हुए उन्होंने उत्तर दिया।

"थैंक यू सर" (धन्यवाद श्रीमान) कह कर्नल मॉबी बैठ गये।

जनरल गिलेस्पी ने अन्य अफसरों की ओर देखा। वे मूर्तिवत शान्त बैठे रहे। कुछ क्षण बाद जनरल गिलेस्पी ने खड़े होते हुये कहा—"दैट्स ऑल जैन्टलमैन (बस इतना ही महाशयो) !" फिर कर्नल मॉबी की ओर देखते हुए कहा—'यू मार्च टुमॉरो एट टैन ए एम कर्नल ! गुड नाइट !" (तुम कल सवेरे दस बजे कूच करोगे कर्नल, शुभ-रात्रि)

सभी अफसर खड़े हो गये। एटैन्शन होकर सलाम किया। 'गुड नाइट सर' कहा और खेमें से बाहर चले गये।

दूसरे दिन १९ तारीख सवेरे ९ बजते-बजते कर्नल मॉबी ने सारा

प्रबन्ध जनरल गिलेस्पी की स्वीकृति से पूर्ण कर लिया। सहारनपुर में जनरल के साथ छोड़ने के लिये हिन्दुस्तानी इन्फैंट्री (पैदल सेना) की छठवीं टुकड़ी जिसमें लगभग छः सौ जवान, ५३वीं रेजिमेंट की एक टुकड़ी (४वीं आयरिस ड्रैगूनस्) के लगभग ३०० जवान, और आर्टिलरी (तोपची दल) की एक छोटी टुकड़ी के लगभग एक सौ जवान—सब मिला कर लगभग एक हज़ार जवान। टिमली दर्रे से जाने वाले दल में हिन्दुस्तानी पैदल सेना की १७ वीं टुकड़ी तथा ५३वीं रेजिमेंट की दो टुकड़ियां और पायनियर्स। इस दल का नेतृत्व ले० कर्नल कारपेन्टर करेंगे। शेष सभी दूसरे दल में जो मोहन दर्रे से जायेंगे, जिसका नेतृत्व वह स्वयं करेंगे।

दस बजते न बजते दोनों दलों ने कूच किया। जनरल गिलेस्पी ने सेना के सभी अंग्रेज अफसरों से हाथ मिलाया, 'गुडलक' (शुभ कामना) कहा और बिदा किया। जमींदार राना जीवनसिंह के कारण घोड़ों के अतिरिक्त चार-चार हाथी दोनों दलों को मिल गये थे। लगभग दो कोस तक दोनों दल साथ साथ चले फिर ले० कर्नल कारपेन्टर अपने दल के साथ बाईं ओर टिमली दर्रे की ओर मुड़े और कर्नल मॉबी सीधे उत्तर, मोहन दर्रे की ओर चले।

पाँच दिन बाद—२४ अक्टूबर !

कर्नल मॉबी अपने दल के साथ सकुशल लगभग ३ बजे देहरादून पहुँचे। खुड़बड़े मोहल्ले के उत्तर में जो विस्तृत सा मैदान था, वहीं खेमा गाड़ दिया। मैजर कैली को दल के प्रबन्ध एवं देखभाल का काम सौंप, कर्नल मॉबी कप्तान कैम्पवैल तथा दस सशस्त्र घुड़सवार ले रिस्पना नदी की ओर चले। उस सूखी नदी को पारकर उत्तर की ओर जंगलों में घुस गये। कुछ चढ़ाई पार करने पर उन्हें कुछ समतल भूमि मिली। सामने पूर्व की ओर उन्हें नालापानी की पहाड़ियां दिखाई दीं जिसकी सबसे ऊँची चोटी पर सघन शाल वृक्षों के पीछे कुछ घर दिखाई दिये। पहाड़ी पर चारों ओर दीवार बन रही थी। उस काम

में जुटे लोग स्पष्ट दिखाई देते थे। देखकर कर्नल मॉबी ने कप्तान कैम्पबैल से कहा—"देखो दीवार अभी बन रही है। किले की सुरक्षा के साधन अपूर्ण हैं।" फिर मुस्कराते हुये कहा—"द जनरल वाज राइट ! वी विल हैभ नो अप्पोजिशन हियर। कम।" (जनरल ठीक कहते थे, यहाँ हमें विरोध न मिलेगा। आओ) और उन्होंने घोड़ा आगे (पूर्व की ओर) बढ़ाया—उस पहाड़ी की ओर ! लगभग चार पांच सौ गज आगे चले होंगे कि सामने एक गहरा नाला दिखाई दिया। कंटीली झाड़ियों से आच्छादित। नीचे की ओर एक बरसाती नदी दिखाई दी, जिसमें भरे छोटे बड़े पत्थर स्पष्ट बताते थे, बरसात में यह नदी भयंकर रूप धारण करती होगी। सामने ही नदी के दूसरी तरफ लगभग छः सौ गज दूर नालापानी की वह पहाड़ी दिखाई दी, जहां खलंगा स्थित था।

एक बार फिर कर्नल मॉबी के अधरों पर हल्की मुस्कान फैल गई। "सिट्टिंग डक ! डोन्ट यू थिंक सो ? (आसान शिकार ! क्या तुम्हारा भी ऐसा ही विचार नहीं है ?)"

"यस सर, इजी प्रे। (जी हाँ श्रीमान, आसान शिकार)" कप्तान कैम्पवैल ने उत्तर दिया।

"कम लैटस् गो बैक। (चलो लौट चलें)" कर्नल मॉबी ने घोड़ा मोड़ लिया।

खेमे में आ मुश्किल से घंटा भर हुआ था कि दूसरे दल के आने का समाचार पाकर वह उठ खड़े हुये और खेमे से बाहर आ ले० कर्नल कारपेन्टर और उनके दल का स्वागत किया। रात के लगभग आठ बजे तक सेना के पड़ाव आदि का प्रबन्ध पूर्ण हुआ और तब जाकर कर्नल मॉबी, ले० कर्नल कारपेन्टर से अपने खेमें में सलाह करने लगे। उन्होंने किले की बनती दीवार का जिक्र किया। किले के सामने के मैदान का जिक्र किया और सहारनपुर में प्रकट जनरल गिलेस्पी के विचारों की पुष्टि की, कि यहाँ किञ्चित विरोध की आशा नहीं है। यह भी बताया कि उनके रक्षा के साधन अधूरे हैं, इसलिये शीघ्रातिशीघ्र

बिना मौका दिये उन्हें 'सरन्डर' (आत्मसमर्पण) करने का पत्र भेजा जाय और किले पर अधिकार किया जाय। जब ले० कर्नल कारपेन्टर उनके विचारों से पूर्ण सहमत हुये तो उन्होंने कहा—"ले० कर्नल कारपेन्टर ! मैं आज ही दूत भेज कर 'सरन्डर' करने का पत्र भेजना चाहता हूँ।"

"आज ही सर ? अब तो रात हो गई है, नौ बजने वाले होंगे।"

"कोई हर्ज नहीं। चाहता हूँ कल सवेरे ही किले पर अधिकार कर जनरल को खबर भेज दूँ। राना जीवनसिंह के आदमी साथ हैं। रास्ता जानते हैं। उनमें से एक के साथ दूत भेज देता हूँ—अभी ! तुम जाकर 'पायनियर्स' का एक विश्वस्त अफसर छाँटो। मैं पत्र लिखता हूँ। हाँ, वह...क्या नाम है उसका—राना जीवनसिंह के आदमी का—इकहरे बदन का वह जो लम्बा सा है—शायद शोभन सिंह ! चालाक आदमी मालूम होता है। दोनों को तैयार करके आधे घंटे में मेरे पास ले आना। जाओ।"

ले० कर्नल कारपेन्टर के जाने के बाद कर्नल माँबी ने अंग्रेजी में एक पत्र लिखा। उसमें बलभद्र— 'कलंगा' किले के अधिनायक से, तुरन्त आत्मसमर्पण करने को कहा गया, अन्यथा उसके किले को भूमिसात कर देने की धमकी दी गई।

ले० कर्नल कारपेन्टर आध घंटे बाद शोभनसिंह और लेफ्टिनेन्ट एलिस को लेकर उपस्थित हुए। ले० एलिस टूटी फूटी हिन्दुस्तानी बोल लेता था, अतः ले० कर्नल कारपेन्टर ने विशेष रूप से उसे दूत के लिए चुना था, जिससे अंग्रेजी में पत्र न समझने पर वह बलभद्र को हिन्दुस्तानी में भाव समझा सकें।

पत्र ले० एलिस को देते हुए कर्नल माँबी ने कहा—"यू नो युअर ड्यूटी लेफ्टिनेन्ट ! आई विश यू आल लक। (तुम अपना कर्त्तव्य समझते हो लेफ्टिनेन्ट। मेरी कामना है, भाग्य तुम्हारा साथ दे।)"

"एन्ड यू—" (और तुम) उन्होंने शोभन की ओर उँगली उठाते

हुए कहा—"टुम लेफ्टिनेन्ट साब को अच्छा माफक किला में ले जाइंगा—ठीक ! टुम रास्टा जानटा हय, हमको राना जीवनसिंह बोला ठा ।"

"जी हाँ हजूर, रास्ता अच्छी तरह जानता हूँ । लप्टेन साहब को अच्छी तरह ले जाऊँगा हजूर ।" फर्शी सलाम झुकाते हुए शोभन बोला ।

"गुड (ठीक) टुम आच्छा काम करेंगा हम खुश होंगा, बक्शीश मिलेंगा—समझटा ।"

"जी हाँ, हजूर ।"—शोभन ने फिर फर्शी झुकाई ।

"आल राइट लेफ्टिनेन्ट एलिस, गुड लक । (अच्छा लेफ्टिनेन्ट एलिस, शुभकामना)" हाथ मिलाते हुए कर्नल मॉबी ने कहा ।

लेफ्टिनेन्ट एलिस ने फौजी ढंग से तन कर सलाम किया, शोभन ने फर्शी झुकाई और कमरे से बाहर हो गये ।

ले० कर्नल कारपेन्टर की ओर देखते हुए कुछ हँस कर कर्नल मॉबी ने कहा—"गुड ! (ठीक) अब तुम भी कुछ देर 'रेस्ट' (आराम) करो । ले० एलिस के वापस आने पर मुझे तुरन्त रिपोर्ट (खबर) दो । गुड नाइट (शुभ रात्रि) ।"

ले० कर्नल कारपेन्टर ने सलाम कर बिदा ली ।

दस

रात दिन काम होने से किले की दीवार लगभग दस ग्यारह हाथ ऊपर उठ चुकी थी, पर फिर भी बलभद्र को पूर्ण संतोष न हुआ था। वे पहले की तरह स्वयं समय समय पर राज मजदूरों को उत्साह के बोल कहते और अक्सर वहाँ उपस्थित रहते। सरदार रिपुमर्दन के जिम्मे तीर, तलवार, भाले आदि का काम छोड़ा हुआ था पर उसके बारे में पूरी जानकारी रखते थे। काफी मात्रा में भाले, बन्दूक, खुकुरी, तीर आदि बन चुके थे पर काम में शिथिलता न आई थी। रसद आदि भी पर्याप्त मात्रा में एकत्रित हो चुका था। कान्ता और कनक के जिम्मे मार्ग की सुरक्षा का जो प्रबन्ध दिया था, वह पूर्ण हो चुका था। दीवार में जो एक ही मुख्य द्वार था, उस पर जिजल तोप (लोहे के छोटे-छोटे बहुत से गोलों को फेंकने वाला) लगा चुके थे। दीवार पर, अन्य स्थानों में पाँच छोटे तोप भी लग चुके थे। स्थान-स्थान पर पत्थरों के ढेर लगा दिये गये थे। वैसे सुरक्षा के सभी साधन लगभग ठीक ही थे, पर पर्खालि

(दीवार) से पूर्ण संतोष न था। दो मुख्य कारण थे—पर्खाल बन ही रहा था, अतः गीला था और ऊँचाई कुछ कम थी। एक प्रहर रात बीत जाने पर भी बलभद्र सरदार रिपुमर्दन के साथ दीवार का काम देख रहे थे।

दिन में शिवालिक पहाड़ी पर भेजे गुप्तचर ने आकर खबर दी थी कि फिरंगी सेना दून घाटी में सम्भवतः आज प्रवेश करेगी। कल-परसों से युद्ध आरम्भ हो सकता है। इधर पर्खाल ऊँची और सुदृढ़ नहीं हो पाई है। कुछ चिंतित और गम्भीर थे आज बलभद्र!

पर्खाल बनाने का काम जोरों पर था। स्त्री-पुरुष, बच्चे, सभी काम में जुटे थे। मशाल की रोशनी में सभी अपने काम में रत थे। कनक राज लोगों के साथ दीवार पर चढ़े पत्थर पर पत्थर जमा रहा था। पाँडे (कान्ता), स्त्री बच्चों के साथ ऊपर उन्हें पत्थर-गारा दे रहे थे। स्वयं माया भी पाँडे के साथ काम कर रही थी। एक अदम्य उत्साह सा भर गया था सभी में।

सरदार रिपुमर्दन ने बलभद्र से कहा—"काजी! शत्रु सेना आज यदि दून पहुँचेगी तो संध्या तक ही पहुँच सकेगी। कल उनका दूत शायद यहाँ आवे। आज और कल का समय बहुत है काजी! कल शाम तक दीवार कम से कम पाँच हाथ ऊपर उठ जायगी।"

"सो तो ठीक है सरदार! पर दीवार गीली रहेगी न, अतः वह मजबूत न होगी।"—बलभद्र बोले।

"काजी, अभी युद्ध की घोषणा भी तो नहीं हुई है। नेपाल से भी कोई समाचार नहीं आया है अभी तक! पांच सात दिन और मिल जायेंगे।"

"नेपाल क्या, श्रीनगर कमांडर साहब के यहां से भी कोई खबर नहीं आई है। तारागढ़, जौंतगढ़, राइनगढ़ आदि निकट के स्थानों से न फौज आई है, न कोई खबर।"

"खबर तो आनी चाहिये प्रभु! श्रीनगर कुछ सेना के लिये पत्र

भेजा था न आपने, कुछ दिन पहले। उसका भी न जाने क्यों कुछ न हुआ ?"

"उन्हें शायद विश्वास नहीं कि दून पर आक्रमण हो सकता है। लगता है नेपाल की सीमाओं को ही दृढ़ बना रही है हमारी सरकार।"

इसी समय बलभद्र ने देखा—माया थककर बैठ गई है और आँचल से मुँह पोंछने लगी। शारीरिक श्रम से अनभ्यस्त, स्नेह पालिता पुत्री के कष्ट का अनुभव कर वे कुछ विक्षुब्ध से हो उठे। धीरे-धीरे उसके पास पहुँचे और स्नेह से बोले—"थाकी गयौ छोरी ? जाउ विश्राम गर।" (थक गई हो बेटी ? जाओ विश्राम करो)

"कसरी गरूं बुवा ? (कैसे करूं पिताजी ?) सभी काम करते रहें और मैं अपाहिज की तरह आराम—कैसे करूं ? पाँडे ज्यू कह रहे थे स्त्री-पुरुष, बालक-बूढ़े, ऊँच-नीच, छोटे-बड़े सबको भुला कर हमें केवल याद रखना है कि हम नेपाली हैं। मातृ-भूमि नेपाल पर संकट के बादल मंडरा रहे हैं। हमें ही उसे उबारना है। निज सुख सुविधा, आराम-विश्राम को भुलाकर अपना कर्त्तव्य करना है। थोड़ा थक गई थी, सुस्ता लिया, फिर से कर्त्तव्य पालन करती हूँ।"

कहते कहते वह उठ खड़ी हुई और सामने से आते पाँडे से बोली —"पांडे ज्यू। लाओ मलवे का तसला मुझे दे दो।"

बलभद्र कुछ बोले नहीं, सिर पर तसला लिये जाते पुत्री को देखते रहे। माया ने जाकर तसला कनक को दिया। हँस कर कनक ने तसला लिया, कुछ कहा। माया भी हँस पड़ी। बलभद्र को दोनों का शैशव याद आया, कैसे बचपन में दोनों गुड्डा-गुड्डी का घर बनाते थे।

इसी समय पास से, सिर पर पत्थर लिये जाते पाँडे पर दृष्टि पड़ी। सोचने लगे, कान्ता 'आइमाई' होते हुये भी कितना काम करती है। सच ही तो कहा था कान्ता ने कि पुरुष की कठोरता में ही मेरा जीवन है। दिन भर कनक के साथ मार्ग की सुरक्षा का काम किया और अब यहाँ पर्खाल बनाने में हाथ बँटा रही है। यही नहीं, सभी में कर्त्तव्य

भावना भरती है। एक उमंग, एक स्फूर्ति सी फैलाती जाती है सबमें ! स्वयं कठिन से कठिन काम कर दूसरों को भी करने के लिये उत्साहित करती है। छोरी माया, थक कर भी जो थकना नहीं चाहती, सो पाँडे ज्यू के ही कारण तो। श्रद्धा मिश्रित प्रेम से उन्होंने पाँडे को ओर देखा।

इसी समय सरदार रिपुमर्दन ने तेजी से उनके पास आकर कहा – "काजी खबर मिली है, नदी के पास दो घुड़सवार दिखाई दिये हैं। वे मशाल लिये हैं, इसी ओर आते दीखते हैं। सूबेदार गणेशमान को मैंने जाँच के लिये भेज दिया है।"

"ठीक किया। जाकर स्वयं मालूम करो कौन हैं !" बलभद्र ने कहा।

थोड़ी देर बाद आकर सरदार रिपुमर्दन ने बताया—एक अंग्रेज अफसर और एक हिन्दुस्तानी है। अपने को फिरंगी सेना का दूत बताते हैं। वहीं नदी के पास उन्हें रोक दिया गया है। अब जैसे आपकी आज्ञा से।"

"आधी रात के समय दूत !" बलभद्र ने आश्चर्य प्रकट किया। "अच्छा उन्हें ले आओ। पर पैदल और उत्तर मार्ग से, मुख्य मार्ग से नही। मुख्य द्वार पर तीन बार दस्तक देना।"

सरदार रिपुमर्दन के चले जाने के बाद उन्होंने पाँडे को अपने पास बुलाकर कहा—"शायद फिरंगियों के दूत आये हैं। सरदार रिपुमर्दन उन्हें लेने गये हैं, उत्तर मार्ग से। मुख्य द्वार पर जाकर उनकी प्रतीक्षा करो। वे तीन बार द्वार पर दस्तक देंगे। आते ही मुझे खबर देना।"

लगभग आध घण्टे बाद मुख्य द्वार के तीन बार खटकने की आवाज आई। द्वार के खटकने के साथ ही आस पास का काम रुक गया। उत्सुकता से कनक ने ऊपर दीवार से झाँक कर मुख्य द्वार, जो थोड़ी ही दूर था, देखा। कुछ आदमी दिखाई दिये। फौरन कूद कर वह नीचे आया और बलभद्र के पास पहुँचा। कहा—"द्वार पर कुछ आदमी हैं काजी !"

इसी समय द्वार की ओर से दौड़ कर आते हुये एक बालक ने खबर की पुष्टि की। कहा—"पाँडे ज्यू ने खबर भेजी है प्रभु ! आदमी आ गये हैं। अब आज्ञा हो ?"

कनक की ओर मुड़कर बलभद्र बोले—"कनक उन्हें ससम्मान मेरे पास वहाँ ले आओ।" अपने घर की ओर इंगित कर वे उस ओर मुड़ चले।

कनक के आने पर पाँडे ने द्वार खोला। आगे आगे सरदार रिपुमर्दन, उनके पीछे एक अँग्रेज अफसर, फिर एक हिन्दुस्तानी, उनके पीछे भाला लिये दो नेपाली सैनिक और सबसे पीछे सूबेदार गणेशमान नंगी खुकुरी हाथ में पकड़े आये। कनक उन्हें लेकर बलभद्र के पास गये जो अपने घर के बरामदे में एक ऊंची चौकी पर बैठे थे। बलभद्र के पास पहुँच सरदार रिपुमर्दन व सूबेदार गणेशमान दांयें बांयें खड़े हो गये। दोनों नेपाली सैनिक उसी प्रकार अंग्रेज व हिन्दुस्तानी के पीछे खड़े रहे। एक कदम आगे बढ़कर अंग्रेज ने "सैल्यूट" (सैनिक ढंग से सलाम) किया और हिन्दुस्तानी ने झुककर फर्शी सलाम। फिर अंग्रेज ने हिन्दुस्तानी में कहा—"हाम अँग्रेज फौज का दूट हय। कर्नल माॅबी का चिट्ठी लाया हय।" कहते कहते उसने चिट्ठी अदब से आगे बढ़ा दी।

बलभद्र के अधरों पर हल्की मुस्कान की आभा फैल गई। उन्होंने पत्र ले लिया और खड़े हो गये। एक बार चारों ओर एकत्रित जन-समूह की ओर दृष्टिपात किया और बिना पत्र खोले-पढ़े, उसके टुकड़े टुकड़े करते हुये कहा—"आधा रातिमा चिट्ठी हेर्ने वा जबाफ दिने हाम्रो चलन छैन तर छिटै कर्नल संग युद्ध भूमिमा भेटने छूँ।"—फिर पाँडे की ओर देखकर कहा—"उल्था गरि सुनाइदे।" (अनुवाद करके सुना दो)।

पाँडे ने हिन्दी में कहा—"हमारे अधिपति कहते हैं—'आधी रात में चिट्ठी देखने (पढ़ने) व जवाब देने का हमारा चलन नहीं है, पर

शीघ्र ही तुम्हारे कर्नल से युद्ध भूमि में भेंट होगी।"

अँग्रेज पत्थर की मूर्ति बना अवाक खड़ा रहा। पत्र के फटे हुये टुकड़े उसके पैरों के पास बिखरे पड़े थे। उसने पत्र टुकड़े-टुकड़े होते देखा, पर आँखों पर विश्वास नहीं हो रहा था। उसने, इस छोटे नाममात्र के पहाड़ी गढ़ के पहाड़ी अधिपति के मुख से जो स्पष्ट ललकार सुनी, अपने कानों से सुनकर भी उसपर सहसा विश्वास न हुआ। क्षण भर सकते की दशा में वह आ गया फिर तुरन्त संभला और बोला—"चिट्ठी में लड़ाई नहीं करना को लिखा ठा। टुम हमारा शरण में आ-इंगा टो, नहीं टो टुमारा किला तोड़-फोड़ दिया जायगा।"

उपस्थित जन समूह में खलबली मच गयी। कई हाथ कमर में लटकती खुकुरियों पर जा पड़े। एक स्वर सुनाई दिया—"जय खलंगा-जय नेपाल!"

"हमारे किले को तोड़-फोड़ कर देगा—कहने वाले को यहीं तोड़-फोड़ दें काजी!"—ऊँचा स्वर सुनाई दिया।

पाँडे ने स्थिति की गम्भीरता समझते हुये तुरन्त ऊँचे स्वर में कहा—"शान्त रहिये, शान्त रहिये। यह दूत है और आज तक दूत पर हमारे हथियार कभी नही उठे हैं।"

बलभद्र ने इसी समय एक हाथ ऊपर उठा कर कहा—"ठहरो, शान्त रहो। 'तोड़-फोड़' (मारकाट) करने का तुम्हें मौका मिलेगा युद्धभूमि में! अभी शान्त रहो।"

धीरे-धीरे सभी शान्त हो गये। खुसपुसाहट भी बन्द हो गई और पहले जैसी ही निस्तब्धता छा गई।"

इस घटना से जैसे तनिक भी विचलित न होते हुये उस अंग्रेज ने कहा—"हामारा फौज बौट टाकटवर हय सरदार। हाम टुम को बरबाद कर सकटा हय। टुम अंग्रेज फौज की टाकट को ललकारा, ठीक नहीं किया हय। फिर सोचना माँगटा—सोचो।"

"हद से आगे मत बढ़ो दूत! क्या ठीक है क्या नहीं, मैं खूब

समझता हूँ। तुम्हें समझाने की जरुरत नहीं। तुम दूत बन कर आये हो! खबर ले कर आये हो न? इसलिये जवाब ले कर सही सलामत तुम्हें लौट जाना है। जाओ।"

बलभद्र ने सूबेदार गणेशमान की ओर इशारा किया, और कहा—"नदी तक इन्हें सही सलामत छोड़ आओ।"

सूबेदार गणेशमान आगे बढ़े। आँख के इशारे से उन्होंने अंग्रेज को चलने का संकेत किया। अँग्रेज ने पाँवों के समीप पड़े पत्र के फटे टुकड़े बटोरे, फिर एटैन्शन हो सलाम किया और फौजी ढंग से मुड़कर चलने लगा। हिन्दुस्तानी ने जल्दी से सलाम किया और पीछे-पीछे हो लिया।

बलभद्र ने पास खड़े सरदार रिपुमर्दन से कुछ कहा। वे फौरन वहाँ से चले गये। आस पास खड़े स्त्री पुरुषों की ओर देखकर बलभद्र ने क्षण भर सोचा फिर धीरे-धीरे गम्भीर स्वर में कहने लगे "नेपाल के सपूतों! परीक्षा का समय अत्यन्त समीप आ पहुँचा है। सम्भव है कल से ही आँधी चलने लगे। हम इससे विचलित नहीं होंगे—नहीं हो सकते। हम उनके प्रबल से प्रबल प्रहार को मर्दों की तरह छाती पर झेलेंगे—सहेंगे। परिणाम की ओर हमारी दृष्टि न होगी। हम अपना कर्त्तव्य पालन करेंगे। मुझे इसका पूर्ण विश्वास है कि इस खलंगा का एक-एक आदमी, एक-एक प्राणी, अन्तिम सांस तक अपने कर्त्तव्य पथ से विचलित न होगा। नेपाल की पहाड़ी चट्टानों की तरह हम टूटना जानते हैं, झुकना नहीं।"

"हम चट्टानों की तरह टूट जायेंगे पर झुकेंगे नहीं काजी!"—कई लोगों ने कहा।

इसी समय सरदार रिपुमर्दन ने निकट आ कर कहा—"काजी आपकी आज्ञानुसार दो नेपाली गुप्तचर मैंने दूत के पीछे लगा दिये हैं।"

"ठीक है।" बलभद्र ने उनसे कहा, फिर जन समूह की ओर देख

कर कहने लये—"साथियो, शत्रु बलवान हैं.........।"

"तब तो युद्ध रूपी यज्ञ में अधिक आनन्द आयेगा"—कनक ने बात काट तुरन्त कहा। निकट खड़ी माया ने प्रशंसा से उसकी ओर देखा। "निर्बल शत्रु से क्या लड़ना काजी! वीरता तो बलवान शत्रु से लड़ने में ही है।"—कनक ने अपनी बात पूरी की।

"और काजी हम भी कम बलवान नहीं हैं। हममें आत्मा का बल है, परमात्मा का बल है, देश प्रेम का बल है, श्री ५ महाराजधिराज के आशीर्वाद का बल है, देव पशुपतिनाथ, के वरद हस्त का बल है। हम शत्रु से भी बलबान हैं काजी!" पाँडे ने कहा।

"हम शत्रु से भी बलवान हैं।" कई कंठों ने दुहराया।

"मैं जानता हूं।"—बलभद्र बोले—"सबेरे शिवालिक के अपने गुप्तचरों से प्राप्त समाचार से ज्ञात हुआ है, फिरंगी सेना की शक्ति लगभग तीन हजार है। युद्ध सामग्री से वे भली-भान्ति सुसज्जित हैं! तुम जानते ही हो, यह संख्या, यह शक्ति हमें आतंकित नहीं कर सकती। पर-पर दिन भर सोचने के बाद रह-रह कर एक विचार मेरे मानसपट पर उभर आता है—खलंगा को आइमाई र केटाकेटी! (छावनी के स्त्री व बालक) पुरुष होने के नाते यह भी तो हमारा पावन कर्त्तव्य है, स्त्री बच्चो की सुरक्षा करना! युद्ध की भयंकर ज्वाला में मानव के कोमलतम रूप स्त्री-बच्चों को कैसे झोंक दूँ? अतः चाहता हूँ सरदार रिपुमर्दन खलंगा के समस्त स्त्री बच्चों को आज रातों-रात तारागढ़ पहुँचा दें।"

"स्त्री पुरुष दोनों मिलकर मानिस (मानव) के पूर्ण रूप होते हैं काजी! कैसे सम्भव है कि सुख-दुख में सदा छाया की तरह साथ रहने वाली पत्नी, दुख के समय पति को छोड़ दे? कैसे सम्भव है काजी कि बहन भाई को, पुत्री पिता को, प्रेयसी प्रिय को माता-पुत्र को, युद्ध की ज्वाला में झुलसता छोड़, स्वयं आश्रय की शीतल छाया ले?" —पाँडे ने कहा।

माया के विचारों को जैसे बल मिला। कहने लगी—"बुवा तारागढ़? आप हमें तारागढ़ भेजना चाहते हैं। ठीक है, हम आपकी आज्ञा का पालन करेंगी। हम तारागढ़ जायँगी; पर बुवा सच्चा तारागढ़ तो आकाश में है। हम वहां पहुँचेंगी, पर इसी रास्ते से—"उसने खलंगा की भूमि की ओर संकेत किया— "इसी रास्ते से, इसी भूमि पर लेट कर!"

"हामी जान्नौ (हम नहीं जायेंगे)।" एक स्त्री ने कहा।

"हामी जान्नौ।" —बहुतों ने दुहराया।

एक स्त्री ने जोर से कहा—"हम सब सुख-दुख में साथ रहे, साथ-साथ खेतों में धान लगाया, साथ-साथ सभी काम किये, साथ-साथ दीवार उठायी, साथ-साथ पसीना बहाया। अब खंलगा में रहने के समय, परीक्षा के समय हम फिरंगियों से डर कर भाग जायें? आज तक खून पसीना एक कर किये काम का काजी, यह पुरस्कार? हामी जान्नौ!"

"हामी जान्नौ।" कई स्त्रियों ने ऊँचे स्वर में कहा।

"अच्छा तो बच्चे जायें" —बलभद्र ने धीरे-धीरे कहा।

बच्चों ने हल्ला मचाया—"काजी हामीलाइ न पठाउ, हामी जान्नौ।" (काजी हमें न भेजो, हम नहीं जायेंगे।)

बारह वर्षीय एक बालक सुरेन्द्र ने आगे बढ़ कर कहा—"काजी, हमें मृत्यु का डर नहीं है। हम मरने से नहीं डरते। देश के लिये हमारे माता-पिता लड़ने से नहीं डरते, मरने से नहीं डरते, फिर हम कैसे डरें? हम अपने माता-पिता के साथ शत्रु के अत्याचार के विरोध में लड़ेंगे। हमें भी लड़ने का हुकुम बकसा जाय।"

कई बालकों ने आगे बढ़ कर कहा- "हाँ काजी, हमें लड़ने का हुकुम बकसा जाय। तलवार, खुकुरी आदि हमें मिलें, हम लड़ेंगे। शत्रु के अत्याचार का विरोध करेंगे। हम वीर माता के दूध और वीर पिता की टोपी को कलंकित नहीं होने देंगे। काजी हम नहीं जायेंगे, यहीं

देश पर मर मिटकर वीर गति पायेंगे ।"

सुनकर बलभद्र की आँखें सजल हो गयीं। सोचा, हम मर भी जायेंगे तो देश को बचाने के लिये ये बाकी रहेंगे। शत्रु के अत्याचार का उचित-अनुचित का, देश के प्रति कर्त्तव्य का, इनको भी ज्ञान है! स्वप्न में भी हमें हारना नहीं होगा।"

"हुक्म बकसा जाय काजी!"—बालकों ने फिर हल्ला मचाया।

"तलवार खुकुरी न सही, पत्थर कला तो इन्हें दे सकते हैं काजी!"—पाँडे ने कहा—"दीवार के पास रखे पत्थरों को चलाने का काम इन्हें सरलता से दिया जा सकता है प्रभु। धुयना (गोपिया) पर गोल पत्थर फेंकने का अच्छा अभ्यास है इन्हें।"

"अच्छा!" बलभद्र ने कहा और प्रसन्नता से बालकों ने किलकारी मारी। उपस्थित नर नारियों ने भी उस प्रसन्नता प्रदर्शन में सहयोग दिया।

कुछ ऊँचे स्वर से बलभद्र ने कहा—साथियो, मुझे तुम सबसे ऐसी ही आशा थी। इस खलंगा के अधिनायक की हैसियत से तुम्हारी सुरक्षा का भार मुझ पर था, विशेषकर स्त्री बच्चों का! तुम्हारी रक्षा करना मेरा कर्त्तव्य है। मैंने तारागढ़ भेजने का निश्चय कर उसे पूरा किया। और तुमने अपने कर्त्तव्य का पालन कर जाने से मना कर दिया। हम दोनों ने अपने-अपने कर्त्तव्य पालन किये हैं और अंत तक करते रहेंगे! तुम्हारे निश्चय से मुझे कितना बल मिला है, मैं शब्दों में उसका वर्णन नहीं कर सकता। हम सत्य-पथ के राही है, पशुपतिनाथ हमारे सहायक हैं। जय नेपाली! जय नेपाल!"

"जय नेपाल!" उपस्थित सभी कंठों से सम्मिलित स्वर उठा और नालापानी की पहाड़ियों से टकराकर गूँज उठा।

गूँज अभी धीमी न होने पाई थी कि सभी प्रसन्नता पूर्वक फिर पर्खाल के काम में संलग्न हो गये।

ग्यारह

रात के लगभग दो बजे का समय था। कर्नल मॉबी अपने शिविर में लेटे बड़ा सुखद स्वप्न देख रहे थे—बलभद्र ने घबरा कर आत्मसमर्पण कर दिया है। किले के विशाल अर्द्ध गोलाकार मुख्य द्वार पर उन्होंने ब्रिटिश सत्ता का प्रतीक यूनियन जैक (राष्ट्रीय झंडा) फहराया। प्रभात की प्रथम सुनहली रश्मियों में वह झंडा अत्यन्त उज्ज्वल हो चमकने लगा तथा प्रातः कालीन समीर के मृदु झोंकों में बड़े गर्व के साथ लहरा उठा। बिगुलर्स (बिगुल बजाने वालों) ने बिगुल अपने होंठों से लगाये और उनका पंचम स्वर बन प्रान्त में गूंज कर पहाड़ियों से टकराने लगा। अब उनका 'नेशनल एन्थम' (राष्ट्रीय गीत) का धुन बजने लगा। वे तथा सभी अफसर एटेन्शन में खड़े सलामी दे रहे हैं। अंग्रेज सेना के जवान नाना अस्त्र-शस्त्र धारण किये मूर्ति की तरह किले भर में स्थान स्थान पर खड़े हैं। बलभद्र व उनके अफसर निहत्थे सिर झुकाये काठ के पुतलों की तरह निर्जीव से, उनके सामने खड़े हैं।

उनके चारों ओर बंदूकों पर संगीन ताने गोरा पल्टन के जवान खड़े हैं। कुछ दूर इसी प्रकार नेपाली सिपाही निहत्थे घिरे खड़े हैं। राष्ट्रीय गीत का धुन अभी अभी समाप्त हो चुका है। वे आगे, दो कदम, बलभद्र की ओर बढ़ रहे हैं। वे अब विजय-गौरव दीप्त मुखमण्डल लिये गम्भीर स्वर में कह रहे हैं—"कैप्टन बलभद्र, इस नेपाली किले कलंगा का कमांडर (अधिनायक) मैं ऐलान करता हूँ कि तुम्हारे 'अनकण्डीशनल सरन्डर' (बिना शर्त के आत्मसमर्पण) करने से इस कलंगा के किले पर आज से अंग्रेज कम्पनी सरकार का अधि··· ··· ··· ···।"

"सर ! सर !" (श्रीमान्, श्रीमान् !)—ले० कर्नल कारपेन्टर ने निद्रा भंग कर उन्हें जगाते हुये कहा।

"यस !" (हाँ !) कहते कहते कर्नल मॉबी शैया पर उठ कर बैठ गये। हाथ बढ़ा, पास रखे लालटेन के धीमे प्रकाश को तेज किया, आंखें मली और फिर कहा—"यस !" (हाँ क्या है ?)

"लेफ्टिनेन्ट एलिस इज बैक सर।" (ले० एलिस वापस आ गये हैं श्रीमान् !)

"जस्ट ए मिनिट। आई विल बी रैडी इन नो टाइम।" (बस एक मिनट। मैं शीघ्र ही तैयार होता हूँ।) कहते कहते वे उठकर बूट पहनने लगे। पहनते पहनते कहा—"ब्रिंग हिम इन एबाउट फाइव मिनिट्स।" (लगभग पांच मिनट बाद उसे ले आना)

भैरी वैल सर।"(जी बहुत अच्छा!) कहकर ले० कर्नल कारपेन्टर ने सलाम किया और बाहर चले गये।

दो तीन मिनट में ही कर्नल मॉबी कपड़े पहन कर तैयार हो गये। कपड़े पहनते समय सुखद स्वप्न की याद आई। स्वप्न साकार होने जा रहा है, सोच वह कुछ मुस्कराये। उनका मन उल्लसित हो उठा।

जब ठीक पांच मिनट बाद ले० कर्नल कारपेन्टर, लेफ्टिनेन्ट एलिस को लिये उनके शिविर में आये, उस समय गम्भीर मुद्रा बनाये कर्नल मॉबी मेज पर खुले एक मानचित्र का, लालटेन के प्रकाश में, अवलोकन

करते दिखाई दिये ।

ले० एलिस ने उनके सामने जाकर सैनिक अनुशासन के अनुसार सलाम किया और एटेंन्शन खड़े होकर कहा—"ले० एलिस रिर्पोटिंग सर, मिशन ए फैलियर ! आई एम सॉरी सर ।" (मैं ले० एलिस रिपोर्ट दे रहा हूँ । कार्य असफल रहा, असफलता का मुझे दुख है ।)

और वाक्य के समाप्त होते ही बांयें हाथ को आगे बढ़ा, हथेली खोलकर सामने कर दिया, जिसमें पत्र के फटे टुकड़े पड़े थे ।

"ह्वाट (क्या)?"

कर्नल मॉवी को सहसा अपने कानों पर विश्वास न हुआ । उन्होंने अविश्वास से ले० एलिस की ओर देखा । वह एटेंन्शन (सावधानी) की मुद्रा में भावशून्य आनन लिये मूर्तिवत् खड़ा था । धीरे धीरे उनकी दृष्टि ले० एलिस के आगे बाँयें हथेली पर पड़ी, जिस पर कागज के फटे टुकड़े लालटेन के प्रकाश में स्पष्ट दिखाई दे रहे थे । एक लहमें वह स्थिर रहे फिर हाथ बढ़ा पत्र के टुकड़े ले कर देखे और उनको देखते देखते बिना सिर उठाये बोले—"डिटेल्स !" (पूरा विवरण दो)

ले० एलिस ने सारी घटना दुहरा दी । बताया किस तरह नदी पर ही वे रोक दिये गये । किस तरह पहाड़ी की टेढ़ी मेढ़ी पगडण्डी पर चलवा कर, वे बलभद्र के पास ले जाये गये । किस तरह बलभद्र ने बिना पत्र को पढ़े ही, उसके टुकड़े टुकड़े कर, दिये और कहा 'पत्र पढ़ने व जवाब देने का यह उचित समय नहीं है ।' किस तरह उन्होंने स्वयं बलभद्र को हिन्दुस्तानी में पत्र का आशय बताया और एक बार सोचने को कहा । किस तरह बलभद्र ने उन्हें झिड़का । किस तरह बलभद्र ने शीघ्र ही समर भूमि में हमसे भेंट करने की गर्जना की और किस तरह फिर उन्हें वापस नदी के पास छोड़ सीधा लौट जाने को कहा गया ।

"अर्नबलीभेबल (अविश्वसनीय ।) ।" एक छोटे, हीन पहाड़ी किले के असभ्य जंगली मुट्ठी भर सैनिक हमारी विशाल सेना की शक्ति की अवहेलना करें ? एक छोटा सा पहाड़ी चूहा, महाबली ब्रिटिश

वनराज को ललकारे ? "द इम्पॉसिब्बल हैज हैपन्ड। वी विल शो दैम द पॉसिबिलिटी नाव। (असम्भव, सम्भव हो गया है। जो सम्भव हो सकता है वह अब, हम उन्हें दिखायेंगे) हम उनके किले को नष्ट भ्रष्ट कर मिट्टी में मिला देंगे। हम तोपों की भयंकर गोलाबारी से एक ही दिन में उनके होशहवास ठिकाने लगा देंगे।" क्रोध से उनका गोरा मुंह लाल हो उठा। ले० कर्नल कारपेन्टर व ले० एलिस मूर्तिवत् खड़े रहे।

"ले० एलिस तुम जा सकते हो। ले० कर्नल कारपेन्टर तुम ठहरो।"

ले० एलिस ने सलाम किया और शिविर से बाहर चले गये।

एक क्षण तक मेज पर पत्र के फटे टुकड़ों को देखकर कर्नल मॉबी ने कहा—"ले० कर्नल कारपेन्टर! सवेरे पौ फटने से पूर्व ही दो आदमी सहारनपुर भेजकर जनरल गिलेस्पी को खबर कर दो। सबेरे ही हम किले पर आक्रमण कर देंगे। रिस्पना नदी के उत्तर में कुछ समतल भूमि है, एकदम किले के सामने! वहीं तोप लगाकर गोलाबारी करेंगे। चारों भारी तोप हाथी पर और छः तोप छोटे वाले, घोड़ों पर वहाँ ले जाना होगा।"

"जी बहुत अच्छा।"

"सवेरे से ही तोपों से हम इतनी भयंकर मार मचायेंगे कि इन जंगली नेपालियों को पता चल जायेगा कि हमारी शरण में न आकर कितनी मूर्खता की है उन्होंने! दिन भर तोप की गोलाबारी करेंगे तो शाम तक दौड़े आयेंगे हमारे पांव चूमने!"

एकाएक वह रुक गये। एक नया विचार आया! गोलाबारी से घबरा कर सचमुच शाम तक वे हार लें तो! तो जनरल गिलेस्पी को सवेरे आदमी भेजकर खबर देने की क्या जरूरत? संध्या को सफलता का सुखद समाचार ही क्यों न भेजा जाय? पर क्या सचमुच तोपों की भीषण गोलाबारी से शत्रु आतंकित व भयभीत हो हमारे चरण

चूम सकता है ?

उन्होंने कुछ सोचते हुए धीरे धीरे कहा—"ले० कर्नल, तुम क्या सोचते हो ? यदि दिन भर, तोपों से किले में आग बरसाई जाय तो क्या किले को हम काफी क्षति नहीं पहुँचा सकते ? क्या इससे शत्रु की हिम्मत पस्त नहीं हो सकती ? क्या यह सम्भव नहीं कि वे शाम तक घुटने टेक दें ?"

ले० कर्नल कारपेन्टर ने कहा—"हमारे तोपखाने की जबरदस्त मार से बड़ों-बड़ों को पसीना आ गया है सर ! इससे आप अनभिज्ञ नहीं। इधर हमारे तोप गरजेंगे उधर शत्रुदल के दिलों में दरारें पड़ेंगी। इतने 'वैल ट्रैन्ड' (सुशिक्षित) है हमारे "गनर्स" (तोपची) कि एक-एक गोला अपने लक्ष्य पर फूट कर प्रलय मचा देगा। किले की दीवार कच्ची है, अपूर्ण है ! गोलों की पहली वर्षा में ही टूक-टूक होकर गिर पड़ेगी। फिर क्या रह जायगा ? उनकी सुरक्षा का प्रमुख साधन—दीवार के टूटते ही शत्रु सेना की हिम्मत भी टूट जायगी ! वे घुटने टेक देंगे। यदि नहीं तो शाम तक पैदल सेना से धावा बोलकर उनके लड़खड़ाते पाँवों को उखाड़, आनन फानन में किले पर अधिकार जमा सकते हैं।"

प्रसन्न हो कर्नल मॉबी ने कहा—"मेरा भी यही विचार है। तो तुम सवेरे जनरल के पास आदमी न भेजो। शाम को आदमी भेजेंगे। ९९ प्रतिशत विश्वास तो यही है कि शत्रु घुटने टेक देगा। यदि शेष एक प्रतिशत वाली बात हुई तो भी जनरल को खबर भेज देंगे। कैसा ?"

"गुड आइडिया सर" (उत्तम विचार है श्रीमान्)।"—ले० कर्नल कारपेन्टर ने कहा।

"और मेरा विचार है, सात बजे सबेरे हम कूच करें। काफी समय मिल जायेगा। क्या कहते हो ?"

"जी ठीक है।"

"तो जाकर सब तैयारी करो। तब तक मैं मैप स्टेडी (मानचित्र का अध्ययन) करता हूँ।"

"जी बहुत अच्छा।" कह कर ले० कर्नल कारपेन्टर विदा हुए।

अभी सूर्य की किरणों में गरमी न आई थी कि कर्नल मॉबी अपने दल को लेकर रिस्पना नदी के उत्तर की समतल भूमि की ओर कूच कर गये। इस दल में तोपखाने के केवल सौ जवान, हिन्दुस्तानी पैदल सेना के सौ जवान और दस तोप थे। इतना ही कर्नल मॉबी ने प्रर्याप्त समझा क्योंकि उनका दृढ़ विश्वास था कि तोपों के कुछ गोलों की मार से ही किले की दीवार क्षतिग्रस्त हो जायेगी तथा शत्रु भयभीत! ले० कर्नल कारपेन्टर भी साथ थे। लगभग एक घंटे बाद दल अपने लक्ष्य पर पहुँचा। समतल जमीन के आगे नाले के पास कुछ गोलाकार रूप दे तोपों को जमा दिया गया। हिन्दुस्तानी पैदल के जवान व कुछ तोपखाने के जवान नीचे नाले में उतर बंदूकों पर संगीन लगाये, बड़ी सावधानी से नदी की ओर बढ़ने लगे।

उधर खलंगा में बलभद्र बेखबर नहीं थे। रात दूत के पीछे गये गुप्तचरों ने कुछ घंटे पहले ही इस दल के चलने की सूचना दे दी थी। मुख्य द्वार पर जिजल तोप आग उगलने के लिए तैयार था। स्वयं बलभद्र वहाँ की देखरेख कर रहे थे। नीचे की ओर रखे छोटे तोपों के मुँह को घुमाकर लक्ष्य की ओर कर रहे थे सरदार रिपुमर्दन! कनक बीस-पच्चीस नेपाली सैनिकों के साथ बंदूक लिए दीवार के पास, बाहर की ओर, मार्ग की सुरक्षा करते हुए साल वृक्षो एवं झाड़ियों की आड़ में तैयार बैठे थे। किले की दीवार के पास जहाँ पत्थर के ढेर थे, वहाँ चार-चार, पाँच-पाँच औरतें खड़ी थीं। कमलकान्त पाँडे इनका संचालन कर रहे थे। खलंगा के भीतर के कुछ ऊँचे पेड़ो पर बच्चे 'धुयंत्रा' लिये चढ़े बैठे थे। पर्खाल के भीतर और बाहर, स्थान-स्थात पर खुकुरी, माला तलवार आदि लिये नैपाली सैनिक तैयार थे।

कनक से खबर पा पाँडे ने मुख्य द्वार पर जा बलभद्र को नाले से नदी की ओर बढ़ते शत्रु दल के बारे में बताया।

"कोई चिन्ता नहीं। सैनिकों से कह दो, उन्हें निकट आने देना। जब वे पहाड़ी पर चढ़ें तब उन पर आक्रमण करें। बाहर वालों से कहना, तब तक अपने को छिपाये रखें, जब तक शत्रु निकट न आ जाय। निकट आने पर एकाएक हमला कर देना। भीतर वाले भी इसी तरह निकट आने पर ही पत्थर, भाले, खुकुरी आदि से आक्रमण करें। समय आने पर यहाँ भीतर वालों को मैं स्वयं बताऊँगा। और हाँ आइमाई र केटाकेटी हरुलाइ करै लागे पछि खटाउनू। उनिको जम्मा तिम्रो माथि दिएछूँ जाउ (औरतों और बच्चों को विवश होने पर ही उनके काम में लगाना। उनकी जिम्मेदारी तुम्हें दिये हूँ, जाओ)

"हौस काजी"—कहकर पाँडे ने शीघ्रता से प्रस्थान किया।

कुछ क्षण पश्चात ही फिरंगियों की ओर से पहला तोप गरज उठा। साथ ही बलभद्र का स्वर गूंज उठा—"होशियार!" क्षण भर बाद ही फिरंगियों का दूसरा, फिर तीसरा और चौथा तोप भी गरज उठा। जिजल तोप के तोपचियों ने बलभद्र से 'हान्न' (मार) आज्ञा पाकर उसे चलाया। साथ ही पर्खाल के छोटे तोप भी गरज उठे। अंग्रेजों की ओर से रह रह कर तोप गरज उठते पर पहाड़ी की ऊंचाई व दूरी बहुत थी। गोले नीचे, बहुत नीचे नदी से कुछ ऊपर फटते। उधर नेपालियों के तोप भी दूरी के कारण लक्ष्य पर मार नहीं कर पाते, पर ऊपर से नीचे की ओर चलने के कारण कुछ अधिक दूरी पर पड़ते। इस तरह शत्रु और अपने तोपों, दोनों की मार में अपने को पा, नाले व नदी में उतरी अंग्रेजों की सेना, घिर कर घबरा उठी। फौरन पीछे की ओर हटी। कर्नल मॉबी के पास खबर पहुँचा दी गई। कर्नल मॉबी चिंता में पड़ गये। गोलाबारी करते रहने का आदेश दे सोचने लगे।

लगभग एक घन्टे तक क्षण क्षण भर में अंग्रेजों के तोप गरज

उठते। भीतर किले से उनका मुँहतोड़ जवाब दिया जाता। पर न किले की जान-माल की, कोई हानि हुई, न फिरंगी सेना की। कुछ हार, कुछ खीज कर कर्नल मॉबी ने गोलाबारी बंद करवा दी।

इधर अंग्रेजों के तोप चुप हुये उधर बलभद्र ने भी गोलाबारी रुकवा दी। कुछ देर, फिर से शत्रु के तोपों के चलने की प्रतीक्षा की, पर जब वे न चले तो पाँडे को बुलवा कर कहा,—"पाँडे! बाहर सैनिकों का जोर बढ़ा दो। शायद अब वे हमला करें और मार्ग की रक्षा का विशेष ध्यान रहे। शत्रु जब पहाड़ी पर कुछ ऊपर चढ़ आये तभी आक्रमण हो।"

इसी समय सरदार रिपुमर्दन भागते हुये आये। आते ही उन्होंने कहा—"काजी, शत्रु फर्किन लाग्यो काजी शत्रु पीछे लौटने लगा है) तोप उन्होंने पीछे हटा लिए हैं।"

मुख्य द्वार की छोटी लोहे की खिड़की खोल बलभद्र ने देखा। सचमुच ही तोप पीछे हट गये थे। हाथी पर लदते तोप देख प्रसन्न हो कहा "हाँ सरदार, लगता है पीछे हट रहे हैं। पर शायद और निकट लाकर नीचे नाले में तोप लगा दें। गुप्तचर भेज कर बात की सत्यता मालूम करो।"

सरदार रिपुमर्दन के चले जाने के बाद पाँडे ने कहा—"प्रभु!" शत्रु लौट रहा है, लगता है अधिक वेग से उमड़ने के लिये। मैदान छोड़ यदि शत्रु इस समय जा रहा है तो आगे बढ़ उस पर आक्रमण कर उसे नष्ट न कर दिया जाय?"

"छी: ! मैदान छोड़ जाने वाले मुर्दों को मारेगा? नहीं, न यह वीरता होगी न धर्म-युद्ध। न हम भाग पीठ पर घाव खाना चाहते हैं, न भागते की पीठ पर घाव करना चाहते हैं। सम्मुख लड़ते शत्रु की छाती पर घाव करना या स्वयं छाती पर घाव खाना, यही वीरों के लिये अपेक्षित है। निहत्थों पर जैसे हाथ उठाना अधर्म हे वैसे ही भागते पर हथियार उठाना अधर्म है पाँडे! नहीं हम अधर्म युद्ध नहीं करेंगे।"

पाँडे ने एक लहमे चुप रह कर कहा—"उचित कहा है आपने प्रभु ! मुझे क्षमा करें।''

"अभी ढील देना उचित नहीं। जाओ अपना काम देखो और जो मैंने पहले कहा है उसे पूर्ण करो। सरदारों व सैनिकों को सजग रखना।"

पाँडे के जाने के काफी देर बाद एक गुप्तचर ने आकर बताया। आंग्ल सेना रिस्पना पार कर अपने शिविर की ओर लौट रही है। दूसरा गुप्तचर पीछे ही लगा है, आगे का समाचार वह देगा।

बलभद्र ने तुरन्त यह सुखद समाचार फैला दिया, पर अपने अपने स्थानों पर, दूसरी आज्ञा न पाने तक डटे रहने का आदेश दिया।

उधर, नेपालियों को इस तरह डट कर युद्ध करते देख, तथा भविष्य में कड़े विरोध का आभास पा, कर्नल मॉबी ने शिविर में पहुँचते ही तुरन्त दो आदमियों को सहारनपुर रवाना कर जनरल गिलेस्पी को खबर भेजी।

धौंस में ही किले दबोचने की अपनी आशा को टुकड़े-टुकड़े होते, तथा अपने स्वप्न को साकार न होते देख, कर्नल मॉबी लज्जा और ग्लानि से भर उठे।

बारह

२६ अक्टूबर की शाम को ससैन्य देहरादून पहुँच जनरल गिलेस्पी ने कर्नल मॉबी को चकित कर दिया। अभी कल दोपहर ही तो खबर भेजी थी। हरकारे को जाने में कुछ भी समय लगा होगा। पूछने पर ज्ञात हुआ कि शेष सेना सहित, जनरल टिमली पार कर दून घाटी में प्रवेश कर चुके थे। वे वहां से पछवादून के कालसी, विराट आदि स्थानों से जा उधर नेपाली हलचल आदि की जांच करने वाले थे, क्योंकि लुधियाना से चलने वाले चौथे दल ने उधर से आ तीसरे दल से मिल उत्तराखंड में फैली नेपाली सत्ता के दो टुकड़े करने थे। कलंगा (खलंगा) पर प्रथम आक्रमण की असफलता का समाचार पा, तथा यह सोचकर कि कर्नल मॉबी के वापस लौट आने के कारण नेपालियों का उत्साह बढ़ जायगा, वे तुरन्त इधर चले आये। वैसे यमुनापार नेपालियों के अधिकृत प्रदेशों की जानकारी सामरिक दृष्टिकोण से अत्यन्त महत्वपूर्ण थी, पर इधर प्रतिष्ठा का प्रश्न अधिक महत्वपूर्ण था, अतः वे इसी

और शीघ्रातिशीघ्र आये।

दूसरे दिन सूर्य निकलने से बहुत पहले ही जनरल गिलेस्पी ने कर्नल मॉबी के साथ जाकर स्वयं उस समतल भूमि का निरीक्षण किया। सामने उस नाले और नदी को देखा। उस स्थान का एक खाका भी बनाया। उसमें कलंगा (खलंगा) दुर्ग की नाले से, नदी से और समतल भूमि से दूरी का अनुमान लगा कर लिखा। पहाड़ी की ऊँचाई लम्बाई आदि अनेक बातें भी नोट कीं। उत्तर की ओर जा कर भी देखा और दक्षिण की ओर भी ध्यान पूर्वक देखा। सभी आवश्यक जान पड़ती बातें नोट कर लीं।

शिविर में लौट कर उन्होंने पहले योजना बनाई और बाद में कर्नल मॉबी और ले० कर्नल कारपेन्टर को समझाया। कहा—"इस बार पूरी तैयारी से किले पर आक्रमण करना है। समतल भूमि पर नाले के बिलकुल पास यहाँ-यहाँ—" उन्होंने सवेरे के खींचे खाके पर अंकित × चिन्ह पर उंगली रखते हुये कहा—"बारह इंची तोपें लगें और इसके दोनों ओर दो भारी तोपें। नाले के पास यहाँ—"उन्होंने ० चिह्न की ओर संकेत कर कहा—"छोटी छः इंची तोपें लगें। इधर इस स्थान पर आड़ का प्रबन्ध करना आवश्यक होगा। पहले पत्थर फिर रेत की भरी बोरियां उस पर रख काफी आड़ बनाई जाय। समतल भूमि के उत्तर की ओर यहाँ और दक्षिण की ओर नालापानी ग्राम से इधर, इन जगहों पर भी इसी तरह आड़ बनाये जाँय।"

उन्होंने खाके पर लगे हुये निशान समझाये।

"इस तरह के आड़ बनाने का काम आज ही से शुरू कर दो। शत्रुओं से विरोध मिलने की सम्भावना है, सो पहले कुछ तोप और बंदूकची इस तरह फैला दो कि आड़ बनाने वालों को 'कभर' (बचाव) करते हुये उनका सामना किया जा सके। नेटिव इन्फैन्ट्री (हिन्दुस्तानी पैदल सेना) के अधिक से अधिक जवान लेकर निज विशेष देख रेख में

आड़ का काम, आप शुरू करें, ले० कर्नल कारपेन्टर !"

"बहुत अच्छा सर!"—ले० कर्नल कारपेन्टर ने कहा।

"और मेरा विचार है पूरी सेना के कुछ टुकड़े कर, एक साथ, एक ही समय में कई ओर से किले पर आक्रमण कर दिया जाय। इस तरह एक ही बार में शत्रुओं को कई मोर्चे लेने होंगे। उनकी संख्या बहुत कम है, अतः इस तरह जब वे बंट जायेंगे तब उन्हें तोड़ना हमारे लिये बहुत आसान हो जायगा। साथ ही कोई न कोई दल किले में प्रवेश कर उनके आन्तरिक संगठन को तहस नहस कर उनके पतन को तीव्र गति दे सकता है। क्या कहते हैं आप लोग ?"

"उत्तम विचार है सर, बहुत उत्तम।" कर्नल मॉबी ने कहा।

"मैं भी कर्नल मॉबी के विचार से पूर्ण सहमत हूं सर।" ले० कर्नल कारपेन्टर बोले।

"इस पर मैं, अभी पूर्ण विचार कर योजना बनाऊँगा। सबसे पहले तोपों के मोर्चे अच्छी तरह लग जाने चाहिएँ। जानता हूँ किले की दूरी व ऊंचाई काफी है, फिर भी तोप तोप ही है, किले के जितने निकट लग सके अच्छा है। लड़ाई का रुख देख कर हो सका तो कुछ हल्के तोप आगे बढ़ायेंगे।" कुछ रुककर उन्होंने फिर कहा—"तो ले० कर्नल कारपेन्टर, आड़ बनाते समय शत्रु से विरोध मिले तो डट कर सामना करना और मुझे तुरन्त खबर करना। याद रहे आड़ (मोर्चा) सुदृढ़ बने। दो दिन लग जाँय, चिन्ता नहीं, पर बनने चाहिएँ 'स्ट्रॉगं एण्ड सेफ।' (दृढ़ व सुरक्षित) अब आप जा सकते हैं।"

"थैंक यू सर।" (धन्यवाद श्रीमान) ले० कर्नल कारपेन्टर बोले। खड़े होकर सलाम किया और शिविर से बाहर चले गये।

"और आप कर्नल मॉबी ! कृपा कर इस खाके के तीन चार नकल कर इसमें लगे सभी निशान लगा दें। एक ले० कर्नल कारपेन्टर को उनके जाने से पहले दे दें, शेष यहाँ मुझे भिजवा दें। आप और मैं शाम को काम देखने जायेंगे।"

"बहुत अच्छा सर ।" कह कर कर्नल मॉबी उठ कर खड़े हो गये खाका उठाया और सलाम करके चले गये ।

नाले के पास आड़ बनाते हुये जब ले० कर्नल कारपेन्टर को आशा के विपरीत शत्रुओं से किसी प्रकार का विरोध न मिला, तो वे चकित हो गये । चलो अच्छा ही हुआ, सोच उन्होंने सारा ध्यान काम पर ही जमा लिया और जनरल गिलेस्पी के संध्या समय आने तक काफी कुछ काम कर लिया था । जनरल गिलस्पी ने देखा । कल तक निश्चय सारी तैयारी पूरी हो जायगी । प्रसन्न हुए और लौट गये । सूर्यास्त के बाद ले० कर्नल कारपेन्टर और उनका दल भी, दून-अपने शिविर में लौट आया ।

उस रात जनरल गिलेस्पी ने खाने के बाद काफी देर तक जाग कर आक्रमण की योजना बनाई । 'कलंगा' की पहाड़ी की लम्बाई आधे मील से कुछ अधिक थी, इसको ध्यान में रख उन्होंने सेना की चार मुख्य टुकड़ियां बना, एकबारगी सभी ओर से आक्रमण करने का निश्चय किया । इन दलों को ताकत देने के लिये एक और 'रिजर्व' (सुरक्षित दल) टुकड़ी भी बनाने की सोची, जो बाद में आक्रमण करेगी ।

अपनी सेना की सांख्यिक शक्ति एवं अफसरों की पूरी सूची उनके पास थी । उसकी सहायता से खूब सोच समझ कर उन्होंने सेना का इस प्रकार विभाजन किया:—

आगे बढ़ किले पर एकदम आक्रमण करने वाले चार दल—

पहला दल । ले०कर्नल कारपेन्टर के नेतृत्व में—शक्ति ६११ जवान, अफसरों सहित ।

दूसरा दल । कैप्टन फास्ट के नेतृत्व में—शक्ति ३६३ जवान, अफसरों सहित ।

तीसरा दल । मेजर कैली के नैतृत्व में—शक्ति ५४१ जवान, अफसरों सहित ।

चौथा दल। कैप्टन कैम्पबैल के नेतृत्व में—शक्ति २८३ जवान, अफसरों सहित।

पांचवाँ रिजर्व दल। मेजर लडलों के नेतृत्व में—शक्ति ६३६ जवान अफसरों सहित।

शेष सेना शिविर में रहे।

आक्रमण से पहले किले पर तोपों से भीषण गोलाबारी की जाय। उसके बाद एक निश्चित समय पर चारों दल एक साथ विभिन्न दिशाओं से किले पर आक्रमण करें। आक्रमण करने वाले इन दलों को, आवश्यकता पड़ने पर बचाव व आड़ देने के लिए, आगे शत्रुओं पर गोलाबारी करने के लिये तोपें तैयार रहें। कल सवेरे कर्नल मॉबी आदि अफसरों को योजना बतायेंगे। इस तरह हमारी विजय निश्चित है, सोच वे प्रसन्न मन सो गये।

सबेरे उठते ही उन्हें जो पहला समाचार मिला उसे सुनते ही वे झल्ला उठे। माथे में बल पड़ गये। सोचने लगे—शत्रु कितना ही तुच्छ, कितना ही छोटा, कितना ही निर्बल हो—है तो शत्रु ही। अधिक न सही, थोड़ी बहुत हानि तो पहुँचा ही सकता है। उन्हें अपने पर, अपने अफसरों पर झुँझलाहट हुई। इस बात का ध्यान कैसे नहीं आया उन्हें, कि शत्रु उनके बनाये 'आड़' को नष्ट भ्रष्ट कर सकता है! क्या इसलिये कि आड़ बनाते समय, शत्रु से विरोध की सम्भावना होते हुये भी विरोध न मिला था! बड़ी चूक हो गयी! कल की सारी मेहनत बरबाद हो गयी है। सोचा तो यह था कि आज काम समाप्त हो जायगा और कल आक्रमण कर देंगे, पर अब दो दिन और लग जायेंगे। आड़ का काम आज फिर से शुरु करना होगा। आज शायद दिन में विरोध मिले। फिर? सबसे पहले पूरी सेना भेज वहीं उनके शिविर बनाएं। तोप आदि भी साथ-साथ इस तरह लगा कर रखें कि यदि शत्रु का आक्रमण हो तो डट कर युद्ध कर सकें, साथ ही आड़ बनाने वाले दल की सुरक्षा भी! आड़ के बनाने से पहले यही काम

करना होगा। शत्रु से तीव्र विरोध मिल सकता है, अतः विरोध के रूप में शत्रु के आक्रमण का, प्रतिरोधात्मक उत्तर देना होगा।

उन्होंने सामने खड़े, खबर लाने वाले कर्नल मॉबी से कहा—"कर्नल फौरन हमें किले के सामने वाली समतल भूमि तथा नाले को अधिकार में कर लेना चाहिये। पायनियर्स, आर्टिलरी एवं नेटिव इन्फेंट्री के लगभग दो हजार जवान तैयार करो। वे तुरन्त अपना कैम्प (शिविर) वहीं लगायेंगे। ५३ वीं रेजिमेंट की एक टुकड़ी गार्ड ड्यूटी (पहरेदारी) के लिये लगा दो। सम्पूर्ण तोपखाना भी ले जाना होगा। उनका शिविर भी वहीं लगेगा। जाओ, जल्दी से जल्दी तैयारी करो। मैं भी साथ चलूँगा।"

घंटे भर में ही सेना कूँच करने के लिये तैयार थी। जनरल गिलेस्पी भी आ गये थे। आधार शिविर में कैप्टन कॉल्टमैन को चार्ज दे तथा होशियार रहने को कहकर सेना सहित जनरल गिलेस्पी लगभग सात बजे कर्णपुर ग्राम की तरफ से रिस्पना पार समतल भूमि की ओर चले। रिस्पना पार कर, सामने उत्तर की ओर, जंगलों में घुसने से पूर्व उन्होंने आगे बन्दूकची और उनके पीछे तोपची किये। उनके पीछे हिन्दुस्तानी फौज, फिर ५३ वीं रेजिमेंट के जवान रखे। स्काउट रूप में (अग्रगामी छोटा दल जो शत्रु की हलचल, टोह आदि का पता लगाते हुए पीछे आने वाले दल के लिये रास्ता साफ करता है) ५३ वीं रेजिमेंट के बीस गोरे सैनिक आगे जा चुके थे। जनरल स्वयं बीच में रहे। ले० कर्नल कारपेन्टर तोपखाने के पीछे और कर्नल मॉबी सबसे पीछे रहे। इस तरह पूरी तैयारी कर वह दल उस वन प्रान्त में घुसा।

बिना किसी प्रकार के विरोध का सामना कर फिरंगी सेना सकुशल दस बजे अपने गन्तव्य स्थान पर पहुँची। सबसे पहले 'लुक आउट पोस्ट' (चौकियां) कायम किये। फिर इधर उधर पेड़ों, झाड़ियों आदि के सहारे तोपें लगा दी। तत्पश्चात सेना के शिविर लगे। इतनी तैयारी

कर जनरल गिलेस्पी ने ले० कर्नल कारपेन्टर से आड़ बनाने का काम आरम्भ करने को कहा।

कुछ तोप आड़ की सुरक्षा के लिये पहले ही लग चुके थे। कुछ बन्दूकधारी नाले में, जहां आड़ का काम आरम्भ होने वाला था, पास की झाड़ियों, वृक्षों एवं चट्टानों के पीछे फैल कर सजग हो गये थे।

काम आरम्भ हुआ। विशिष्ट स्थान पर अर्द्ध-गोलाकार रूप में कुछ पत्थर रखे गये, फिर उन पर बजरी भरी बोरियां। इस ओर कुछ पास ही खाइयां बनीं। शत्रु से विरोध रूप में, न एक भी प्राणी दिखाई दिया, न एक गोली पटकी। हाँ सामने पहाड़ी पर शाल वृक्षों की आड़ से कहीं कहीं दिखाई देती दीवार पर कुछ हलचल अवश्य जान पड़ती थी।

जनरल गिलेस्पी ने साथ खड़े कर्नल मॉबी से कहा—"देखा कर्नल! कहां गया अब शत्रु का विरोध? हमारी सेना की विशालता ने लगता है उनके पांव उखाड़ दिये। कल ही हमें यहां शिविर लगा लेना चाहिये था। खैर! अब जल्दी से जल्दी यह काम हो जाय तो शत्रु पर कमरतोड़ आक्रमण शुरू करें।"—वे मुस्कराये।

"ठीक है सर!"—कर्नल मॉबी ने कहा।

"मैं अभी दून 'बेस कैम्प' (आधार शिविर) में लौट जाता हूँ। तुम शाम को वहीं आकर मुझे काम के 'प्रोग्रेस' (प्रगति) की खबर करना। यहां रात को पहरा बढ़ा, सबको होशियार रहने की ताकीद करना। वैसे अब विरोध की आशा मुझे तो है नहीं।"

सचमुच ही न दिन में और न रात में शत्रुओं से फिरंगी सेना को किसी प्रकार का विरोध मिला। इससे उत्साहित हो ले० कर्नल कारपेन्टर के दल ने ३० तारीख मध्याह्न तक लगभग सारा काम पूरा कर लिया।

सवेरे ही जनरल गिलेस्पी, दून शिविर में केवल तीन सौ सैनिक छोड़ शेष को साथ ले वहां पहुँच चुके थे। उन्होंने अपना शिविर भी वहीं लगा लिया था। स्वयं हरएक आड़ की जाँच कर उन्होंने पूर्ण

संतोष प्रकट किया ।

दिन के तीसरे प्रहर आक्रमण की योजना समझाने के लिये जनरल गिलेस्पी ने उससे सम्बन्धित सभी अंग्रेज अफसर अपने शिविर में बुलवाये । कर्नल मॉबी उप-सेनापति की हैसियत से वहीं थे । वे पहले ही से योजना से पूर्ण परिचित व सहमत थे ।

सभी अफसरों के उपस्थित होने पर उन्होंने जनरल की आज्ञा से बताया—आक्रमण के लिये चार मुख्य दल बनेंगे । एक रिजर्व, पांचवा दल भी होगा । कौन-कौन अफसर किस-किस दल का नेतृत्व करेंगे । हर दल में किस रेजिमेंट की कौन-कौन सी टुकड़ियाँ रहेंगी । उनकी शक्ति कितनी होगी । कौन दल कहां आक्रमण करने के लिये तैयार रहेगा । उन्होंने इतना बता कर सभी दल के नेताओं को एक एक मानचित्र दिया और उसमें लगे निशान समझाये ।

तब जनरल गिलेस्पी ने गम्भीर स्वर में धीरे-धीरे कहना शुरु किया —"आक्रमण कल होगा । कल, सूर्य निकलते ही तोपों से किले पर गोलों की वर्षा की जायगी । चारों दल के नेता अपने-अपने दल को ले अपने पूर्व निश्चित स्थान पर तैयार रहेंगे । रिजर्व टुकड़ी उत्तर की ओर पहले दल के ठीक पीछे कुछ दूर रहेगी । चारों दल के आक्रमण करते ही कुछ समय बाद यह रिजर्व टुकड़ी आगे बढेगी । आक्रमण ठीक नौ बजे होगा । याद रखिये ठीक नौ बजे । मैं स्वयं बंदूक की एक फायर कर धावा करने का इशारा दूँगा । ठीक नौ बजे यह फायर होगा, जिसे सुनते ही चारों दल अपनी-अपनी सीध में सीधे किले पर आक्रमण करेंगे । किले की दीवार सम्भवतः हमारे तोप के गोलों से पहले ही टूटी फूटी मिलेगी । अन्दर किले में घुसने में दिक्कत न होगी । किले के नायक बलभद्दर को जीते जी पकड़ने की पहले कोशिश करना ।"

कुछ रुक कर उन्होंने पूछा—"कोई प्रश्न ?"

किसी ने जब कोई प्रश्न न किया तो बोले—"आप लोग अब

अपनी जेब घड़ी मेरी जेबघड़ी से मिला लीजिए। इस समय ठीक तीन बजकर पन्द्रह मिनट दस सैकेण्ड हुए हैं।"

सबने अपनी-अपनीघड़ियां मिला लीं।

उसके बाद कर्नल मॉबी को छोड़ सभी अफसर शिविर से बाहर चले गये।

तेरह

दीवार पर पत्थर जमाते हुये कनक ने पास खड़ी, चूना बजरी का मसाला तसले में लिये माया से कहा—"माये! तुम्हें इस तरह कड़ा परिश्रम करते देख मन को बहुत दुख होता है।"

"क्यों?" बड़े भोलेपन से अनजान बन माया ने पूछा।

"भला यह फूल सा कोमल शरीर, परिश्रम के कठोर ताप में झुलसने के लिए थोड़े ही है! मेंहदी के अनुराग रंग में रंगने योग्य ये कोमल हाथ, मिट्टी गारे में सना देखता हूँ, तो सच मानो उद्विग्न हो उठता हूँ।"

"ऐसा?" माया सहज भाव से हँस पड़ी—"मेरी इतनी चिंता है आपको?"

"और नहीं तो क्या? आजकल से थोड़े ही है—शैशव के अज्ञानावस्था से ही है—है न?"

तनिक लजाकर माया बोली "बस बस, रहने दो। बातें बनाना

तो कोई तुमसे सीखे।"

"नहीं माये सच ही कह रहा हूँ। पहले दिन से ही तुम्हें परिश्रम करते देखा, दुख हुआ। जी चाहा तुम्हारे बदले का काम मैं ही करूं!"

"अच्छा अच्छा, काम करो न! कहीं पांडे ज्यू आ जायें तो क्या कहेंगे।"—माया खीजने का अभिनय कर बोली।

"अच्छा जी! पाँडे ज्यू का इतना ध्यान है तुम्हें मेरा कुछ भी नहीं?"

कनक ने पांडे शब्द पर बल दे चुटकी ली।

बिना बोले ही माया ने हाथ के तसले के शेष मसाले को दीवार पर डाल दिया और दीवार बनाने के लिये बँधी मचान से लटकती रस्सी के सहारे नीचे उतर आई। क्षण भर कनक ने एकटक, जाती हुई माया की ओर देखा। अभी दो एक दिन पहले एक संदेह का बीज उसके मानस पर उभर आया था पांडेज्यू! अक्सर माया के आसपास होते हैं। परसों संध्या समय ही तो माया ने पांडे को पत्थर ढोते समय विश्राम करने के लिए कहा और जबरदस्ती उसके हाथ से पत्थर ले लिया था! पांडे इधर जिस काम में लगते हैं माया भी येन केन प्रकारेण वहाँ पहुँच ही जाती है और वहीं काम करने लगती है। कल पांडे ज्यू पत्थर ढो रहे थे तो माया भी पत्थर ढो रही थी। आज हजरत गारा मसाला बनाने में लगे हैं तो माया उसे ढोने में!

उसने दीवार पर ढेर रूप में पड़े मसाले पर कन्नी चला उसे फैलाते हुए सोचा—आज सोचा था, माया से बात ही बात में कह दूँगा—उसकी छवि मेरे हृदय में कितनी गहरी अंकित है। बचपन से आज तक उसके ही स्वप्न देखे हैं उसने! अन्तराल में संजोये भावनाओं के रेखाचित्रों में अब रंग भरने लगा है लालिमा का! बस लालिमा गहन होती जाय, कालिमा के छींटे उन पर न पड़ें, यही कामना है, यही उससे प्रार्थना है। अब गारा लेकर आयेगी न माया, तो स्पष्ट कह दूँगा!

इन्हीं विचारों में डूब वह दीवार पर पत्थर जमाने लगा।

"दाज्यू ! कनक दाज्यू !"[1]

कनक ने पीछे घूमकर नीचे की ओर देखा। पाँडे गारे मसाले का तसला लिए खड़े पुकार रहे हैं। माया स्वयं नहीं आई ! यही क्या कम आघात था उसके लिए, जो पांडे को भेज दिया !— सोचा कनक ने।

"दाज्यू, तसले की रस्सी खींच लो।"—पांडे ने कहा।

"खींच तो रहा हूँ—" रूखे स्वर में कनक ने रस्सी खींचते हुए कहा।

मचान के खम्भे के सहारे चढ़ पांडे ऊपर आया। हँसते हुए कहने लगा—'दाज्यू ! क्या बात है ? मुझे आया देख प्रसन्न नहीं हुए ?"

बड़ा 'छट्टू' है ! (चालाक है) बातों ही बातों में चोट कर गया, सोच कनक बोला नहीं। पांडे का आना तो निश्चय ही उसे अच्छा नहीं लगा। अब यहाँ उसका खड़ा रह, बातें बनाना असह्य हो उठा। फौरन तसले को दीवार पर उलट, खाली कर उसने पांडे के हाथ में पकड़ा दिया।

क्षण भर पांडे अवाक खड़ा रहा, फिर मुस्करा कर बोला— "अच्छा दाज्यू ! मैं अब नहीं आऊँगा !" और नीचे उतर आया।

धीरे-धीरे वापस जाते हुए उसने सोचा। माया के प्रति कनक के आकर्षण का आभास तो वह पहले दिन ही यहाँ पा चुकी थी, अ संदेह को बल मिला है। उससे इतना शुष्क, इतना रूखा व्यवहार इसीलिये किया है, क्या कनक ने ? आह ! कैसे समझाए कनक को कि उसकी अवहेलना का क्या अर्थ है उसके लिये !

पुरुष वेश धारण करते हुए भी तो उसका मन वस्तुतः स्त्री का मन है—कोमलता और भावुकता से सर्वथा हीन नहीं ! वैसे वह अपने

---

१ बड़े भाई के लिए आदर सूचक संबोधन।

हृदय से कोमलता को निकाल दूर फेंक चुकी है—भावुकता को नष्ट कर चुकी है। पर ! पर ऋषिकेश में प्रथम बार कनक को देख, मिलकर जाने क्यों उसकी साधना क्षण भर के लिये खंडित सी हो गई। क्षणिक भावुकता के उस पल में एक दुर्बलता का अनुभव किया था उसने ? दिनों बाद, आज भी वह अपनी इस दुर्बलता पर विजय नहीं प्राप्त कर पाई है। वस्तुतः अपनी इस दुर्बलता के प्रति अब कुछ मोह सा हो चुका है उसे।

वह जानती है कनक क्षत्रिय है और वह ब्राह्मण बाला। वह समझती है अपने समाज के नियमों को, जिसमें ब्राह्मण क्षत्रिय का मिलन असम्भव है। फिर भी बिना प्रतिदान चाहे अन्तर के किसी कोने में, उसे अपना मान, उसकी मधुर स्मृति छिपाये बैठी है। हृदय ने जिसे अपना माना, उसके रूखेपन में, उसकी अवहेलना में कितनी वेदना, कितनी पीड़ा निहित है। सोच, मन भारी हो उठा।

सामने दृष्टि गई, देखा, कुछ दूर मसाला बनाने के स्थान पर कुछ आगे खड़ी माया, इधर ही देख रही है। माया ! हां इधर कुछ दिनों से वह लक्ष्य कर रही है कि माया उसके कुछ निकट आ रही है। इसी कारण तो कनक ने रूखा व्यवहार किया। कैसे बताये कनक को कि वह कान्ता है ? कैसे समझाये उसे कि वह उसके लिये अपने प्राण तक दे सकती है ?

"क्या है पांडे ज्यू ?"—माया ने पांडे के उतरे, उदास मुख को देख पूछा —"कनक ने कुछ कहा क्या ?"

"नहीं, नहीं तो। जी अच्छा नहीं है। तुम, तुम यहां रहो माया, मैं अभी थोड़ी देर उधर पहुँच कर आता हूं, आवश्यक काम है।" उसने एक ओर इशारा कर कहा।

जरूर कनक ने कुछ कहा है। अभी तो अच्छे खासे गये थे पाण्डे यहां से। कहीं कुछ ईर्ष्या के भाव तो जागृत नहीं हुए कनक में—पांडे के प्रति ? शायद यही बात है, क्योंकि कल परसों से वह देख रही है कनक

पांडे के नाम पर चुटकियां लेता है उससे। कितनी ईर्ष्या होती है इन मर्दों में, सोचा। कुछ अच्छा भी लगा माया को, कुछ बुरा भी। बोली—

"पांडे ज्यू जरा जल्दी आना।"—और खाली तसले में मसाला भरने लगी। कांछी को पहले भरा तसला देने लगी फिर कुछ सोच स्वयं अपने सिर पर रख लिया और कनक के पास पहुँची।

काम तो कर रहा था कनक, पर काम में उसका मन नहीं लग रहा था। माया का आना जान नहीं पाया। जब एकाएक माया को मचान पर अपने बराबर खड़े पाया तो प्रसन्न हुआ, पर पांडे को भेजने की बात याद आई तो गम्भीर हो बोला—"मैंने तो सोचा था, शायद अब नहीं आओगी!"

"अच्छा! भला कैसे सोच लिया था तुमने यह?"

"पांडे जो अभी आया था तसला लेकर। तुम्हीं ने भेजा होगा शायद।"

"अच्छा! तभी नाराज हो क्या?"

कनक कुछ बोला नहीं। माया ने हँसकर कहा—"तो क्या हो गया? मुझे थका जान उन्होंने कहा, तुम विश्राम करो। मैं अबकी बार दे आता हूँ।"

"हां-हाँ उसे ही तो तुम्हारी चिन्ता है न?" कुछ कुढ़कर कनक बोला।

"क्यों? कुछ हर्ज है क्या? कुछ आपत्ति है तुम्हें?"—माया बोली।

सहसा काम रोक कनक ने उसकी ओर मुड़कर कहा—"माया! जानकर भी अनजान बनती हो? तुम खूब जानती हो मेरी भावनाओं को। तुम्हारे प्रति बचपन का सहज स्वाभाविक स्नेह, अनुराग का रूप ले चुका है। माया तुमसे मिलने की आकांक्षा हृदय में लिए ही तो मैं सेना में भरती हुआ। भाग्य ने हमें मिलाया। मिलाया ही नहीं, साथ-साथ रहने का सुअवसर भी दिया है।"

भावुकता के आवेश में उसने माया के दोनों हाथ पकड़ लिये। बोला—"माये! तुम मेरे प्राणों की रचना हो, मेरे जीवन की प्रेरणा शक्ति हो। मेरे जीवन काव्य की गति और यति हो। निष्ठुर बनने का प्रयास कभी न करना माये, मैं सहन नहीं कर पाऊँगा।"

माया बोली नहीं। पत्थर की मूर्ति की तरह निश्चल सिर झुकाए खड़ी रही। मुख अवश्य कुछ लाल हो उठा। बस सिर झुकाए, धीरे धीरे उसने अपने हाथ कनक के हाथों से छुड़ा लिए।

"मेरे प्राणों का यह उपहार तुम्हें स्वीकार करना ही होगा माये! पांडे तुम्हारी ओर झुक रहा है। डरता हूँ मंजिल पर पहुँच कर भी पथभ्रष्ट न हो जाऊँ। मंदिर की देहली पर पहुँचूँ तो पट बंद न हो जाएं। देवी के दर्शन एवं पूजन से वंचित हो प्रतिमा ही को खो न बैठूँ।"—कहते-कहते कनक का कंठ अवरुद्ध हो गया।

माया ने धीरे-धीरे पलकें उठाकर क्षरण भर कनक की ओर देखा। लज्जा मिश्रित मुस्कान से धीरे-धीरे, फिर नीचे देखते हुए इतना ही कहा —"विश्वास।" और तसला खाली कर जाने लगी।

"ठहरो माया, बस एक क्षरण!" रोकते हुए कनक ने कहा— "विश्वास? बहुत है माया, शायद अपने से भी अधिक! शायद सागर में जलराशि से भी अधिक। पर न जाने क्यों दो एक दिन से मेरा विश्-वास हिल उठा है।"

"तो अपनी माया का विश्वास करें।"—मुस्कराकर माया बोली और तुरन्त रस्सी पकड़ नीचे झूल गई।

'अपनी माया! अपनी माया!' कनक ने मन ही मन दुहराया। गारे के उस ढेर से उसे सुनाई दिया—'अपनी माया!' दीवार पर जमे एकएक पत्थर मानो सजीव हो बोल उठे—अपनी माया! अपनी माया!' आत्म विभोर हो धीरे से कनक बोला—"अपनी माया" और फिर मुस्करा कर हौले बोल उठा—"मेरी माया!"

उधर माया जब वहां से चली तो मन ही मन अत्यंत प्रसन्न थी।

वर्षों से संजोये स्वप्न साकार हो रहे थे। मन मन्दिर में स्थापित देवमूर्त्ति सजीव हो उठी थी। मधुर भावों में डूबी गारा बनाने वाले स्थान पर आई। देखा पांडे आ गया था। कांछी पानी डाल रही थी और वह चूना बजरी मिलाने में जुटा है।

माया ने लक्ष्य किया, यद्यपि पाँडे काम कर रहा है फिर भी चेहरे पर अवसाद की छाया शेष है। एक कसक सी उत्पन्न हुई उसके अन्तर में। आज वह प्रसन्न है, बहुत प्रसन्न ! कनक के कारण। अपनी इस प्रसन्नता के रंग में वह सबको रंग देना चाहती है ! पर उसी कनक के कारण बेचारे पांडे को कष्ट मिला है न ? कुछ सहानुभूति और कुछ करुणा के भाव जागृत हुये उसके अन्तर में ! कनक ने कुछ अवश्य कहा है इन्हें ! बेचारे पांडे ज्यू। नहीं जानते, कितना अनुराग रखते हैं कनक मुझ पर। वह भी आज से नहीं, कल से नहीं, बचपन से ही। उसी ईर्ष्यावश कुछ कह दिया होगा उसने। आज जब मैं प्रसन्न हूँ, बहुत प्रसन्न तो अपने परिचित किसी को भी दुखी नहीं देखना चाहती। आगे बढ़ कर बोली—"पांडे ज्यू, आ गये। जी कैसा है ?"

"अच्छा है।"—पांडे काम में ही लगा रहा।

"जल्दी आ गये, विश्राम नहीं किया तुमने ?"

पांडे कुछ बोला नहीं, तो कांछी ने हंस कर कहा—"उस शाल वृक्ष के नीचे चुपचाप खड़े थे। मैं पकड़ लाई।"

सुन माया की ममता द्रवित हुई। पास आ, हाथ से फडवे को रोकती, वात्सल्यपूर्ण स्वर में बोली—"पाँडे ज्यू ! कनक ने जो कुछ भी कहा उसके लिये मैं उनकी ओर से क्षमा मांगती हूँ।"

इतना स्नेह करती है माया कनक से, कि उसके बदले में क्षमा याचना करे। पांडे ने सोचा और बलपूर्वक अधरों पर मुस्कान ला बोला "नहीं-नहीं, कनक ने सच मानो मुझे कुछ भी न कहा। थक गया था न, इसी से जी भारी हो गया था। अब ठीक हूं, देखो न।"—कहते-कहते वह हंस पड़ा।

"तो वहां ऐसे गुमसुम, मुंह फुलाये क्यों चुप खड़े थे कि मेरा आना भी न जान पाये ?"—कांछी ने अभिनय कर मुंह फुलाते हुए कहा और हंस पड़ी। पांडे और माया भी हंस पड़े, पर हंसते हुए माया ने लक्ष्य किया कि पांडे हंसते हुए भी हंस नहीं रहा है।

माया के अन्तर में एक कसक सी उठी। पल भर निर्निमेष दृष्टि से पांडे की ओर निहारा और फिर तसला आगे रख दिया।

जाने क्यों काँछी को यह अच्छा न लगा।

चौदह

३१ अक्टूबर १८१४ का प्रभात, अन्य दिवसों के प्रभात से किसी प्रकार भिन्न न था। सदा की तरह, पूर्व दिशा में, अनुराग रंग बिखेरती ऊषा अवतरित हुई और अपने प्रियतम रवि की बाट जोहने लगी। सदा की तरह थोड़ी देर में, मुस्कान की उज्ज्वल आभा फैलाते रवि प्रकट हुये और ऊषा अपनी लालिमा लिये उनमें तिरोहित हो एकाकार हो गई। ऊषा-रवि के ठीक इस दिव्य मिलन बेला में खलंगा किले के लगभग छः सात सौ गज की दूरी पर जनरल गिलेस्पी की आज्ञानुसार तोप गरज उठे। कल, आज, अभी, कभी भी की आशा किये हुए खलंगा दुर्ग के कतिपय तोप भी अपने अधिनायक बलभद्र कुँवर की आज्ञा से प्रत्युत्तर में तुरन्त उबल पड़े। फिरंगी सेना के तोप क्षण-क्षण में गरज उठते। नेपाली सेना के तोप प्रत्युत्तर में रह-रह कर कुछ अन्तर से चलते। दोनों सेनाओं के तोपों के गर्जन का सम्मिलित स्वर उस वन

प्रान्त के प्रातःकालीन शान्त वातावरण को भंग करता हुआ पहाड़ियों से टकरा-टकरा कर प्रतिध्वनित हो उठा।

खलंगा में मुख्य द्वार के पास लगे जिजल तोप के पास ही बलभद्र खड़े सोच रहे थे। पिछली बार शत्रु के तोपों से दीवार को क्षति न पहुँची थी। फासला दूर था न! आज भी दूरी लगभग उतनी ही है। क्षति न पहुँचेगी, यह विश्वास मन में लिये थे। विश्वास सत्य ही सिद्ध हुआ। देखा सचमुच ही तोप के गोले, काफी नीचे की ओर फूट रहे थे। सोचा, हमारे गोलों का भी तो यही हाल होगा! लक्ष्य से इधर ही पड़ते होंगे! होंगे नहीं—हैं! कोई लाभ नहीं है इससे! व्यर्थ में हम बारूद क्यों बरबाद करें? वैसे ही शत्रु के मुकाबले बारूद आदि हमारे पास कम है!

उन्होंने तोप में बारूद-गोला भरते सूबेदार गणेशमान से कहा— "तोप न मार, बन्द गरिदे। जाउ अरू ठांउमा पनि सुनाइदे।" (तोप न चलाओ, बन्द कर दो। जाओ अन्य स्थानों पर भी आज्ञा सुना दो।)

थोड़ी देर में ही सभी नेपाली तोप चुप हो गये। फिरंगियों के तोप पूर्ववत् बिना क्षति पहुँचाये, निरन्तर गोले बरसाते रहे।

किले से चलते तोप बंद हुए—काफी देर बाद इसका लक्ष्य कर जनरल गिलेस्पी ने अपनी जेबघड़ी निकालकर देखी। आठ बजने को पन्द्रह मिनट थे। सोचा लगभग घंटा भर हो गया है, गोलाबारी आरम्भ किये, पर कोई लाभ नहीं हो रहा है। गोले लक्ष्य पर मार नहीं कर रहे हैं! कमबख्त किले की ऊँचाई व दूरी इतनी जो है! शत्रु चालाक है, तभी तो व्यर्थ की गोलाबारी कर बारूद बरबाद नहीं करना चाहता!

उन्हें खीज हुई! कर्नल मॉबी के पहले आक्रमण की असफलता का चित्र उनकी आँखों के सामने सजीव हो उठा। तोपों से शत्रु की जिस क्षति का अनुमान लगाया था, उसे पूरा न होते देख वे

उत्तेजित से हो उठे। शत्रु हमारी इस असफलता से बहुत उत्साहित होंगे, सोच वे व्याकुल हो उठे। आक्रमण नौ बजे होगा। अभी एक घंटे से अधिक समय बाकी है! गोलाबारी करते रहना व्यर्थ है। अब क्या करें—क्या करें? बार-बार यही प्रश्न मस्तिष्क में मंडराने लगा।

खीज, व्याकुलता, बेबसी और असफलता से वे उतावले से हो गये। सोचा गोलाबारी करते रहने से कोई लाभ नहीं—कोई लाभ नहीं! हमला ही करना होगा! पर अभी तो केवल आठ ही बजे हैं। नौ बजने में एक घंटा है—पूरे साठ मिनट का एक घंटा। और अधिक उत्तेजित हो उन्होंने गोलाबारी बंद करने का आदेश दिया।

कर्नल मॉबी ने पास आ कुछ विस्मय से कहा—"गोलाबारी बंद करवा दी जनरल? अभी मुश्किल से आठ बजे हैं!"

"आई नो-आई नो, (मैं जानता हूँ—जानता) हमला के प्लान (योजना) में चेंज (परिवर्तन) कर दिया है! हमला—किले पर अभी हमला होगा। हैंड मी युअर गन कर्नल!" (अपनी बंदूक मुझे दो कर्नल।)—कुछ परेशान, कुछ उतावले से हो जल्दी से जनरल गिलेस्पी ने कहा।

"बट-बट (पर-पर) जनरल! सिग्नल (इशारा) का समय नौ का तय है। अभी एक घंटा बाकी है।" अपनी बंदूक बढ़ाते हुए कर्नल मॉबी ने कहा।

"फॉरगेट इट" (उसे भूल जाओ)—कहते कहते जनरल गिलेस्पी ने बंदूक को दायें कंधे पर रख, नली को आकाश की ओर किया और स्वयं नाले पर बने आड़ से बाहर आ गये।

कर्नल मॉबी किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो हक्के बक्के रह गये

जनरल गिलेस्पी ने एक बार सामने किले की शान्त पहाड़ी की ओर देखा और "धांय" से फायर कर दिया।

आक्रमण करने वाले चारों दल, खलंगा वाली पहाड़ी की पूरी

लम्बाई के सम्मुख, उत्तर से दक्षिण तक फैले, अपने-अपने पूर्व निश्चित स्थान पर गोलाबारी आरम्भ होने से पूर्व पहुँच चुके थे। गोलाबारी बंद होने के कुछ ही देर बाद अचानक असमय बंदूक की फायर सुन विस्मित हो गये। जेबघड़ी निकाल समय देखा—आठ बजकर पांच मिनट बीस सैकेण्ड हुये थे। आक्रमण करने का समय तो नौ बजे का था! स्वयं जनरल ने कहा था—'मैं ठीक नौ बजे बदूक की फायर कर आक्रमण करने का इशारा दूंगा।' फिर यह फायर कैसे हुई? हो सकता है घबराहट में किसी सैनिक की बंदूक छूट गई हो! या फिर कोई और बात भी हो सकती है। आक्रमण करने का इशारा देने वाला फायर यह नहीं हो सकता। सोच प्रायः सभी दल के नेता निश्चित रहे।

पर पहले दल के नेता ले० कर्नल कारपेन्टर ने कुछ और भी सोचा। फायर निश्चय ही शिविर की ओर नाले से ही हुआ है। क्या जनरल ने अपनी योजना में कुछ हेर फेर कर दिया है? यदि हाँ, तो उनके दल को खबर क्यों न दी गई? क्या किसी अन्य दल को खबर भिजवाई? उन्हें ध्यान आया, उनसे कुछ दूर पीछे की ओर मेजर लडलो की रिजर्व टुकड़ी है। शायद उस दल को कुछ खबर भेजी हो जनरल ने! नौ बजने में अभी काफी समय है, किसी सैनिक को भेजकर खबर कर ली जाय।

आध घंटे के भीतर-भीतर लौट कर सैनिक ने बताया, उधर भी कोई खबर नहीं है। मेजर लडलो ने कहा है—बंदूक की फायर उन्होंने भी सुनी पर समझे नहीं। नौ बजे आक्रमण का समय है। फायर हो न हो, वे आगे वाले दल को कुछ आगे बढ़ने का अवसर दे, ठीक नौ बज कर पांच मिनट पर योजना के अनुसार आगे बढ़ेंगे।

नौ बजने को एक मिनट रह गया। सभी दल के नेता सांस रोक फायर होने की प्रतीक्षा करने लगे। दल के सभी सैनिक आक्रमण करने के लिए तैयार थे। ठीक नौ बजा! पर फायर न हुई। एक-दो

पांच-दस-बीस-तीस सैकेन्ड बीत गये, पर फायर न हुई। ले० कर्नल कारपेन्टर ने जेबघड़ी पर दृष्टि जमाये देखा—चालीस-पचास और साठ सैकेण्ड बीत गये, पर फायर न हुई। सोचा फायर हो गई हो और उन्होंने सुनी नहीं, पर इस पर विश्वास न हुआ। आठ बजे वाले फायर को सुन सकते हैं, इसे कैसे नहीं! फिर एक आध मिनट बाद भी अभी फायर हो सकती है। नौ बजे आक्रमण करने का जनरल आर्डर (हुक्म) था। नौ बजकर एक मिनट हो गया है। फायर और नो फायर (फायर हो या न हो) उन्हें हुक्म की तामील करनी है। तुरन्त मार्च (कूच करो) की आज्ञा दे वे आगे चले।

दूसरे, तीसरे और चौथे दल के नेता, क्रमशः कप्तान फास्ट, मेजर कैली और कप्तान कैम्पबैल जेबघड़ी देखते रहे, पर फायर न हुई। फायर बिना आगे कैसे बढ़ें? जनरल का हुक्म था—फायर के इशारे पर आगे बढ़ना। अब फायर होगी—अब फायर होगी और वे आगे बढ़ेंगे—की आशा लगाये वे अपने-अपने स्थान पर ही डटे रहे।

पांचवें दल के नेता मेजर लडलो ने नौ बज कर पाँच मिनट पर अपने दल को कूच करने का हुक्म दिया और शीघ्र ही नाले व नदी को पार कर पहाड़ी की तलहटी में, अपने दल के बहुत निकट पहुँच गये। ले० कर्नल कारपेन्टर ने अपने दल को कुछ फैलकर, कुछ ऊपर बाईं ओर से आगे बढ़ने का आदेश दिया। निकट ही मेजर लडलो की टुकड़ी का आभास पा उन्होंने खबर भिजवा दी कि हम ऊपर की ओर से बढ़ रहे हैं तुम नीचे की ओर से बढ़ो।

सघन पहाड़ी थी, विशाल साल वृक्षों एवं कांटेदार झाड़ियों से भरपूर! रास्ते का पता नहीं था और चढ़ाई दुर्गम! पहाड़ों पर चढ़ने का अभ्यास नहीं था, वह भी गोली बंदूक और पीठ पर थैले आदि लादकर चढ़ना! चढ़ना ही नहीं, अपनी जान बचाते हुए शत्रु की जान लेने का प्रयास करते हुए, होशियारी से चढ़ना! गनीमत थी कि अभी तक शत्रुओं से विरोध नहीं मिला। रह-रह कर सैनिक

झाड़ियां काटते, गिरते पड़ते किसी तरह ऊपर पहाड़ी पर चढ़ने लगे।

अभी यह दल कुछ ऊपर चढ़, दीवार से लगभग दो सौ गज नीचे ही था कि एकाएक गोलियों की बौछार सी आई। साथ ही तीरों की वर्षा सी हुई। दल ने अन्धाधुंध ऊपर की ओर, अगल बगल की ओर दनादन फ़ायर करना आरम्भ कर दिया। अचानक ऊपर से बड़े बड़े पत्थरों के ढेर खड़ खड़ कर शोर करते हुए गिरे जिसकी चपेट में कई सिपाही आ गये। दल ने शत्रुओं की एक एक गोली का उत्तर दस दस गोलियों से दिया और पेड़ों व झाड़ियों की आड़ ले मारते मरते आगे बढ़ने लगे।

पायनियर्स के ले० एलिस व उनके पचास जवान भी इसी दल में सम्मिलित थे। तरुण थे, जवानी की गरमी खून में थी, सो लड़ने मरने के जोश में ले० एलिस सबसे आगे थे। पेड़ों की आड़ लिये छिपते छिपाते, गोलियां चलाते वे निरन्तर आगे अपने दल के साथ बढ़ रहे थे। अचानक उन्हें निकट ही कुछ चौड़ी पगडंडी दिखाई दी। चारों ओर गोलियां चलाते हुए वे उसके पास पहुँचे। पर इसी समय उत्तर की ओर से जिजल तोप गरज उठा और कई छोटे छोटे तोप उन पर एक साथ बरस पड़े। दाईं ओर से गोलियों की बौछार आने लगी। आस पास के दस पंद्रह सिपाही गिर पड़े। पांच दस पगडंडी में, छिपाकर बनाये गड्ढों में गिरकर नोकीले खूंटो में बिंध गये। भाग्य से ले० एलिस बच गये। वे तुरन्त पगडंडी से हट ऊपर की ओर कुछ पेड़ों की आड़ में हो गये ओर दाईं ओर जिधर से गोलियां आई थीं, फायर करने लगे। अन्य बचे हुए सिपाहियों ने उनका अनुकरण किया और उसी ओर गोलिगों चलाने लगे।

ले० कर्नल कारपेन्टर कुछ पीछे थे। उन्होंने भी उसी ओर गोलियाँ चलाईं। कुछ देर में उधर से गोलियां चलनी बंद हो गईं। या तो वे समाप्त हो गये हैं, या पीछे हट गये हैं, सोच ले० एलिस उत्साहित हो, लगभग पचास साठ गज की दूरी पर खड़ी किले की दीवार के

दीवार पर अब तक और सेना पहुँच चुकी थी। पास पहुँचने का प्रयत्न करने लगे। ले० कर्नल कारपेन्टर भी उसी ओर बढ़ने की चेष्टा करने लगे। मेजर लडलो का रिजर्व दल भी नीचे से धीरे धीरे ऊपर बढ़ता आ रहा था।

शत्रुओं का विरोध अब तीव्र होने लगा। दनादन, इधर, उधर सब ओर से बंदूकें चलने लगी। तीरों की वर्षा तो गजब की थी। जाने कहां से छोटे छोटे पाव आधपाव के गोल पत्थर, गोली की तेजी से आ चोट करते? भाले हवा में उड़ते आते और लगते ही जरा भी अन्याय न करते। पांच आगे बढ़ने की कोशिश करते, तीन गिर जाते दो ही आगे बढ़ पाते। फिरंगी दल ने भी पूरा-पूरा उत्तर देते हुए गोलियों की निरन्तर वर्षा की। किसी तरह से ले० एलिस और ले० कर्नल कारपेन्टर दीवार के निकट लगभग बीस गज के फासले पर पहुँच गये। देखा—दीवार यहाँ कम से कम बीस फुट ऊंची है! कैसे चढ़ी जायगी? जनरल की योजना के अनुसार तो यह था कि दीवार टूटी फूटी मिलेगी, इसलिए सीढ़ियां नहीं लाये थे। सीढ़ियों के अभाव में क्या होगा? कैसे किले के भीतर घुसेंगे—सोच ले० कर्नल कारपेन्टर ने पास के दो सिपाहियों को नीचे भेज मेजर लडलो से सीढ़ियों का फौरन प्रबन्ध करने के लिए कहा। आगे बढ़ना व्यर्थ जान, उन्होंने सीढ़ियों के आने तक पेड़ों आदि की आड़ में मोर्चे बना लड़ते रहने का विचार कर आसपास सबको खबर कर दी।

मेजर लडलो ने शिविर में चार आदमी फौरन भेज सीढ़ियां मँगवाई। इन आदमियों से नाले पर बने आड़ के मोर्चे पर ही जरनल गिलेस्पी मिल गये। किले से कड़े विरोध की खबर पा, भृकुटी में बल पड़ गये। मुट्ठी भर ये असभ्य आखिर कब तक टक्कर लेंगे—सोच कुछ तसल्ली हुई। फौरन सीढ़ियों के भिजवाने का प्रबन्ध किया।

लगभग घंटे भर में जब बीस पच्चीस सीढ़ियां पहले दल के पास पहुँची तब उस समय दल काफी पीछे हट चुका था। जान

माल की काफी हानि हो चुकी थी। मेजर लडलो का दल भी अब इससे मिल चुका था, पर दीवार से बरसती आग, पत्थर व तीरों की वर्षा क्षीण न हुई थी। हाँ दीवार पर लगा पास वाला तोप चुप हो चुका था।

सीढ़ियों को देख ले० एलिस अत्यंत उत्साहित हुए। ले० कर्नल कारपेन्टर ने भी करो या मरो का सिद्धान्त याद कर एक बार फिर प्रयास करने की ठान ली। सीढ़ियों को देख सिपाहियों में भी उत्साह का संचार हुआ और किले में घुस, विजय प्राप्त करने के स्वप्न को साकार करने की इच्छा बलवती हो उठी।

इधर ले० कर्नल के मुख से 'चार्ज' (आक्रमण करो) शब्द निकला उधर दोनों संयुक्त दलों ने एक बारगी गोली की बौछार सी मचा दी और आगे बढ़े। शत्रु की ओर से तीर, गोलियां और पत्थर उसी तरह बरसते रहे पर धीरे २ फिरंगी दल आगे बढ़ने लगा। अब दीवार और उनके बीच लगभग तीस गज का फासला रह गया। किले से तीरों व गोलियों की घनघोर वर्षा हुई। पर भारी विरोध के बावजूद भी दल आगे बढ़ते-बढ़ते दीवार के बिलकुल पास पहुँच ही गया। किले से अब पत्थर व तीरों का जोर बढ़ गया। दोनों अचूक बन प्राण लेने लगे। बहुत थोड़े—लगभग पन्द्रह बीस सैनिक सबसे पहले वहां पहुँच पाये, जिन में ले० ऐलिस एक थे।

ले. कर्नल कारपेन्टर व कुछ जवान, पीछे से दीवार पर दनादन गोलियां छोड़ते हुये उन्हें सुरक्षा दे रहे थे। ले० एलिस ने उमंग में भर पहली सीढ़ी लगाई और मुंह में नंगी तलवार दबाये फौरन ऊपर चढ़ने लगे। अभी सीढ़ी के कुछ डंडे ही चढ़ पाये थे कि किले से सधी एक गोली सिर में लगी। तत्काल स्वर्ग सिधार भूमि पर गिर पड़े।

यह देख ले० कर्नल कारपेन्टर ने किले की दीवार पर जरा देर ही दिखाई देने वाले उस बन्दूकची पर गोली छोड़ी। गोली निशाने पर बैठी। बन्दूकची वहीं दीवार पर औंधा झूल गया—बन्दूक हाथ से गिर पड़ी।

सैनिक सीढ़ियां लगाने का प्रयत्न करते, कुछ सफल हो कुछ ऊपर चढ़ने और तीर व पत्थरों की चोट खा गिर पड़ते। ले० कर्नल व मेजर लडलो के जवान जी-जान एक कर आगे बढ़ने की चेष्टा करते और गोलियों, तीरों और पत्थरों से पीछे हटा दिये जाते। वे दीवार पर पहुँच एक-एक कर मरने या घायल होकर धराशायी होने लगी।

आध घण्टे तक दीवार पर चढ़ने की चेष्टा असफल होते देख आंग्ल सेना निरुत्साहित हो उठी। धीरे धीरे पीछे हटने लगी। यह देख ले० कर्नल कारपेन्टर ने बिगुल पर पीछे लौटने का संकेत किया। निरुत्साहित आंग्ल सेना के पांव उखड़ गए। पीछे लौटने की भगदड़ सी मच गई। जिसको जिधर सूझा, जान लेकर भागा। भगदड़ में दिशा ज्ञान न रहा। पहाड़ी के उत्तर ओर काफी लोग उतर पड़े और नदी नदी भाग, उधर एक ग्राम नागल में शरण ली। कुछ पश्चिम और कुछ दक्षिण की की ओर भागे।

इस तरह भगदड़ मचते देख जनरल गिलेस्पी बेचैन हो उठे। पांचों दलों की यह दशा हुई सोच तुरन्त शिविर में बची सेना के लगभग पाँच सौ तैयार जवानों को ले० कर्नल मॉबी सहित वे किले की ओर वायु वेग से चले। स्वयं ही एक अंतिम साहसिक प्रयास करने की ठान ली।

दृढ़ निश्चय किये जनरल को भागती सेना के कुछ जवान मिले। उन्हें रोक जनरल ने लौटने की प्रेरणा दी। धमकी तक दी, पर अधिक सफलन हो पाये। दस में दो चार ही लौटे। इससे निरुत्साह न हो जनरल गिलेस्पी बन्दूक हाथ में लिये आगे बढ़ चले। अपने सेनापति को इस प्रकार दृढ़ संकल्प आगे बढ़ते देख, सैनिकों को बल मिला। जोश में भर आगे बढ़े—बढ़ते चले गये।

किले से आती गोलियों व तीरों का सामना कर मरते-मराते लगभग तिहाई हो यह दल अदम्य उत्साह व वीरता से किले के मुख्य द्वार के निकट लगभग तीस गज की दूरी पर पहुँच गया। मुख्य द्वार का जिजल तोप बार-बार सामने से गरज कर प्रलय मचाने

लगा। तीरों व भालों की बौछार से बचना मुश्किल हो रहा था। उस पर पत्थरों की वर्षा! बिना घायल हुए—बिना चोट खाये आगे बढ़ना कठिन हो गया। कुछ देर तक आगे बढ़ने का प्रयास कर असफल हो फिरंगी सेना का साहस डिग उठा। वह सकते की दशा में आ गये। न आगे बढ़ते बना, न पीछे हटते। जनरल गिलेस्पी ने यह देख उत्साह फूंकते हुए कहा—"आगे बढ़ो वीरो! आगे बढ़ो जवानो! नैल्सन, वाल्टर रैले, फ्रांसिस ड्रेक आदि वीरों को याद करो। उनकी वीरता से प्रेरणा लो वीरो! और तोड़ डालो इस द्वार को।"

कुछ साहस कर जिसने आगे बढ़ने का प्रयास किया, वह वहीं ढेर हो गया। वर्षा की बूंदों के समान गोलियाँ चलने लगीं। आंधी की तरह सर सर करते तीर बरसने लगे। पत्थरों की वर्षा तो न केवल तन तोड़ने वाली, वरन मन तोड़ने वाली थी। दीवार पर से रह-रह कर नेपाली वीरांगनाएं पत्थरों की वर्षा कर रहीं थीं। फूल से कोमल कई हाथों में पत्थर ऊपर उठते—क्षण भर हवा में सध तुरन्त पूरे वेग से नीचे शत्रु सेना पर गिर पड़ते और दूसरे क्षण ही, अवाक, हक्के-बक्के खड़े शत्रु के सैनिक चोट खा गिर पड़ते।

औरतें? दुश्मन की औरतें इस युद्धमें भाग ले रही हैं! शत्रु की स्त्रियां ही इस संहारकारी रूप में हैं तो पुरुष जाने कैसी प्रलय मचा दें?—सोच आंग्ल सेना का रहा सहा साहस भी डूब गया। हैरानी से आंखें फाड़-फाड़ कर वह देखने लगे—पत्थर बरसाती इन स्त्रियों को! स्त्रियां! कोमल निर्बला कहलाने वाली इन अबलाओं के चंडी सम भयंकर रूप को! साक्षात मृत्यु आंखों के सामने नाच उठी। अवाक् हक्के-बक्के, निशाना सा बने, खड़े के खड़े पिटते रह गये।

जनरल गिलेस्पी ने आगे बढ़ने को कितना ही कहा—लड़ने को कितना ही उत्साहित किया। अपने राजा की दुहाई दी—अपने देश इंगलैंड की याद दिला, आत्म-सम्मान जगाना चाहा। ईश्वर के नाम

पर—यिशु मशीह के नाम पर आगे बढ़ने को कहा। यश और धन का लोभ देकर लड़ने भिड़ने को कहा, पर सेना न मानी। आगे बढ़ने से साफ इनकार कर वहीं किंकर्त्तव्यविमूढ़ सी खड़ी की खड़ी रह गई। ऊपर दीवार से पत्थर गिरते रहे। तीर गोलियां चलती रहीं और हतबुद्धि हो फिरंगी सेना के सैनिक एक-एक कर गिरने लगे।

अभी तक जनरल गिलेस्पी, एक मोटे साल वृक्ष की आड़ लिये थे। अब अधिक न रुक सके। बंदूक छोड़, म्यान से तलवार निकाल उन्होंने दायें हाथ में पकड़ ली। बायें हाथ के टोप को ऊंचा किया और दायें हाथ की नंगी तलवार को हवा में हिलाते हुए एक बार फिर जोर से बोले—"आगे बढ़ो जवानो! सामने द्वार को तोड़ डालो—विजय निश्चित है। अपने देश के लिए, अपने झंडे के लिये, अपने राजा के लिये, आगे बढ़ो वीरो! मैं—मैं जनरल गिलेस्पी तुम्हारे साथ बढ़ रहा हूँ। आगे बढ़ो वीरो! आगे बढ़ो!!"

जनरल गिलेस्पी ने हतप्राय: अपनी सेना में साहस भर, उन्हें आगे बढ़ने की प्रेरणा दी, उत्साहित करने का भरसक प्रयत्न किया। स्वयं आगे बढ़ किले पर आक्रमण करने का अन्तिम प्रयास किया। शत्रुओं की प्रलय वर्षा में बूढ़े ७० वर्षीय जनरल ने सीना तान लिया—निश्चित मौत को ललकार लिया। उनका ए० डी० सी० ले० ओ' हारा, जो पास ही एक पेड़ की आड़ लिये था, उनका ऐसा दुस्साहस देख एक बारगी कांप उठा। सामने आ, आगे बढ़, वह बंदूक चलाता हुआ जनरल के पास आने लगा। यह देख कुछ सैनिकों में भी साहस का संचार हुआ और अपनी बंदूकें चलाते हुए वे आगे बढ़ने लगे।

बायें हाथ से टोप और दायें हाथ से नंगी तलवार हवा में हिलाते हुए जरनल गिलेस्पी—'आगे बढ़ो, आगे बढ़ो!' कहते हुए आगे बढ़ने लगे। अचानक सनसनाती हुई एक गोली आई और जरनल गिलेस्पी के सीने के आर पार हो गई। जीवन लीला

समाप्त हुई । जीवन भर सैनिक बने रहने वाले जरनल गिलेस्पी ने सच्चे सैनिक की ही वीर गति पाई । अपनी बंदूक फेंक ले० ओ'हारा तुरन्त गिरते जरनल को संभालने आगे बढ़ा, पर किले की दीवार से चली कई गोलियों ने उनके शरीर को छलनी कर बीच में ही रोक दिया । जनरल गिलेस्पी के पास ही वह गिर पड़ा । सेनापति के गिरते ही सेना में हल-चल मच गई । उनके पैर उखड़ गये ।

कुछ दूर से कर्नल मॉबी ने यह दृश्य देखा । जनरल का गिरना देखा—मरना देखा ! सेना का आगे बढ़ने से इनकार करना देखा—अड़ना देखा ! किले के द्वार से जिजल तोप का आग बरसाना देखा—मौत उगलना देखा ! गोली तीर भालों का चलना देखा—औरतों का पत्थर बरसाना देखा ! किले को जीतने को आशा छोड़ दी । बिगुल पर 'रिट्रीट (पीछे लौटने की धुन) बजाया और सेना को लौटने का संकेत दिया ।

पन्द्रह

थकी हारी फिरंगी सेना गिरते पड़ते किसी तरह लगभग बारह बजे दिन के नाले पार समतल भूमि वाले शिविर में पहुँची। कर्नल मॉबी ने सबसे पहले घायलों को दून के आधार शिविर की ओर भेजा जहां चिकित्सा का प्रबन्ध था। फिर अपने शिविर में जा सोचने लगे—यह दूसरा आक्रमण भी असफल हुआ। पूरी तैयारी के बाद भी असफलता, और वह भी भारी क्षति के साथ। यह असफलता सचमुच ही उन्हें खल गई। कुछ लज्जा का भी अनुभव किया। मुट्ठी भर असभ्य सेना ने दाँत खट्टे कर दिये! छीः! बहुत ज़बरदस्त घूंसा मारा है उन्होंने फिरंगी सत्ता की छाती पर!

तभी किले की दीवार से रह रह कर पत्थरों की वर्षा करने वाली नेपाली बालाओं के रौद्र रूप का चित्र आँखों के सामने नाच उठा। द्वार की ओर से आग उगलता, छोटे छोटे कई गोलों को एक साथ फेंकने

वाला वह विचित्र तोप ! शायद उसी ने सबसे अधिक बलि ली। और.........पानी के फुहार की तरह रह-रह कर चलने वाली बन्दूक की गोलियां ? असंख्य फुफकारते, उड़ते सर्पों की तरह निरन्तर बरसते तीर ! और औरतों द्वारा बरसाई पत्थरें ! किसने अधिक जानें ली, कहना सरल नहीं जान पड़ता था।

मृतकों एवं घायलों की संख्या का भी अभी अनुमान नहीं लगा सकते। सभी दल अभी लौट न आये थे, फिर भी निश्चय था संख्या भारी होगी। जावा में नेपोलियन के साथी को मात देने वाले तथा 'वैलोर युद्ध' के ख्याति प्राप्त, अनुभवी जनरल गिलेस्पी के प्राणों का बहुत कीमती बलिदान लिया इस पहाड़ी किले कलंगा (खलंगा) ने।

जनरल गिलेस्पी का ध्यान आते ही, ले० ओ'हारा की लाश के पास पड़ी, जनरल की लाश का चित्र आंखों के सामने झूल गया। यत्र तत्र पड़े शव भी दिखाई दिये। शत्रु न जाने इन मृतकों के साथ कैसा अपमानजनक दुर्व्यहार करे ?— विचार आते वह तड़प उठे। मुट्ठी बंध गई। क्या करें ? लाचार थे, बेबस थे वे, अभी कर क्या सकते थे। सोचा—कम से कम जनरल के शव को ला, उनका अन्तिम संस्कार तो करना ही चाहिये — करना ही होगा पर कंसे, कैसे ?

उद्विग्न से हो वे अपने शिविर में इधर उधर घूमते, चक्कर काटते सोचने लगे। कई विचार मानस में उमड़ रहे थे। तुरन्त फिर शत्रु पर आक्रमण कर जनरल के शव को ले आवें ? दूत भेज कर शत्रु से जनरल के शव की मांग करें—या प्रार्थना करें ? सुलह का सफेद झंडा ले बीस पच्चीस आदमी भेजें ?

ऐसे ही कई विचार उठते पर एक को असम्भव कह टालते, तो अव्यवहारिक कह दूसरे को दूर हटाते। कोई आत्म सम्मान पर चोट करता था, तो कोई हीनता का भाव भरता था। तय नहीं कर पा रहे थे—क्या करें ?

इसी समय खीये के बाहर कुछ शोर सुनाई दिया। सिर बाहर निकल कर देखा। दो आदमियों को संगीनों से घेरे अपनी फौज के कुछ जवान आते दिखाई दिये। बाहर निकल वह शिविर के पास ही खड़े हो गये। पास आने पर सिपाहियों ने बताया—ये दो आदमी, नाला पार से स्वयं इधर आ रहे थे। नेपाली हैं, अपने को किले से आये दूत बताते हैं। हमारे नायक से मिल कोई संदेश देना चाहते हैं।

कर्नल मॉबी न उन्हें गौर से देखा। गठे बदन के छोटे कद के जवान थे। तिकौनी नेपाली टोपी पहने थे। बेष भूषा एवं चेहरे मोहरे से वे समझ गये नेपाली हैं। दोनों जवान बिलकुल निशस्त्र थे।

कर्नल मॉबी कुछ पूछने जा ही रहे थे कि एक ने एक कदम आगे बढ़कर कहा—"साहब! हम नेपालियों के दूत रूप में आपके पास आये हैं। हमारे किले के अधिनायक श्री बलभद्र कुँवर ने आपको संदेश भेजा है, हम मृतकों का उचित सम्मान करते हैं। यदि आप चाहें तो आज फिर आक्रमण करने से पहले अपने मृतक एवं घायलों को ले जा सकते हैं।"

कर्नल मॉबी को सहसा अपने कानों पर विश्वास न हुआ। पूरी तरह से बात न समझते हुये भी वे मतलब समझ गये। चकित हो बोले—"क्या बोला टुमने? हाम अपना मरा आडमी लोग ले जाना सकटा हय?"

"हां साहब! हमारी ओर से कोई रोक टोक न होगी। हमारे सेनापति कप्तान श्री बलभद्र कुँवर आपको वचन देते हैं। पर शर्त है साहब, कि आप भी धोखा न करने का वचन दें, और जिस तरह हम दोनों आपके पास बिलकुल निहत्थे आये हैं, उसी तरह आप भी केवल पन्द्रह आदमी बिल्कुल निहत्थे आवें और अपने मृतकों को ले जावें। तब तक कोई मृतकों को छुएगा तक नहीं।"

शत्रु के चरित्र का यह पहलू देख कर्नल मॉबी विस्मित भी हुए और प्रभावित भी। निस्संदेह इस जाति में मानवता के गुण हैं, प्रचुर आत्म-विश्वास एवं आत्म-सम्मान है। सच्चे अर्थ में वे मर्द हैं!—

सोच, शत्रु के चरित्र के प्रति उनके मन में आदर भाव जागृत हुआ। बोले—"अपने कैप्टन को हामारा सलाम डेना। कहना हाम टुमारा (तुम्हारा) बात का इज्जट करटा, शर्त मानटा है। जैसा टुम बोला पंडरह (पंद्रह) आदमी बिना किसी किसिम का हटियार लिये खाली हाट (हाथ) मुर्दा लेने भेजटा हय।"

"सोहब आधे घंटे में यदि आप आदमी भेजें तो ठीक रहेगा।"

"ठीक हय, आधा घंटा में हामारा आदमी लोग आयेंगा। संतरी सही सलामट टुम इनको जिधर से लाया उधर छोड़ दो।" कर्नल मॉब ने कहा।

सलाम कर जाते हुए उन नेपाली सैनिकों को देख कर्नल मॉबी ने अनुभव किया उनके सिर से एक भारी बोझ सा उतर गया है।

इस घटना के थोड़ी ही देर बाद ले० कर्नल कारपेन्टर व मेजर लडलो अपने संयुक्त शेष दल सहित आ पहुँचे। घायलों को पहले की तरह दून शिविर भेज दिया गया। लगभग घंटे भर के भीतर-भीतर ही दूसरा, तीसरा और चौथा दल भी कुछ अन्तर से आ पहुँचा। तब आकर ज्ञात हुआ कि जनरल के असमय फायर कर इशारा करने के कारण इन दलों ने उसे समझा नहीं। ९ बजे से वे फायर की प्रतीक्षा करते रहे। १० बजे तक भी फायर न होने पर उन्होंने सोचा, जनरल ने अवश्य योजना में कुछ परिवर्तन कर दिया है। वे इसी प्रतीक्षा में अपने-अपने स्थानों पर जमे रहे कि शायद जनरल, आदमी भेज उन्हें खबर तथा निर्देश देंगे। पहाड़ी पर से तोप और बंदूकों की आवाज सुन समझा—नई योजना के अनुसार ही यह हो रहा होगा। सैनिक अनुशासन के अनुसार, फायर न होने पर, आक्रमण न कर जनरल के निर्देश की प्रतीक्षा करना ही उन्हें अधिक युक्ति संगत लगा। १२ बजे तक भी जब कोई खबर न आई तो आदमी भेज एक दूसरे दल से सम्पर्क स्थापित कर सलाह किया और लौटना तय कर, लौट आये।

कर्नल मॉबी ने दल के नेताओं को सब बातें बताईं और जनरल गिलेस्पी की मृत्यु का समाचार सुनाया। यह भी बताया कि जनरल की लाश के लिये उन्होंने आदमी भेज दिये हैं। लाश के आते ही वे अंतिम क्रिया कर लाश को यहीं दफना देंगे और पूरे दल के साथ आज ही दून शिविर लौट जायेंगे। कैम्प उखाड़, जाने की तैयारी करने की उन्होंने आज्ञा दी।

कुछ समय बाद—जनरल गिलेस्पी व कुछ अफसरों की लाश एवं कुछ घायल सैनिकों को लाने वालों ने कर्नल मॉबी को बताया कि जनरल गिलेस्पी की लाश पर कुछ फूल कलंगा (खलंगा) के अधिनायक बलभद्र कुँवर की ओर से मृत जनरल के सम्मान में चढ़ाये गये हैं। पहाड़ी पर अभी और बहुत सी लाशें पड़ी हैं। नेपालियों ने फिर आ उन्हें ले जाने के लिये कहा है।

सभी लाश ले आना सम्भव नहीं—बहुत समय भी लगेगा। कर्नल मॉबी ने कुछ सोच कर उनसे कहा कि वे अफसरों की लाशें यहाँ ले आवें। शेष जितनी हो सकती हैं उतनी लाशों को वहीं नदी या नाले के पास दफना दें, और इसमें तीन घंटे से अधिक किसी हालत में समय न लगे। ५ बजे तक उन्हें वापस शिविर में, काम समाप्त कर आना ही होगा।

जनरल के शव को यूनियन जैक से ढाँप कर पूरे सैनिक सम्मान के साथ, पीछे की ओर कुछ दूर, रिस्पना नदी के निकट दफना दिया गया। अन्य अफसरों की लाशें पास ही सामूहिक रूप से दफना दी गईं।

क्षति की गणना के अनुसार इस आक्रमण में काम आये—१ जनरल १४ अफसर २७ एन० सी० ओ० (छोटे अफसर) व २१३ जवान। घायलों की संख्या ४०० से ऊपर थी। कर्नल मॉबी ने यह सब अपनी डायरी में नोट किया।

पांच बजते-बजते शिविर उखड़ने के लिये तैयार था। पहाड़ी पर

गये सैनिक भी काम समाप्त कर लौट आये थे। सवा पांच बजे कर्नल मॉबी ने चलने की आज्ञा दी और सात बजते-बजते सभी दून शिविर लौट आये।

उसी रात कर्नल मॉबी ने अपने साथी अफसरों से सलाह कर दिल्ली से लम्बी मार करने वाली तोपों का तोपखाना और अधिक फौजें मंगवाने का निश्चय किया। पश्चिम में यमुना व पूर्व में गंगा के घाटों पर तथा दून घाटी के टिमली और मोहन दर्रे आदि पर फौज की टुकड़ियां भेज नेपालियों के भागने के मार्ग को अवरुद्ध करने का विचार किया। इन स्थानों पर कल ही टुकड़ियां रवाना होंगी— तय हुआ। विशेष पत्र लेकर कुछ तेज घुड़सवार, दिल्ली, रेजिडेन्ट साहब मिस्टर मैटकॉफ के पास, सवेरे ही चल पड़ेंगे निश्चित हुआ।

दिल्ली से जब तक और सेना व तोपखाना न आये तब तक आक्रमण न किया जाय, यह भी निश्चित हुआ।

सोलह

फिरंगी सेना के दून शिविर में लौटने की खबर पा बलभद्र कुछ देर तक विचार करते रहे, फिर सरदार रिपुमर्दन को बुलवा भेजा। आने पर बोले—"सरदार, फिरंगी सेना आज दून लौट गई है। लगता है जनरल गिलेस्पी को खो कर उनके पैर उखड़ गये हैं। पर इससे हमें असावधान नहीं रहना चाहिये। कल फिर आक्रमण हो सकता है। तुम गुप्तचरों की संख्या बढ़ा दो। दून शिविर में फिरंगियों की हलचल व उनके अगले कदम का विशेष रूप से भेद लेने को कह दो—तुरन्त ही।"

"बहुत अच्छा काजी।"—सरदार रिपुमर्दन उठ कर जाने लगे।

"और हाँ सबसे, चौक में भोजन के पश्चात जमा होने के लिये कह देना। मुझे उनसे कुछ कहना है।"

"हौस प्रभु"—जब सरदार चले गये तब बलभद्र ने पांडे को बुलवा भेजा। थोड़ी देर में पांडे आ पहुँचा। अभिवादन स्वीकार कर

बैठने को कहा और कुछ क्षण उसकी ओर देखकर पूछा—"घायलों की दशा अब कैसी है ?"

"अच्छी है प्रभु ! चूना, हल्दी आदि पहले ही बांध दिया था। अब काफी आराम है उन्हें।"

कुछ देर चुप रह कर वे पांडे को देखते रहे फिर धीरे-धीरे बोले—"पाँडे या कान्ता कहूं" - वे मुस्कराये। "खैर, आज के युद्ध में तेरे कौशल देख मैं प्रसन्न हुआ। दूसरे आक्रमण के समय स्त्रीदल का संगठन बहुत अच्छा किया तूने। सोचता हूँ, उस दल का संचालन अब से तुम्हीं करो तो अच्छा।"

पाँडे ने हाथ भर जोड़ दिये, बोला नहीं, केवल सिर कुछ झुका दिया। उसकी पीठ पर हलकी सी थपकी दे बलभद्र बोले—"परन्तु एक शिकायत है तुझसे—।"

"शिकायत प्रभु।"—आश्चर्य से पाँडे बोला।

"हाँ, परन्तु मुझे नहीं, छोरी माया को है।"—स्नेह भरे स्वर में वह बोले।

"उन्हें ? मुझसे शिकायत प्रभु ! क्षमा करें, मैं समझा नहीं।"

"माया से ही समझ ले फिर"—कह उन्होंने पुकारा—"को छ ? छोरी मायालाई पठाउ" (कोई है पुत्री माया को भेजो।)

पाँडे की समझ में कुछ न आया। अवाक मुँह खोले बलभद्र की ओर देखने लगा। बलभद्र कुछ मुस्कराये, बोले—"उतावले न बनो, छोरी आती तो होगी।"

माया जब आई तो कहा—"लो, यह हैं पाँडे। शिकायत की बात समझे नहीं। अब तुम ही समझा दो नानी।"

"ओ!"—पास बैठती माया बोली—"बुवा, पाँडे ने बड़ा अन्याय किया है मेरे साथ ! मुझे शायद छुई-मुई समझ लिया है, जो आगे स्त्री दल के साथ पर्खाल (दीवार) पर लड़ने से रोक, घायलों की देखरेख करने का काम दे दिया।"—कृत्रिम क्रोध प्रकट किया माया ने अपने

मुख के भावों से ।

पाँडे की जान मे जान आई । डरा हुआ था, कहीं माया ने कनक वाली घटना न कह दी हो । नम्र हो बोला—"काजी, अपनी तुच्छ बुद्धि के अनुसार मैंने जो ठीक समझा, किया । आखिर घायलों की देख रेख का काम भी बहुत जिम्मे का है ।"

"हाँ हाँ—और आगे बढ़ वीरांगना की तरह लड़ना मरना, कम जिम्मेदारी का काम है क्या ?" उसी तरह रूठने का अभिनय कर माया बोली ।

"क्षमा चाहता हूँ प्रभु!"—हाथ जोड़ पाँडे ने बलभद्र की ओर देखकर कहा—"मेरा और कोई मतलब नहीं था । माया देवा ममता-मयी हैं इसीलिये उपयुक्त काम में लगा दिया ।"

माया को हंसी आ गयी । बोली—"पाँडेज्यू ! यह कोई दलील नहीं । हर स्त्री ममतामयी होती है ।"

"हाँ—" धीरे-धीरे रुक कर बलभद्र ने सस्मित कहा—'हां पाँडे हर स्त्री ममतामयी होती है ।" उन्हें पाँडें के कान्ता होने का तुरन्त ध्यान हो आया था ! सोचा, कैसी विडम्बना है एक स्त्री दूसरी स्त्री को नारी की ममता पर शिक्षा दे रही है । वह मुस्कराये, समझ गये, पाँडे ने अपनी नारी सुलभ ममता के कारण ही ऐसा किया ।

"उचित है प्रभु, मुझसे भूल हुई । क्षमा चाहता हूं ।" पाँडे ने हाथ जोड़ दिये ।

आँख बंद कर धीरे-धीरे गम्भीरता से बलभद्र ने कहा—"मैं शायद समझता हूँ पाँडे कि तुमने ऐसा क्यों किया । इस खलंगा की हर कुमारी मेरी छोरी (पुत्री) है, हर बालक मेरा बालक है । हर माता मेरी माता है । हर युवा मेरा भाई और हर बुजुर्ग मेरा आदरणीय है । चाहता हूँ पाँडे तुम उसे समझ जाओ ।" —स्वर में वात्सल्य का पुट था ।

"समझ गया सरकार, अच्छी तरह समझ गया । मुझसे भूल हुई प्रभु! क्षमादान दीजिये ।"

"क्षमा ? नहीं दण्ड मिलेगा तुम्हें ।"—बलभद्र आंखें मूँद कुछ सोचने लगे ।

माया विचलित हो उठी । पिता के कथन ने उसके संदेह की पुष्टि कर दी कि पाँडे ने उसकी सुरक्षा का ध्यान रख कर ही उसे घायलों की देख भाल के लिये पीछे भेज दिया था । बेचारे ने अपनी ओर से तो भला ही सोचा था । भला ही किया था । ओह ! बड़ी भूल हुई पिता से कहकर । वह तो बस इतना ही चाहती थी कि उसे भी सबके साथ मिलकर देश की सेवा करने का अवसर मिले, सक्रिय भाग मिले । अब पिता, बेचारे पाँडे ज्यू को न जाने क्या दंड दें ।

द्रवित हो विनय भरे शब्दों में बोली,—"बुवा, क्षमा कर दीजिये पाँडे ज्यू को । उन्होंने मेरे भले की ही तो सोची थी ।"

"ना छोरी । दंड तो पाँडे ज्यू को मिलेगा ही ।"—फिर कुछ मुस्करा कर बोले—"तुझे अलग रख तेरे साथ अन्याय किया है न पाँडे ने ? तो अब तुझे अपने साथ रखेगा । जो काम पाँडे करेगा, तू भी वही करेगी । यही दंड है । ठीक है न ?"

कुछ हँस कर माया बोली—"हाँ बुवा ।"

पाँडे का साथ रहेगा, आगे पर्खाल पर जा लड़ सकेगी, सोच वह प्रसन्न हुई । पर कनक ? कनक की याद आते ही जाने जी कैसा हो गया ।

पाँडे ने लक्ष्य किया, काजी शायद उसके स्त्री होने की बात नहीं भूल पाये हैं, तभी ऐसा दण्ड दिया । उसने चुप रह सिर झुका लिया ।

"क्यों पाँडे कुछ कहना चाहते हो ?"—बलभद्र ने पूछा ।

"नही सरकार, आपकी आज्ञा सिर आँखों पर ।"

"बस अब जाओ । कल युद्ध में माया को अपने साथ रखना ।"

जाते हुये पाँडे को देखती रही माया । कुछ कृतज्ञता, कुछ सहानुभूति के भाव भर आये मन में । बोली—"बुवा पाँडे ज्यू... .....।"

बात काट बलभद्र ने कहा—"चिन्ता न करो नानी, मैंने जो किया

ठीक ही किया है।" और मुस्करा उठे।

रात चौक में सभी खलंगा निवासी उपस्थित थे। बलभद्र ने कहा—"देश के सपूतो! इस खलंगा के वीरो! माताओ! बालको! मुझे आज एक एक पर — तुम सब पर अभिमान है। तुमने आज अपनी अदम्य वीरता से शत्रुदल के दांत खट्टे कर दिये। एक एक ने सौ सौ बन युद्ध किया। शत्रु के प्रधान सेनापति का बहुमूल्य बलिदान ले लिया है तुमने। शत्रुदल के पाँव उखड़ गए, वे पीछे दून शिविर की ओर हट गये हैं। इस पवित्र अनुष्ठान के प्रथम दिन, विजय श्री तुम्हारे गले पड़ी है। आरम्भ शुभ हुआ है, इसका हमें अभिमान है, परन्तु इतना नहीं कि हम अपना कर्त्तव्य भूल जायें। अभी हमारी तपस्या का आरम्भ ही है। हमारी साधना अभी अधूरी है, अतः धैर्य, लगन और दृढ़ता से हमें उसे पूर्ण करना है। आज तो हमारी परीक्षा का प्रथम दिवस था। कल, परसों अभी कितने दिन परीक्षा हो, कठिन परीक्षा! हम सब अपने कर्त्तव्य की इस पावन परीक्षा में उत्तीर्ण होंगे। संग्राम की कसौटी पर खरे उतरेंगे, इसका मुझे पूर्ण विश्वास है। हम कट जायेंगे, मर जायेंगे, पर अपने देश के झण्डे को ऊँचे आकाश में फहराते रहेंगे। देव पशुपतिनाथ का वरद हस्त हमारे सिर पर सदा रहेगा। जय पशुपतिनाथ! जय नेपाल!"

उपस्थित सभी ने उन्मत्त हो पुकारा —"जय पशुपतिनाथ! जय नेपाल!"

बलभद्र फिर बोले—"साथियो! आज के युद्ध में हमारी जीत रही। इस अवसर पर, अपने प्राणों का बलिदान दे कर हमें विजय दिलाने वाले वीरों के प्रति, श्रद्धा से हमारा मस्तक नत है। हमारे २१ वीरात्माओं का बलिदान व्यर्थ नहीं जायेगा। सूबेदार सिद्धिचरण, खरदार शिवराम थापा, १६ वीर सैनिक, एक माता और दो पुत्रों के प्राणों की यह आहुति, हममें अविनाशी स्वतंत्रता की भावना को सदा जागृत करेगी। देश के लिए, जाति के लिए, अपने प्राणों का होम दे

वे वीर अमरत्व को प्राप्त हुए। वे आज से हमारे लिऐ देवतुल्य बन गये हैं। आज के सँग्राम यज्ञ में प्रसाद रूप शरीर पर घाव खाये हमारे ४२ वीर हमारे लिये प्रेरणा स्रोत बन गये हैं। इन सबके प्रति हम श्रद्धा के दो सुमन चढ़ाते हुए, अपने मन में दृढ़ संकल्प करें कि हम अंतिम साँस तक उनके दिखाये मार्ग पर आगे बढ़ते जायेंगे।''

उन्होंने दोनों हाथों को जोड़, माथे को श्रद्धा से झुकाया। उपस्थित सभी ने उनका अनुकरण किया।

धीरे २ वह फिर कहने लगे—''वीरो आज की विजय का रहस्य न केवल तुम सब की वीरता है, वरन सामूहिक सहयोग की शक्ति का भी है। जिस उत्साह से तुम सबने मिलकर पर्खाल उठाई, पत्थर जमा किया, तीर, धनुष, खुकुरी, बन्दूक व गोलियां बनाईं—वह आज फल दे गई। भविष्य में भी इसी तरह मिलकर साभूहिक रूप में सभी काम करेंगे, इसका मुझे विश्वास ही नहीं निश्चय है। कल सबेरे शायद फिर आक्रमण हो, फिर युद्ध की ज्वाला धधक उठे। आज की तरह, हम सब सामूहिक रूप में अपने २ कर्त्तव्य पालन कर अमरत्व को प्राप्त हों, यही मेरी कामना है, श्री भगवान से यही प्रार्थना है। धन्यवाद, जय नेपाल।''

उपस्थित नर नारी ने सामूहिक रूप से उत्तर दिया–'जय नेपाल।''

सबेरे पौ फटने से पहले ही गुप्तचरों से समाचार पा, बलभद्र विचार मग्न हो गये। सोचा, आक्रमण की एक ही असफलता ने कमर तोड़ दी है फिरंगियों की? सेना की छोटी २ पांच छः टुकड़ियों को इधर उधर भेज, फिरंगी बहुत थोड़ी सेना को दून शिविर में रखेंगे? इससे तो यही पता चलता है, आक्रमण अभी शायद दो चार दिन न हो। अच्छा ही है, दो चार दिन में वे खलंगा की सुरक्षा का साधन बढ़ा सकते हैं। पर्खाल कुछ और ऊंची व मजबूत बन सकती है।

पर, यह सेना के दलों को इधर उधर भेजना धोखा भी हो सकता है। उन दलों के पीछे गुप्तचर लगे तो अवश्य हैं, पर कहीं ऐसा न हो,

गुप्तचरों को भ्रम में डालने के लिये ऐसा किया गया हो ! हो सकता है गुप्तचर आपत्ति में फंस जांय या समाचार न दे सकें। आक्रमण की सम्भावना न होते हुये भी उन्हें व खलंगा के वीरों को असावधान नहीं रहना चाहिये ।

पास बैठे सरदार रिपुमर्दन से उन्होंने कहा—"सरदार, हम इस समाचार को पा असावधान नहीं रह सकते। शत्रुदल के पीछे गये गुप्त-चरों से समाचार आने तक हमें जरा भी असावधान नहीं रहना है। तुम इस बात को अभी किसी से न कहना। सूर्य निकलने के साथ ही हमारे सब वीर अपने अपने मोर्चे पर कल की तरह डट जांय। आक्रमण हो या न हो, वे अपने मोर्चे पर जमे रहें। जब तक मैं आज्ञा न दूं वहां से हटे नहीं। सूर्योदय में अब अधिक समय नहीं। तुम चलो अपने मुख्य द्वार वाले मोर्चे पर, मैं अभी आकर तुमसे वहीं मिलता हूं।"

सरदार मुख्य द्वार की ओर चले और बलभद्र चौक की ओर। राह में कनक मिला। अभिवादन का उत्तर दे बोले—"कनक, तुम्हारा मोर्चा कहां है—वहीं, कल वाले स्थान पर, दीवार के बढ़ूंकचियो में ?"

"जी सरकार।" कनक बोला।

"ठीक है, सूबेदार सिद्धिचरण का कार्यभार संभालने को कह दिया है न सरदार रिपुमर्दन ने ? मैंने कहला दिया था।"

"जी हां, आदेश मिल गया था, पूर्ण पालन होगा प्रभु !"—कनक ने हाथ जोड़ कर कहा।

"अच्छा जाओ"—कहकर बलभद्र आगे बढ़े।

चौक से होकर कई दल इधर उधर तेजी से जा रहे थे। किसी के अभिवादन का उत्तर बलभद्र ने हाथ उठा कर दिया, किसी का, सिर हिला कर और किसी का मुँह से बोल कर। आगे शस्त्रागार की ओर आये। काफी सिपाही गोली बन्दूक लेकर चले गये जान पड़ते थे। कुछ अभी वहाँ खड़े थे। सूबेदार महेन्द्रमल्ल गोलियां बांट रहे थे। बलभद्र ने 'जय नेपाल' कह उनके अभिवादन का उत्तर दिया। उपस्थित

सिपाहियों में से किसी के कन्धे पर हाथ रखा, किसी से उत्साह के कुछ बोल कहे और दीवार के पास, पत्थरों के ढेर की ओर, जहां औरतों का मोर्चा था, चले।

दीवार के पास पत्थरों का ऊंचा चट्टा लगा था। बगल में ही तीन चार सीढ़ियों के रूप में मचान बँधे थे। हर मचान पर पन्द्रह बीस औरतें बैठी थीं। नीचे जमीन के पास वाली मचान पर माया दिखाई दी। आज प्रसन्न जान पड़ती थी।

बलभद्र को देखते ही दौड़कर पास आई, और बोली—"बुवा, देखो आज यहां कुछ जोड़ दिया है पाँडे ज्यू ने! सबसे ऊंची मचान के पीछे उससे छोटी, उसके पीछे उससे छोटी, उसके पीछे उससे भी छोटी, और अन्त में यह मचान, सबेरे अंधेरे ही हमसे बंधवा दिया। सबसे ऊपर वाली मचान पर पन्द्रह-पन्द्रह औरतों के दो दल रखे हैं, जो बारी २ पत्थर फेंकेंगी। इस दूसरी मचान पर खड़ी औरतें अपने से नीचे वालियों से पत्थर पकड़ ऊपर देंगी। इस तरह बुवा, पत्थरों की काफी समय तक निरंतर वर्षा की जा सकती है।"—प्रसन्नता से वह खिल सी उठी।

"हूँ!" सोचते से बलभद्र ने कहा—"तरकीब तो अच्छी जान पड़ती है पाँडे की!"

"बहुत अच्छी है बुवा! कल रात चौक से लौटते हुए पाँडे ज्यू ने मुझसे सलाह की थी।"

"अच्छा! अब तुझसे सलाह भी लेने लगा है पांडे? कल तो पीछे भेज दिया था तुझे—तभी तो रो रही थी कल!—" स्नेह से बलभद्र ने कहा।

"रोई कहाँ थी बुवा मैं? मैंने तो अपना अधिकार भर मांगा था हाँ!"—दुलार से माया बोली।

"भई वाह! कल शिकायत लेकर आई थी पांडे की! आज तुझसे जरा सलाह ले ली—यहाँ मोर्चे पर जरा रख दिया तो ...... ।"

बात काट हंसती हुई माया बोली—"बुवा दंड तो आपने ही दिया था पांडेज्यू को !"

"अच्छा-अच्छा"—हँस कर बलभद्र बोले—"पर पांडेज्यू हैं कहाँ ?"

"उधर नीचे की ओर, अन्य पत्थरों के मोर्चे पर गये हैं। यहां इस पहले, द्वार के निकट वाले मोर्चे पर मुझे देखभाल के लिये छोड़ गये हैं—आते ही होंगे। आपके पास भेज दूँ बुवा ?"

"नहीं, यों ही पूछ रहा था। देखना चाहता था, दंड कैसे भुगत रहा है।"

वह हँस पड़े। माया ने साथ दिया। बलभद्र ने कुछ नीचे की ओर बंदूक वालों के मोर्चे की ओर देखा फिर माया की ओर देख अनजान बनकर कहा—"अच्छा ! कनक का मोर्चा निकट ही है—सुन्दर, बहुत सुन्दर !"

कहते-कहते लज्जा मिश्रित मुस्कान लिये सिर झुकाती माया को छोड़, ऊपर मुख्य द्वार की ओर चले गये।

सूर्य निकलते-निकलते खलंगा के सभी वीर अपने-अपने मोर्चों पर डट गये थे। साल वृक्षों से छन-छन कर आती सवेरे की सुनहली धूप धीरे-धीरे आकाश में ऊपर उठने लगी। वे अब पहाड़ों से काफी ऊपर उठ आये थे, पर शत्रु का आक्रमण न हुआ। शत्रुदल की हलचल का कोई लक्षण न दिखाई दिया। किले के बाहर फैले सैनिकों से भी कोई समाचार प्राप्त नहीं हुआ। सभी चकित थे। यह क्या हुआ ? शत्रु क्या आक्रमण नहीं करेगा ? सब सोचते रहे पर समझ में कुछ न आया। बस मोर्चे पर डटे बैठे रहे।

सूर्यदेव अब आकाश में काफी ऊंचे उठ गये थे। किरणों में काफी गरमी व तेजी आ गई थी। बलभद्र ने सरदार रिपुमर्दन से कहा—"लगता है आक्रमण नहीं होगा सरदार, पर दल के पीछे गये गुप्तचरों ने अभी तक समाचार भेज पुष्टि नहीं की।"

"मुझे भी ऐसा ही लगता है काजी ! दून शिविर से इधर तक हमारे गुप्तचर फैले हुए हैं। इस ओर सेना के चलते ही वे अवश्य खबर करते।"

"हां, फिर भी दोपहर या उसके कुछ देर बाद तक प्रतीक्षा करें। तब तक सबको अपने २ स्थानों पर ही रहने दो।"

"उचित है काजी। बिना आपकी आज्ञा के वे हटेंगे नहीं—वहीं बैठे रहेंगे।"

सूर्य और ऊपर आकाश में चढ़ते गये, पर न कोई आक्रमण हुआ, न कोई खबर मिली—सबने सोचा। पर अपने मोर्चे के मचान के नीचे खड़ा कनक, ऊपर पत्थरों वाले मोर्चे की ओर देख सोचता रहा—माया और पाँडे के बारे में। आज उस मोर्चे पर पाँडे के साथ माया है। बहुत प्रसन्न जान पड़ती है माया ! कैसे हंस-हंस कर बातें कर रही है ! काश ! पाँडे के स्थान पर वह होता ! विचार आते ही उसे सरदार रिपुमर्दन पर और कुछ-कुछ बलभद्र पर भी क्रोध आया। सरदार रिपुमर्दन ने उसे बंदूक वालों के साथ रख दिया। बलभद्र ने ही पाँडे को स्त्रियों के दल का संचालन दिया होगा। क्या बलभद्र उसे अपने मित्र के पुत्र को, यह काम नहीं दे सकते थे ? उसे अपने पर भी क्रोध आया। क्या वह स्वयं बलभद्र से कह कर इस काम को अपने हाथों में नहीं ले सकता था ? पाँडे 'छट्टू' (चालाक) है। अवश्य उसी ने काजी से कहा होगा।

सोचते-सोचते उसे पाँडे पर क्रोध आया। घृणा से मन भर उठा। ऊपर वाले पत्थर के मोर्चे से मुँह फेर लिया। मुँह तो फेर लिया पर मस्तिष्क पर छाये माया का चित्र धुँधला न हो सका। माया ! अपनी माया न ? फिर वह पांडे से अधिक सम्पर्क क्यों रखती है ? मेरे मनोभावों को जानते हुए भी उसका पांडे से इतना घुलना-मिलना ! उसे माया पर भी क्रोध आया। वह किले के अधिपति की पुत्री है—तो सब कुछ कर सकती है ? पांडे के साथ-साथ काम कर

सकती है, साथ-साथ मोर्चे पर लड़ सकती है, तो मेरे साथ भी तो कर सकती है ! क्यों नहीं वह मेरे साथ-साथ रहती—काम करती—लड़ती, जब कहने को तो कह जाती है—'अपनी माया !' पांडे के प्रति मेरे भाव जानते हुए भी उसके निकट जा रही है। मुझे चिढ़ाती है, जलाती है या खिलवाड़ करती है ?

सोचते-सोचते मन खिन्न हो उठा। विचारों में डूब गया, इतना कि माया का आना जान नहीं पाया।

"यह खोये खोये क्या सोच रहे हो ?" माया ने तनिक हंस कर पूछा।

कनक बोला नहीं, बस विचित्र दृष्टि से उसकी ओर देखता भर रहा।

"ऐसे क्यों देख रहे हो ?"—माया ने कहा, "ध्यान कहीं और है क्या ?" वह हँस पड़ी, "नीचे से कुछ खबर तो नहीं आई ? मुझे पूछने भेजा है आपके पास, पांडे ज्यू ने।"

फिर पाँडे ज्यू ! उसने भेजा —माया स्वयं नहीं आई, सोच कनक का मन और भारी हो गया। संक्षिप्त, कुछ रूखा कुछ तीव्र सा उत्तर दिया—"नहीं।"

"ओ हो ....!"

कुछ कहना चाह कर भी माया कनक का मुख देख, कह न सकी ! चुपचाप करुण दृष्टि से क्षण भर देखा और मुड़ चली। कनक वैसे ही खड़ा रहा।

पाँडे के पास पहुँच माया ने कहा कुछ नहीं, केवल सिर हिला कर बता दिया—नहीं। पाँडे ने लक्ष्य किया उसके मौन को, उसके आनन को उसकी गम्भीरता को। समझा बहुत कुछ, कहा कुछ नहीं, चुप ही रहा,

दोपहर का सूर्य कुछ पश्चिम की ओर ढुलक चुका था, जब कुछ समय के भीतर-भीतर ही बलभद्र को, दल के पीछे गये लगभग सभी गुप्तचरों से समाचार प्राप्त हुए।

एक ने बताया, एक दल मोहन घाटी पर शिविर लगा चुका है, और एक दल टिमली घाटी पर। एक दल पश्चिम की ओर चला गया है, यमुना की ओर। उसका लक्ष्य कालसी है।

दूसरे ने बताया, पूर्व की ओर एक दल ऋषिकेश के निकट पहुँच हरिद्वार की ओर मुड़ चुका है।

तीसरे ने खबर दी, दो घुड़सवार सहारनपुर होते हुए मेरठ की ओर गये हैं। हरकारे जान पड़ते हैं।

चौथे ने बताया दून शिविर में अभी तक कोई हलचल नहीं। शत्रु सेना की कोई तैयारी नहीं।

गुप्तचरों को बिदा कर बलभद्र ने सरदार रिपुमर्दन से कहा—"सरदार, अब निश्चय हो गया है, आज आक्रमण न होगा। शायद दो चार दिन तक न हो। मेरठ की ओर हरकारे का जाना स्पष्ट संकेत करता है कि वे अब की बार आक्रमण की जोर-दार तैयारी कर रहे हैं। शायद और सेना, और तोपखाना आदि मंगवाया हो। उधर दर्रों पर शिविर का लगाना, शायद हमारे निकल भागने के रास्ते पर रोक लगाने के इरादे से किया गया हो।"

रिपुमर्दन ने कहा—"हां काजी, ऐसा हो सकता है।"

"हमें भी तैयारी करनी है—जबरदस्त तैयारी! लगता है आंधी बन आने वाली फिरंगी सेना अब की बार प्रलय बन खलंगा पर गिरना चाहती है। सरदार! पशुपतिनाथ की कृपा से यह दो-चार दिन हमें मिल गये हैं। हमें इसका पूरा पूरा उपयोग करना होगा। पखालि और ऊंची व मजबूत बनानी होगी। पत्थरों का और संग्रह करना होगा। अस्त्र-शस्त्र अधिक से अधिक संख्या में ढालने होंगे—बनाने होंगे।"

"ऐसा ही होगा काजी, ऐसा ही होगा!"—सरदार रिपुमर्दन ने कहा।

"कल भी दोपहर तक यदि आक्रमण न हुआ तो एक बार फिर मैं प्रधान सेनापति अमरसिंह थापा को, नाहन के रणजोर सिंह थापा

को, निकटवर्ती प्रायः सभी नेपाली किलों के अधिपतियों को और प्रधान आमात्य भीम सिंह थापा को पत्र भेजकर पांच हजार थर सेना (सहायक सेना) तुरन्त भेजने की प्रार्थना करूंगा । अभी जा कर हर मोर्चे पर पांच-पाँच आदमी रख, शेष को गोलियाँ बनाने, पत्थर लाने, पर्खाल बनाने आदि कामों में खटा (लगा) दो । किले के बाहर गये सैनिकों को भी बुलवा लो । कितने हैं वहाँ, तीस न ?''

"हां काजी, केवल तीस हैं ।"

"तो छः को छोड़ शेष को बुला लो । देखभाल करने के लिये छः काफी होंगे ।''

"बहुत अच्छा काजी, बिदा पांउ ।'' कह अभिवादन कर सरदार रिपुमर्दन चले गये ।

समाचार व आदेश पाते ही सभी मोर्चे से सैनिक लौटने लगे। खलगा में चहल पहल बढ़ गई । कनक भी अपने दल के साथ लौटा। माया को अन्य स्त्रियों के साथ भेज, केवल पाँडे अपने स्थान पर खड़ा था । कनक निकट आया तो साथ हो लिया । बोला—"दाज्यू सुनो ! "

कनक बोला नहीं, चाल धीमी अवश्य कर दी, दल से कुछ पीछे हो गया ।

"कनक दाज्यू ! आप सब गलत समझ रहे हैं ।"

कनक ने घृणा से उसकी ओर देखा, बोला—"अच्छा !''

दूसरी ओर मुड़कर थूका और आगे बढ़ गया ।

पाँडे को बुरा लगा, बहुत बुरा ! चाल धीमी कर पीछे रह गया !

सत्रह

दस दिन बीत गये। खलंगा पर शत्रुओं का आक्रमण न हुआ। उस एक दिन के आक्रमण के कारण किले के जीवन में जो थोड़ा बहुत तनाव आ गया था, उसका प्रभाव अब नष्ट-प्राय हो चुका था। फिर से पुरानी हलचल आरम्भ हो चुकी थी। गोली बंदूक ढलने लगे। पत्थरों का संग्रह होने लगा। तीर धनुष, भाले खुकुरी अधिक से अधिक संख्या में बनने लगे। सारा वातावरण आक्रमण से पहले के वातावरण सा हो चुका था। सब कुछ पहले सा ही हो गया था, पर कनक और पाँडे पहले जैसे न थे।

इन दस दिनों में कनक ने माया को छाया की तरह पाँडे के आगे पीछे देखा—हर काम में साथ-साथ, सदा हँसते बोलते हुए। देख देख कर कनक को कितनी ईर्ष्या हुई, कितनी जलन ! पाँडे की सूरत से, उसके नाम तक से उसे घृणा हो गई। जी चाहता है खुकुरी से उसका गला उड़ा दे !

पहले की तरह अपने पुराने काम, दीवार बनाने के काम में कनक जुटा सोचता रहता ! पहले ही की तरह माया, कांछी व पाँडे गारा मसाला बनाने में लगे हैं। पहले ही की तरह माया तसला दे जाती है पर बोलती बहुत कम ! वह स्वयं भी बहुत गम्भीर हो गया है। एक दूरी सी बढ़ गई है दोनों के बीच, और इसका जिम्मेदार है—पाँडे ! अब पाँडे उसके पास नहीं आता। माया जब आती है तो दूर वहीं से खड़े खड़े देखता है जैसे—'जमालो आग लगाये दूर खड़ी तमाशा देखे।'

इसी समय तसला लिये कांछी आई। ऊपर मचान पर चढ़, बोली—"दाज्यू ! आजकल बहुत गम्भीर रहते हो ?"

कनक ने कुछ न कहा, तो कांछी बोली—"तुम्हारा दुख मैं समझती हूँ दाज्यू ! चाहो तो तुम्हारा कांटा मैं निकाल दूं।"

कनक फिर भी न बोला। कांछी की ओर मुड़कर देखने भर लगा।

कांछी बोली—"टोना सा कर दिया है शायद पाँड़े ने माया पर ! काजी भी बहुत प्रभावित जान पड़ते हैं, तभी तो इतनी खुली छूट दे रखी है उसे !"

कनक बिना बोले उसे देखता रहा। इससे भी लक्ष्य किया है जान आश्चर्य हुआ।

"दाज्यू ! पांडे का माया से मेलजोल मुझे अच्छा नहीं लगता। तुम्हारा दुख भी देखा नहीं जाता। भीतर ही भीतर घुट-घुट कर क्या हो गई है हालत तुम्हारी ! यह पांडे तुम्हारे और माया के बीच दीवार है—तोड़ना ही होगा। विषैला कांटा है, निकाल बाहर फेंकना ही होगा दाज्यू !"

"पर कैसे ?" कनक के मुख से अनायास प्रश्न निकल ही पड़ा।

"हाथ पर हाथ धरे चुप बैठने से तो कुछ होगा नहीं दाज्यू ! प्राणों पर खेल, किले से बाहर आज रात को जा सकोगे ?"

"किले से बाहर आज रात को ? क्यों कांछी ?"

"इसलिये कि पाँडे कल रात बाहर गया था, आज भी जायेगा।"

"पांडे गया था—पांडे ? पर तुझे कैसे मालूम ?"

"कल रात के प्रथम प्रहर में मैंने स्वयं उसे काजी से जाने की आज्ञा लेते हुए सुना। मैंने द्वार की आड़ से सुना काजी ने कहा—'जा पाँडे, कल भी जाना चाहे तो चले जाना, मिल आना पर किसी को मालूम न होने पाये।"

"काजी की आज्ञा लेकर गया है तो उनके काम से गया होगा।"

"तुम भी निरे बच्चे हो दाज्यू !"—कुछ हँस कांछी बोली—"काजी ने कहा था, 'जाना चाहो तो चले जाना—मिल आना। किसी काम के लिये थोड़े ही भेजा होगा ? सुनो दाज्यू, पाँडे अपने किसी से मिलने गया था कल रात, आज भी जावेगा। और फिर किसी को मालूम न होने की बात क्यों ? काजी तो किले के स्वामी हैं, जो चाहें खुले आम कर सकते हैं फिर यह सब इतना रहस्यमय क्यों ?"

"अवश्य कुछ बात होगी। कुछ भेद होगा, तभी तो काजी ने स्वीकृति दी।"

"यही तो मैं भी कहती हूँ कुछ भेद है। किसी लड़की से, या फिर अपनी जहान (पत्नी) से भी तो वह मिल सकता है। माया के सामने भंडाफोड़ कर देने से कांटा निकल सकता है दाज्यू !"

कुछ सोच कनक ने कहा—"और यदि ऐसी कोई बात न हुई तो ?"

"तो पांडे से साफ-साफ कह मामला इधर या उधर कर ही सकते हैं।"

पाँडे के रहस्य की जानकारी न भी हो, वह अकेले में खुल कर पांडे को डांट डपट तो सकता है—झाड़ लताड़ सकता है—सोच कुछ प्रसन्न हो कनक बोला—"हां कांछी यह तो हो सकता है। मैं तैयार हूँ पर जाना सहज नहीं। यहाँ काम जो कर रहा हूं।"

"सिर दर्द का बहाना बना लेना।"—मुस्करा कर कांछी बोली,

"और दाज्यू वह रात के दूसरे प्रहर के लगभग अंत में उधर पूर्व की तरफ, पहाड़ी के दूसरी ओर गया था। पानी लाने वाली पगडण्डी से।"

रात में, पांडे से मिल, उस पर सारा क्रोध उतार सकने की कल्पना कर कनक प्रफुल्लित हो बोला—"ठीक है काँछी, मैं जाऊँगा, आज रात जाऊंगा। मेरी खोज खबर हो तो तू बात मिला देना—मामला संभाल लेना।"

"अच्छा दाज्यू, अब जाऊँ।"

कह कांछी खाली तसला ले मचान से उतरने लगी। फिर रुक कर धीरे से बोली—"दाज्यू! बस इतना करना कि माया का ध्यान आज से पांडे छोड़ दे!"

कनक बोली नहीं, केवल सिर हिला कर स्वीकृति दी।

कांछी उतर कर चली गई, सोचती हुई—पांसा फेंक दिया है, देखें हार होती है या जीत! जब से माया पांडे के निकट आई है, मुझसे हंसना बोलना तक छोड़ दिया है न उसने!

मस्तिष्क ने जो सोचा हृदय ने उसका साथ न दिया। ईर्ष्या वश कहीं कनक कुछ अनर्थ न कर दें! कहीं पांडे को कुछ हो जाये तो! शायद ठीक नहीं किया उसने कनक से कह कर! हृदय कचोटने लगा, बुरा किया है कनक से कह कर! कहीं कनक हद से आगे न बढ़ जाये! अनिष्ट थोड़े ही चाहती है वह पांडे का! बस केवल इतना ही कि वह माया का ध्यान छोड़—मेरी ओर झुक जाये। जी में आया, लौट चलूं कनक से कह दूं—न जाओ, पर जाने क्यों न लौट सकी। आगे बढ़ती गई।

उस रात पांडे का पीछा करते हुए जब कनक काफी दूर आ गया तो तेजी से कदम बढ़ा पास आया। पांडे ने पदचाप सुनी, और तुरन्त दाब से खुकुरी निकाल ली, रुक गया।

कनक ने पास आ व्यंग से कहा—"पांडे ज्यू! घबराओ नहीं मैं

हूँ कनक ! रात की सैर में विघ्न तो नहीं पड़ा ?"

"तुम कनक दाज्यू ! तुम, यहां इस समय ?"—आश्चर्य से पाँडे ने कहा। खुकुरी दाब में डाल दी।

"हां मैं ! क्यों ? आश्चर्य हुआ क्या ?"

फिर स्वर में रूखापन ला बोला—'कहां जा रहा है और क्यों ?"

"काम से जा रहा हूँ दाज्यू ! मैं काजी की जानकारी में आया हूँ।" पांडे बोला।

'मैं जानता हूँ, पर किससे मिलने जा रहा है ? किसी लड़की से, अपनी प्रेयसी से ?"

"दाज्यू ! ऐसा न बोलो !"

"किसी से मिलने आया है, इतना जानता हूँ। पूछता हूँ किससे ?"

"बता नहीं सकता दाज्यू ! क्षमा करें।"

"या बताना नहीं चाहता ! खैर ! मैं तुझसे आज एक बात का फैसला करना चाहता हूँ—माया का ! माया मेरी है ! मेरे उसके बीच आने वाले को मैं सहन नहीं कर सकता। तू बीच में कूद पड़ा है पांडे, खैर चाहता है तो ......"

बात काट कर पांडे ने कहा—"दाज्यू तुमने सब गलत समझा है।"

घृणा से कनक बोला—"हां !—माया के आसपास नाचता रहता है, साथ-साथ हंसता बोलता है। साथ रहते-रहते जड़ वस्तुओं में भी स्नेह का ज्ञान हो जाता है !—यह सब मैंने गलत समझा है—हां ?"

"हां दाज्यू !" दृढ़ता भरे स्वर में पांडे बोला—"तुमने सब गलत समझा है।"

"तो तू ही समझा दे न ! यह सब गलत है तो ठीक क्या है ! बोल—माया और तेरा क्या सम्बन्ध है ?"

"दाज्यू !"— कुछ तीव्र स्वर में पाँडे बोला—"मैं कुछ नहीं समझा सकता। समय आने पर सब समझ जाओगे। अभी इतना ही

कह सकता हूं कि तुमने सब गलत समझा है—बस।" मुड़ कर वह जाने लगा।

कनक को अपनी असफलता पर क्रोध हो आया। झपट कर उसने पांडे की बाँह पकड़ली। झटका देकर पांडे का मुंह अपनी ओर कर जोर का थप्पड़ मारा। पाँडे को शायद इसकी आशा न थी, संभलते संभलते भी गिर पड़ा। पगड़ी दूर जा पड़ी, सिर के बंधे बाल खुल कर फैल गये। पाँडे ने पड़े-पडे हाथों से मुंह ढांप लिया।

ठोकर मारने के लिये उठा कनक का पैर उठा का उठा ही रह गया। पांडे के सिर में लम्बे-लम्बे औरतों से बाल बिखरे दिखाई दिये—आश्चर्य हुआ! झुका घुटनों पर बैठ गया। बलपूर्वक पांडे के हाथ मुख से हटाये। वृक्षों के बीच से आती हल्की चांदनी में गौर से देखा और चौंक पड़ा – मुख से निकला—"कान्ता!"

कान्ता ही पाँडे है! कान्ता ही पांडे है? ओह! मस्तिष्क घूमने सा लगा। तुरन्त संभल कर कान्ता को उठाते हुये दीनता भरे स्वर में बोला—"कान्ता! मुझे क्षमा करो, मुझे क्षमा करो, कान्ता!"

कनक के सहारे उठती कान्ता ने कहा—"दाज्यू, तुमने सब गलत समझा था न?"

"हां कान्ता! मैंने गलत समझा, मैंने सब गलत समझा कान्ता, मुझे क्षमा करो।"—कहते २ वह हाथ जोड़, रो पड़ा।

कान्ता ने उसके जुड़े हाथों को अपने हाथों में लेते हुये स्नेह से कहा—"दाज्यू! सब दोष तुम्हारा थोड़े ही है, मेरा भी तो है। मैंने यह सब तुमसे छिपाया था।"—उसकी आंखों में भी आँसू आ गये।

कनक के रुदन का वेग बढ़ गया। रोते-रोते बोला—"नहीं कान्ता, तुमसे कोई दोष नहीं हो सकता। दोष मेरा है, मेरा है—मुझे क्षमा करो कान्ता! मैं ईर्ष्या से अन्धा बन गया था।"

स्नेह से उसे अपनी ओर खींच कान्ता ने आंखों के आंसुओं को अपनी उंगलियों से पोंछते हुए कहा—"बस करो, बस करो कनक

दाज्यू ! मुझसे यह आंसू नहीं देखे जाते।"

स्वर आद्र और स्नेह पूर्ण था।

कुछ क्षण कनक उसी तरह रोता रहा, कान्ता उसी तरह हाथ पकड़े बैठी रही। दोनों चुप रहे। कनक आंखों से रोता रहा और कान्ता मन से। कुछ क्षण बाद स्वस्थ हो कनक ने कहा—"मुझसे आज बहुत बड़ा अपराध हो गया है— बहुत बड़ा अपराध ! मैं प्रायश्चित करूंगा—मैं प्रायश्चित करूंगा..........!"

कहते-कहते उसने अपने दोनों हाथ खींच लिये और पास पड़े एक पत्थर को उठा, देखते देखते अपने दांये हाथ पर दे मारा। फिर मारने के लिये पत्थर वाला हाथ उठाया ही था कि कान्ता ने पकड़ लिया। बोली—"बस करो दाज्यू ! बहुत हो चुका !"

और कनक के हाथ से पत्थर छीन कर दूर फेंक दिया। फिर स्नेह से चोट खाये दांये हाथ को अपने दोनों हथेलियों में दबा, आँखें मूँद, स्नेह भरे स्वर में बोली—"कनक ! अब ऐसा कभी न करना, मुझे दुख होता है। चोट तुम्हें नहीं, मुझे लगती है।"

'तो मुझे क्षमा कर दो न कान्ता ! मुझे क्षमा कर दो। जीवन भर, आत्मा पर इस अपराध का बोझ बहुत भारी बना रहेगा कान्ता !" कनक विनय भरे शब्दों में बोला।

कान्ता भावुक हो उठी, हृदय का माधुर्य पिघलने लगा। आँखें मुँद गईं।

"क्षमा करो कान्ता ! लो तुम्हारे चरण छूता हूँ।"

कहते २ वह सचमुच कान्ता के चरणों पर झुक गया।

बीच में ही उसे रोक दिया कान्ता ने, और क्षणिक भावुकता में बह, एकाएक कनक को अपनी भुजाओं में बाँध कर गले से लगा लिया। क्षण भर—बस केवल क्षण भर ! तुरन्त सजग हो धीरे-धीरे उसने कनक को छोड़ दिया।

क्षण भर—केवल क्षण भर यह क्षणिक मिलन रहा, पर कान्ता

की आत्मा के लिये मानो यह युग-युग का अमर मिलन था। कान्ता को लगा—मुक्ति पाने पर, आत्मा और परमात्मा का मिलन कुछ ऐसा ही होता होगा।

कनक इस स्नेह प्रदर्शन का अर्थ न समझ सका। बोला—"क्षमा कर दो कान्ता!"

अपनी भावुकता पर विजय पा कान्ता बोली—"मैंने तुम्हें सचमुच हृदय से क्षमा किया कनक दाज्यू! अब किले में लौट जाओ। मैं भी जाऊं, देर हो गई।"

प्रसन्न हो कनक बोला—"कान्ता, ऋषिकेश में पत्र दिलवा तुमने मुझे मानदान दिया था। आज क्षमा कर प्राण दान दिया है। मैं जन्म जन्मान्तर तुम्हारा आभारी—तुम्हारा ऋणी रहूंगा।"

कान्ता ने जमीन मे गिरी पगड़ी उठा, बालों को समेटा और पगड़ी बांधती हुई बोली—"मेरा भेद अपने तक ही रखना दाज्यू। माया से भी नहीं कहना, मेरी सौगन्ध है तुम्हें।"

"किसी से भी नहीं कहूँगा। आज से यह तुम्हारा भेद मेरा अपना भेद है कान्ता।" उत्साह से कनक बोला।

"जानना चाहते हो, मैं कहां जा रही थी, किससे मिलने? बताऊं?" कान्ता बोली।

"नहीं, नहीं कान्ता!"—कानों को हाथों से ढांपते हुये कनक ने कहा—"नहीं अब अधिक लज्जित न करो।"

"अच्छा, दाज्यू तुम जाओ। मैं थोड़ी देर में आ जाऊंगी।"

आज्ञाकारी बालक की तरह कनक चुपचाप मुड़ कर जाने लगा। चांद के हल्के प्रकाश में कान्ता देखती रही उसे, कुछ सोचती हुई, फिर विरुद्ध दिशा की ओर मुड़ चली।

तीन दिन बीत गये—

इन दिनों कांछी ने लक्ष्य किया, उसी तरह माया पांडे के साथ साथ रहती है, काम करती है। उसी तरह हँसती बोलती है, पर कनक

अब पहले सा न गम्भीर घुटा-घुटा सा रहता है, न कटा-कटा सा। आजकल प्रसन्न जान पड़ता है। अक्सर पांडे और माया के पास आ कुछ देर हँस-हँस कर बातें भी करता है। पूछने पर तो उसने केवल यही कहा था—'उस रात पांडे का पीछा नहीं कर पाया। न जाने वह कब किस मार्ग से चला गया था। दूसरे दिन पांडे से कुछ समझौता अवश्य कर लिया है' बहुत पूछने पर भी न बताया क्या समझौता किया! हँस कर टालता ही रहा—खुला नहीं। वह स्वयं पांडे से ही क्यों न पूछ ले—भेद ले ले? ऐसे ही करने का निश्चय कर वह अवसर की प्रतीक्षा में रही।

माया अभी अभी तसला लिये कनक को गारा-मसाला देने गई है। कुछ देर रहेगी। अभी वह और पांडे अकेले हैं। इससे अच्छा अवसर और कौन सा हो सकता है। सोच पांडे के कुछ निकट आ मुस्करा कर स्नेह सिक्त स्वर में बोली—"पांडे ज्यू!"

पांडे ने हाथ के फावड़े को रोक, कहा—"हां, क्या है कांछी?"

"एक बात पूछूं पांडे ज्यू?

"हां कांछी, पूछो न।"

"कनक आज दो तीन दिन से प्रसन्न जान पड़ते हैं। पहले तो कुछ उदास, गम्भीर खोये-खोये से रहते थे। यह परिवर्तन कैसे हुआ पांडे ज्यू?" —कांछी ने पांडे की आंखों में देखते हुए पूछा।

कांछी के मन के भाव ताड़ते हुए पांडे ने कहा—"कनक से पूछो न कांछी। मैं भला क्या जानूं?"—और हंस पड़ा।

कांछी कुछ क्षण चुप रही, फिर प्रश्न बदल कर पूछा—"पांडे ज्यू, माया से—आपको—आपको स्नेह है?"

इस सीधे प्रश्न के लिए पांडे तैयार न था। बिना सोचे समझे मुख से अनायास निकला—"हां! हां...पर...पर क्यों पूछा कांछी?"

प्रश्न की अवहेलना कर, कुछ चोट खाये स्वर में कांछी ने पूछा—"कितना?"

पांडे संभल चुका था, हँस कर बोला—"जितना तुझ से पगली !"

'झूठ !"

"तो जितना एक भाई अपनी बहिन से करता है—उतना ! बल्कि उससे भी अधिक ! पर—पर तूने क्यों पूछा काँछी ?"

काँछी ने प्रश्न सुना नहीं ! एक विचार तेजी से उसके मस्तिष्क में घूमने लगा—भाई-बहिन ! भाई-बहिन का पवित्र स्नेह ! ओह ! कितना गलत समझा उसने, पांडे और माया के स्नेह को—भाई-बहिन के पवित्र स्नेह को ! तुरन्त हाथ जोड़ बोली—"पांडे ज्यू, अनजाने मुझसे एक बहुत बड़ी भूल हो गई। मुझे क्षमा करो—बहुत गलती हुई —बहुत गलत समझी।"

पांडे सब समझ गया था। हँस कर स्नेह से उसके हाथ पकड़े और बोला—"कांछी ! अच्छा हुआ तू समझ गई। माया और कनक एक दूसरे के लिये ही जन्मे हैं, समझी पगली ! कोई बाधा, कोई विघ्न, इन दो आत्माओं के मिलन में बाधक नहीं बन सकती ! समझी कांछी !"

स्नेह से पांडे ने कांछी के कपोलों पर हल्की सी थाप दी।

कांछी विभोर हो बोली—"पांडे ज्यू, कहीं यह युद्ध न बाधक बन जाय ?"

"नहीं—यह युद्ध भी बाधक नहीं बन सकता। सुन काँछी, एक बात बताता हूँ। आत्मा का एकीकरण तो माया कनक का हो चुका है, बस समाज के नियमानुसार शारीरिक एकीकरण होना भर है, सो मैं प्रबन्ध कर ही रहा हूँ उसका।"

"प्रबन्ध कर रहे हो, तुम ?—तुम पांडेज्यू ? भला कैसे ?"

"यह न पूछो कांछी, यह मेरा रहस्य है। मैं प्रयत्न कर रहा हूँ, मेरी सफलता के लिये प्रार्थना करना, पगली !"—वह हँस पड़ा।

"मैं अवश्य करूंगी पाँडे ज्यू, तुम्हारे लिये मैं सब कुछ करूंगी !"

"यह भेद अभी किसी को न बताना, माया को भी नहीं। सफल

होने पर. यह तेरा माया को उपहार होगा और मेरा कनक को।"

"किसी से भी नहीं कहूँगी पांडे ज्यू! अपने में ही रखूँगी। भगवान करे तुम सफल हो।"

और सचमुच एक सप्ताह के भीतर-भीतर पांडे सफल हुआ। माया कनक के स्नेह की भूमिका तो पहले जमा चुका था, अब विभिन्न दृष्टिकोणों से उस पर विचार कर. उस पर प्रकाश डाल, जोर दिया। युद्ध की ज्वाला में, स्नेहपालिता पुत्री के कोमल हृदय को भस्म न होने देने की प्रार्थना की। माया के ममतापूर्ण हृदय के स्वप्न को साकार करने की जिद्द की। युद्ध के परिणाम पर विचार किया, विजयश्री मिलेगी तो ठीक ही है। न भी होगी तो कम से कम, पिता की एक महत्वाकांक्षा—पुत्री की माँग सिंदूर से सुशोभित देखना, तो पूर्ण हो सकती है। युद्ध के भयंकर परिणाम स्वरूप, बलिदान की सम्भावना पर विचार प्रकट कर, दो एकाकार आत्माओं को सामाजिक एकता के बंधन में बांधने की प्रार्थना की। वंश चलाने के लिये उत्तराधिकारी के होने की परम आवश्यकता पर बल दिया। किले के बाहर बूढ़े शंकर बाज्या से बलभद्र को मिलवाया। उनसे भी अपनी बात की पुष्टि कराई। उनसे कहलवाया, समझाया, मनवाया और सचमुच बलभद्र कुँवर ने सप्ताह के अंत तक प्रसन्नतापूर्वक, गंधर्व विवाह के रूप में, माया का हाथ कनक के हाथों में सौंप दिया।

अठारह

२४ नवम्बर के दिन दिल्ली से तोपखाना व लगभग दो हजार सहायक सेना दून आ पहुँची। कर्नल मॉबी ने पूर्व, पश्चिम का, रास्ता रोके बैठी सेना के अधिकांश जवान कुछ दिन पहले ही वापस बुलवा लिये थे।

सवेरे २५ तारीख के दिन, कर्नल मॉबी ने, नाले के पास कुछ तोपें लगाकर गोलाबारी की। लम्बी मार करने वाली तोपें दिन भर आग उगलती रहीं। गोले दूरी के कारण अधिक हानि तो न कर सके, पर दीवार के निकट ही फूट कर उन्होंने कर्नल मॉबी को उत्साहित अवश्य किया। एक नया विचार भी उन्हें दिया। तोपों को किसी प्रकार पहाड़ी पर, दीवार के जितने निकट ले जाया जा सकता है, ले जाना चाहिये।

२६ तारीख के दिन, नाले पार के मैदान से ही कर्नल मॉबी ने, लम्बी मार करने वाली तोपों से दिन भर गोलाबारी की। उस गोलाबारी

की आड़ में हाथी पर चार छोटे तोप पहाड़ी के कुछ ऊपर ले जाने में वे सफल हुये। शत्रुओं से तीव्र विरोध मिला—इतना कि पहाड़ी पर ले जाये गये तोप लगाये न जा सके, लौट आये। इतना अवश्य सिद्ध हो गया कि तोप पहाड़ी पर ले जाये, जा सकते हैं। उनसे वहाँ काम लेना सम्भव है।

बलभद्र को शत्रु की सहायक सेना व तोपखाने की खबर २३ तारीख को ही अपने गुप्तचरों द्वारा मिल चुकी थी। किले की सभी तैयारियाँ पूर्ण थीं, पर फिर भी वे चिंतित थे। खलंगा में सैनिकों की संख्या, शत्रुदल की संख्या के सम्मुख नगण्य थी। कुछ नेपाली सहायक सेना के लिये उन्होंने कई पत्र लिखे थे, पर कहीं से भी न सहायक-सेना आई, न पत्रोत्तर। अभी दो तीन दिन हुये, केवल नाहन के रणजोरसिंह थापा का पत्र लेकर आदमी आ पहुँचा था। पत्र में सेना भेजने में अपनी असमर्थता दिखाई थी, क्योंकि उनके किले में ही सैनिक कम थे। हाँ कुछ उत्साहवर्द्धक समाचार अवश्य दिये थे कि नेपाल में हनुमान ढोका की राज सभा में प्रधान मंत्री भीमसिंह थापा ने, महाराजाधिराज श्री ५ गीर्वाण युद्ध विक्रमशाह व मुमा महारानी (राजमाता) के सम्मुख युद्ध की भीषणता दिखाते हुए धन की मांग की है। बताया, हजारों लाखों नेपाली आगे बढ़-बढ़ कर कहते हैं कि हमें हथियार दो, हम लड़ेंगे, पर हथियार बांटने के लिये हमारी सरकार के पास धन नहीं है। दून में खलंगा की तैयारी, खलंगा पर फिरंगियों का आक्रमण—नेपाली सैनिकों की अल्पसंख्या, बलभद्र का थप (सहायक) सेना की माँग—आदि-आदि कई बातें उस राज सभा में रखीं। फल क्या हुआ, कह नहीं सकते। अनुमान अवश्य कर सकते हैं, क्योंकि पक्ष बीत गया। कई दिन ऊपर हो गये पर कहीं से कोई सहायता न आई। सौ, दो सौ नेपाली सैनिक भी खलंगा के लिये न जुड़े!

रणजोरसिंह ने लिखा था, राजधानी से रेवन्त कुँवर तुम्हारी सहायता के लिये चल पड़े हैं, कुछ थोड़े सैनिक लेकर। पर कहाँ हैं वे

अभी तक नहीं आ पाये ? फिरंगी सेना की थप-सेना आ पहुँची है। कल से आक्रमण हो सकता है। फिर ? इस बार फिरंगी पूरी तैयारी कर आये हैं—प्रलय बन कर बरसेंगे ! यदि कल तक रेवन्त कुँवर न आ पहुँचे तो फिर उनका आना न आना एक समान बन जायेगा। अब तो जो भी हो—देखा जायेगा। रणजोरसिंह ने अपने पत्र के अन्त में लिखा है—'मैंने सहायता के लिये प्रयत्न किया पर सफल न हुआ। बस अब यही कह सकता हूँ, शिव के सम्मुख झुकने वाला नेपाली सिर, शत्रु की धमकी के आगे कभी नहीं झुकेगा, पूर्ण विश्वास लिये हूँ। लड़ो—विजय तुम्हारी—हमारी ही होगी।'—हाँ, ठीक कहा है ! आँधी तूफान में, प्रलय के भयंकर झंझावात में, शत्रुदल के आक्रमण की भीषण आग में झुलसते हुये भी यह सिर नहीं झुकेगा—नहीं झुकेगा !

२५ तारीख के दिन जब शत्रु सेना के तोप के गोले दीवार के काफी निकट फूटने लगे तो बलभद्र को चिन्ता हुई। पर चिन्ता करने से क्या हो सकता है—सोच दीवार पर अधिक सेना की टुकड़ियां जमा कर अपना कर्त्तव्य-पालन करने लगे। पर २६ तारीख के दिन शत्रुदल को हाथी पर तोप लेकर चढ़ने का प्रयत्न करते देख, समझ गये—महाप्रलय की घड़ी निकट आ चुकी है। हिम्मत न हारी। सैनिकों में अदम्य उत्साह का संचार किया। देश के लिये बलिदान होना अमर होना है—समझाया। मारो और मरो के मंत्र की सफलता पूर्वक शिक्षा दी। वीरता, बलिदान और कर्त्तव्य का एक संयुक्त वातावरण सजीव हो उठा खलंगा में।

२७ नवम्बर १८१४ का वह धूमिल प्रभात ! पूर्व में ऊषा अभी अपनी लाली फैला भी न पाई थी कि फिरंगी सेना के तोप नाले पर से गरज उठे। गोलों की धुआंधार वर्षा दो तीन घण्टों तक होती रही। कर्नल मॉबी हाथियों पर ६ तोप ले जाने व दीवार से तीन सौ गज की दूरी पर लगाने में सफल हो गये। तुरन्त उनसे गोले फेंके गये।

नाले पार से लम्बी मार करने वाले तोप अब चुप हो गये। आक्रमण करने वाले लगभग १५०० सैनिक पहाड़ी पर चढ़, आगे बढ़ने लगे।

पहाड़ी पर लगे फिरंगियों के इन तोपों ने खलंगा के भीतर भी यदा कदा फूट कर काफी क्षति पहुँचाई, पर काफी मोटी व ऊँची बनाई हुई पत्थरों की दीवार पर ही अधिक बिजली गिरी। ऊँची दीवार का ऊपरी हिस्सा नया ही बना था, कच्चा था, टूट-टूट कर गिरने लगा। दीवार पर लगे नेपालियों के लगभग सभी तोप भी टूट कर बेकाम हो चुके थे। केवल मुख्य द्वार का जिजल तोप बार-बार गरज रहा था। बलभद्र वहाँ खड़े गम्भीर हो पांसा पलटते देख रहे थे। कई सैनिक कई अफसर, कई स्त्रियां, कई बच्चे अमर हो चुके थे। कई घायल थे, पर लड़ रहे थे।

बलभद्र अधिक देर तक वहां टिक न सके। सरदार रिपुमर्दन को तोप चलाते रहने की आज्ञा दे, वे खलंगा के सभी स्थानों में घूम-घूम कर अपने सैनिकों को उत्साहित करने लगे। फिरंगी तोपों की मार से दीवार पर बने मचानों पर अड़ना कठिन हो रहा था। कनक व अन्य दलों को कुछ पीछे हट आढ़ लेने को कहा। पांडे से कह औरतों व बच्चों को पीछे की ओर भिजवाना चाहा पर पांडे ने बच्चों को ही, और उनकी देखरेख के लिये कुछ औरतों को पीछे भेजना मंजूर किया। दस औरतें, बच्चों को ले पीछे चलने लगीं — बच्चे अड़ गये। समझाया, केवल गोलाबारी के कारण उन्हें पीछे हटाया है। किले पर आक्रमण होते ही वे फिर आकर लड़ सकेंगे, यह आश्वासन पा बच्चे पीछे चले। दस औरतों में माया को भी उसकी इच्छा के विरुद्ध पांडे ने पीछे भेज दिया।

घन्टे भर की, फिरंगियों की निरन्तर गोलाबारी ने रंग दिखाया। किले की दीवार एक स्थान से काफी टूट कर गिर पड़ी। फिरंगी तोप चुप हुये और उत्साहित होकर आक्रमण करने वाले फिरंगी दलों ने तुरन्त हमला बोल दिया। मेजर इंगलेबी इस दल के प्रधान नेता थे।

बन्दूकों से फायर करते-करते यह दल दीवार के पास आ पहुँचा, जो अभी-अभी तोप के गोलों से टूट गई थी।

पर यह क्या ? टूटी हुई दीवार कहाँ है ? यहां तो दीवार पूरी जान पड़ती है ! क्या दीवार एक क्षण में बन चुकी ? नहीं-नहीं, जो कुछ देख रहे हैं उस पर सहसा देख कर भी विश्वास नहीं होता था। दीवार के उस टूटे हुये भाग में नेपाली वीरांगनाओं ने, कंधे से कंधा मिला, खड़े हो कर, अपने हाड़-मांस के जीवित शरीर से ही दीवार बना डाली !

पत्थरों की वर्षा करती हुई यह जीवित दीवार देख, वहां पहुँची फिरंगी सेना क्षण भर हक्की-बक्की रह गई। इतना ही समय काफी था। उन वीरांगनाओं की पत्थर वर्षा से कई फिरंगी सैनिक यमपुर पहुँच गये। मेजर इंगलेबी भी सिर पर पत्थर की चोट खा गिरे और लुढ़कते लुढ़कते नीचे आ गिरे। ले० हैरिंगटन ने यह देख उन औरतों पर गोली चलाने के लिये अपनी बंदूक उठाई, पर इससे पहले कि वे गोली छोड़ सकें, एक पत्थर ने उनकी कपाल क्रिया कर दी। घबरा कर दल कुछ पीछे हट गया और वृक्षों की आड़ ले फिरंगी सैनिक उन स्त्रियों पर गोलियां चलाने लगे।

उस जीवित दीवार से पत्थर बरसते रहे। बगल से तीरों की वर्षा ने उन्हें बल दिया। पर पत्थर, पत्थर ही थे और गोलियां, गोलियां ही। सामने की चार पाँच स्त्रियां गोलियों की चोट खा गिर पड़ीं। परन्तु उन्हें पीछे खींच अन्य स्त्रियों ने तुरन्त उनका स्थान ले लिया। अब दूसरी ओर से बंदूकचियों का एक दल भी उनमें सम्मिलित हो, फिरंगी दल की गोलियों का उत्तर देने लगा। गोलियों की बौछार दोनों ओर से होने लगी।

इधर दीवार पर कुछ स्त्रियां चोट खा गिरतीं तो तुरन्त अन्य स्त्रियां आकर उनका स्थान ले लेतीं और उधर कुछ फिरंगी सैनिक गिरते और पहाड़ी पर से लुढ़क कर दम तोड़ बैठते। कैप्टन कौल्टमैन के गिरते ही

यह दल हिम्मत तोड़ पीछे की ओर हट गया।

पास ही, एक दो अन्य स्थलों पर भी दीवार ऊपर से टूट कर गिर चुकी थी। इतनी कि आसानी से चढ़ी जा सके। कर्नल मॉवी ने कैप्टन स्टोन, ले० होर्सले, ले० ग्रीन, ले० बोर्डे आदि के नेतृत्व में दल को उधर से किले में घुसने की आज्ञा दी। फिरंगी सेना को उस ओर बढ़ते देख नेपाली सैनिकों ने जान की बाजी लगा दी। गोली, तीर भाले और पत्थरों की भयंकर मार की, पर संख्या अधिक होने के कारण फिरंगी दल के सैनिक बढ़ते चले आये। किले की दीवार पर पांच सात फिरंगी चढ़ आये, परन्तु नेपाली सैनिकों ने खुकुरी से वार कर उन्हें काट दिया। और चढ़े, और काटे गये। कैप्टन स्टोन, खुकुरी का वार बचा दीवार पर से किले के भीतर कूद गये। परन्तु वह भी नीचे खड़े कुछ बालकों के नोकीले बांस और भालों में बिंध कर रह गये।

इस मोर्चे पर स्वयं बलभद्र मचान पर खड़े लड़ रहे थे। एक हाथ में तलवार और एक हाथ में खुकुरी लिये वह दीवार पर चढ़ आने वालों को मौत के घाट उतार रहे थे। सरदार रिपुमर्दन 'जय गोरख! जय गोरख!' का नारा लगा अपने दल के साथ वही कर रहे थे। नीचे बालकों का वह छोटा दल ऊपर से कूदने व गिरने वालों को अपने भाले आदि से बींध रहा था। नीचे की ओर कुछ दूर पर कनक अपने बंदूकचियों के साथ स्त्रियों के दल की सुरक्षा में डटा था। पाँडे धनुष-बाण लिये, तीरन्दाजों के बीच से शत्रुदल पर तीरों की वर्षा में जुटा था। स्त्रियाँ दीवार पर बने मचानों पर खड़ीं पत्थरों की वर्षा कर रही थीं। नेपाली सैनिक, स्त्री-पुरुष-बालकों के छोटे-छोटे कई दल इस प्रकार दीवार के उस टूटे हुये भाग की रक्षा में जान हथेली पर लिये लड़ रहे थे।

इस प्रकार लगभग एक घंटे तक घमासान युद्ध होता रहा। किले की दीवार पर चढ़कर भी फिरंगी सैनिक किले में घुस न पाये। एक-एक कर अंग्रेज अफसर गिरने लगे। ले० होर्सले, ले० ग्रीन और ले० बोर्डे—

सभी ने अपने प्राणों से आक्रमण का मूल्य चुकाया। खलंगा में भी काफी आदमी मृत एवं घायल हो चुके थे, पर उनके लड़ने में शिथिलता न आई थी। वे जी जान से लड़ रहे थे। मारना मरना खिलवाड़ सा हो रहा था गुफा के द्वार पर शेर को खड़ा देख, जिस प्रकार गुफा में प्रवेश करना असंम्भव होता है, उसी प्रकार खलंगा की दीवार पर नेपाली शेरों को देख फिरंगी दल का खलंगा में प्रवेश असंम्भव हो गया। खलंगा के सैनिक प्राणों का मोह छोड़ कर लड़ रहे थे।

कर्नल मॉबी ने अपनी सेना को असफल होते देखा, अपने अफसरों को एक-एक कर मरते देखा। सैनिकों की भारी क्षति देखी, नेपालियों का जी-जान से लड़ना, मरना और मारना देखा और हार मान लौटना उचित समझा। थोड़ी देर में बची खुची निरुत्साह सेना लिये कर्नल मॉबी नाले पर पहुँच गये। गणना से ज्ञात हुआ लगभग ३३ अफसर मृत्यु को प्राप्त हुये थे। १४४ सैनिक खेत रहे और ४६३ के लगभग आहत हुये थे।

असफलता और लज्जा से लाल मुंह लिये कर्नल मॉबी ने पास मैदान में ही शिविर लगाने तथा किले के चारों तरफ तुरन्त घेरा डालने की आज्ञा दी। किले पर रोज लम्बी मार तोपों से गोलावारी करते रहने का आदेश दिया।

दूसरे दिन सबेरे से ही किले पर फिर से गोलाबारी की गई। तीन घंटे तक तोप गरजते रहे, आग बरसाते रहे। कल की हार का मानो प्रतिशोध लेने के लिये कर्नल किले व पहाड़ी को नष्ट-भ्रष्ट करने पर तुल गये थे। स्वयं अपनी देख रेख में वह गोलाबारी करा रहे थे।

इसी समय उन्हें एक नेपाली सैनिक किले की ओर से आता दिखाई दिया। दायें हाथ से वह अपना मुंह पकड़े था और बायें हाथ को सिर से ऊपर हिलाता आ रहा था। कुछ सोच कर्नल मॉबी ने गोलाबारी रुकवा दी। पास आने पर ज्ञात हुआ उसका नाम मन बहादुर कार्की है —वह किले का एक सैनिक है। फिरंगियों की गोलाबारी से उसका

निचला जबड़ा टूट गया है। फिरंगी दल के पास चिकित्सा का अच्छा प्रबन्ध है, सोच कर वह मानवता के नाते उनके पास अपना इलाज करवाने आया है।

कर्नल मॉबी को विस्मय भी हुआ और प्रसन्नता भी। विस्मय इस कारण कि हमारी ही तोपों से चोट खा हमारे ही चिकित्सकों से इलाज करवाना चाहता है! और प्रसन्नता इसलिये कि इसकी चिकित्सा कर प्राण रक्षा करने पर कृतज्ञतावश यह किले के भेद आदि महत्वपूर्ण बातें हमें बता सकता है। अच्छा व्यवहार कर फौरन उसे दून शिविर चिकित्सा के लिये भेज दिया। कुछ सैनिकों को उसकी देखभाल के बहाने उस पर आंख रखने को कहा और चिकित्सक को खबर भेजी कि विशेष ध्यान रखकर चिकित्सा करें। अच्छा होने पर तुरन्त खबर करें।

खलंगा पर गोलाबारी फिर शुरू हुई, जो दिन के दोपहर तक होती रही।

अपने शिविर में बैठे कर्नल मॉबी विचारधारा में मग्न थे कि उन्हें अपने गुप्तचर से खबर मिली कि एक हिन्दुस्तानी उनसे मिलना चाहता है—किले के सम्बन्ध में! तुरन्त बुलवाया। हट्टा-कट्टा लम्बा सा जवान था। आकर सलाम किया और हरिद्वार के किसी अंग्रेज अफसर का प्रमाण पत्र दिखा अपना परिचय दिया। पढ़कर कर्नल कॉबी ने एक बार उसकी ओर गम्भीरता से देखा और कहा "टो टुम अमरसिंह हय, ऋषिकेश वाला। यह ब्रॉउनिंग साहब इधर लिखा कि टुम अंग्रेज का मडड करता हय—खबर डेटा है। ठीक?"

"हाँ साहब! मैं अमरसिंह ही हूँ। ऋषीकेश में ब्रॉउनिंग साहब के हाथ मैंने बहुत खबर बेचा है। आज भी यहाँ इसी काम के लिये आया हूँ हजूर।'

"बोलो।" कर्नल मॉबी ने कहा।

"हजूर, मैं एक भेद की बात बता सकता हूँ जिससे किले के

नेपालियों की कमर टूट जायेगी और एक-आध दिन में ही बड़ी आसानी से किले पर आपका अधिकार हो सकता है।"

'बोलो।"

"बताऊंगा हजूर ! इसी के लिये तो आया हूँ। पहले सौदा तय हो जाना चाहिये।"

कर्नल मॉबी बोले नहीं, उसे देखते रहे।

अमरसिंह ने कुछ मुस्करा कर कहा—"हजूर, बहुत थोड़े पैसों के बदले मैं आपको यह भेद बतला दूंगा—केवल पाँच सौ रुपये ! काम पूरा होने पर पैसा दीजिएगा। अभी कागज लिख कर आश्वासन देने से ही काम चल जायेगा।"

कर्नल मॉबी ने कुछ सोच कर कहा—"डेखो अमरसिंह हम पाँच सौ रुपया का पक्का वाडा नहीं करना सकटा। कम्पनी सरकार को लिखना होगा। हाँ हामरा बटाया बाट से फायडा होवेंगा टो हम टुमारा बफाडारी के बदले में जागीर को लिखेंगा, कोशिश करेंगा तो जरूर मिलेगा।"

कुछ सोचकर अमरसिंह ने कहा—"मुझे मंजूर है साहब ! सुनिये ! खलंगा—किले में पानी का कोई प्रबन्ध नहीं है। किले के लोग, पहाड़ी की दूसरी तरफ एक छोटी सी बावड़ी से रोज रात को पानी ले जाते हैं। यदि उस बावड़ी पर सेना की एक टुकड़ी रख रात दिन कड़ा पहरा लगा दिया जाय तो वे पानी न लेजा पायेंगे। आसपास केवल नीचे की तरफ नालापानी का जलस्रोत है, पर उसके और पहाड़ी के बीच आपका घेरा है। सो वहाँ से पानी लाना उनके लिये सम्भव नहीं है।"

कर्नल मॉबी सुनते—सोचते रहे।

अमरसिंह रुक कर फिर बोला—"और हजूर पानी की कमी के कारण शत्रु एक दो दिन में बिना लड़े हथियार डाल देगा। लड़ेगा भी तो अधमरा होकर, जिसे मारना फिर कठिन न होगा। इस तरह बहुत

हुआ तो चार या पांच दिन में किला आपके अधिकार में आ जायेगा।''

कर्नल मॉबी मुस्कराये, बिना बोले कागज का एक टुकड़ा उठा कुछ लिखा और बोले—"हम टुमारे वास्ते कागज लिखा। अभी डो सो जवान टैयार करता हय। टुम फौरन उनको ले जा कर वह जगह डिखा डो। टब आकर यह कागज ले जाना सकटा।"

"कागज अभी आप ही रखें हजूर। किले पर अधिकार हो जाने के बाद ले लूंगा। तब तक हजूर मुझे भी वहीं बावड़ी पर टुकड़ी के साथ रहने दिया जाय। मैं बंदूक चलाना खूब जानता हूँ। हजूर हुक्म हो तो लड़ सकता हूँ। एक पुराना बदला, किले में किसी से मुझे भी चुकाना है।

"ऑल राइट" (अच्छा) कह कर कर्नल मॉबी ने कैप्टन बैरो को बुलवा कर सारी बातें समझाईं। पानी पर कब्जा कर रातदिन कड़ा पहरा बिठाने का आदेश दिया। अमरसिंह पर विशेष आँख रखने के लिये भी चुपके से कह दिया।

शाम को दून शिविर से चिकित्सक का संदेश मिला—वह नेपाली सैनिक आपके पास आने की जिद्द कर रहा है। उसके टूटे जबड़े की हड्डी बिठा दी गई है और मरहम पट्टी कर दी है। वैसे अब ठीक है। हमने एक आध दिन आराम करने को कहा पर वह नहीं मानता, आपके पास आने की जिद्द लिये है।

कर्नल मॉबी ने सोचा, शायद मुझसे मिल कुछ बताना चाहता है। फौरन बुलवा भेजा। घंटे भर बाद वह आया। पट्टियों से बंधे जबड़ा लिये सामने आकर सलाम किया और बोला—"मैं आपका बहुत ऐहसान मंद हूँ। किन शब्दों में आपको धन्यवाद दूँ। जीते जी मैं आपके किये इस एहसान को नहीं भूल सकता।"

कर्नल मॉबी ने सोचा, रास्ते पर आ रहा है। बोले—'यह तो आडमी का फर्ज हय जो हम टुमारा सात किया डेखा टुमने हम अंग्रेज लोग कैसा मेहरबान हय। हम टाकटवर भी बहोट हय और मेहरबान

भी बहोट ! समझा !"

"समझा साहब! बिलकुल ठीक कहा—अंग्रेजों में इंसानियत है। हम गुणों क आदर करते हैं और सदा करेंगे। अब एक बार फिर आपको धन्यवाद दे कर, मैं जाने की इजाजत चाहता हूँ।"

"किडर जायगा ? टुम अबी पूरा ठीक नहीं हय। अभी और आराम से डो चार डिन टुम हमारा 'हॉस्पिटल' में रहो। फिर चाहेगा टो टुमको अपना फौज में अफसर बनायेगा।"

"नहीं साहब ! आपने मेरा इलाज करवा कर अपना इंसान का फर्ज अदा किया अब मुझे अपने फर्ज का, अपने कर्त्तव्य का पालन करने दीजिये। मेरा जीवन, केवल मेरा अपना नहीं साहब! मुझसे पहले उस पर मेरे देश का अधिकार है। और अभी तो युद्ध समाप्त नहीं हुआ, सो मेरे देश को, मेरे खलंगा को, मेरे काजी को, मेरे साथियों को मेरी जरूरत है। आज्ञा दीजिये कि मैं वापस खलंगा में लौट जाऊं, जिससे फिर मैं आपकी फौज से लड़ सकूँ।"

कर्नल माबी उछल पड़े ! आश्चर्य से बोले—"क्या ?—क्या बोला टुम ? टुम खलंगा में लौटेगा और हमसे फिर लड़ेगा ?"

"हां साहब।" दृढ़, पर नम्र स्वर में उसने उत्तर दिया।

"हम टुमारा इलाज किया। टुमारा जान बचाया। टुमारे साथ भलाई किया, टुम—टुम हमसे लड़ेगा ?"

"आपके एहसानों के बदले आपका दास बन सकता हूँ साहब ! पर अभी नहीं, लड़ाई के बाद, जिन्दा रहा तो। अभी तो मेरे कर्त्तव्य पालन के बीच में कोई नहीं आ सकता—स्वयं मैं भी नहीं। यह मेरा जीवन देश का है। देश पर संकट के समय तो मेरे व्यक्तिगत विचारों, व्यक्तिगत स्वार्थो एवं व्यक्तिगत सुख-दुख की भावना से भी सर्वोपरि है देश की भावना ! मैं अपने कर्त्तव्य से हटना चाहूं तो भी नहीं हट सकता ! बचन देता हूं, युद्ध के बाद जीवित रहा तो साहब आपके एहसानों का बदला, दास बन आपकी सेवा कर, चुकाना पड़े तो भी

चुकाऊंगा। अब बिदा दीजिये—सलाम।"

मुड़कर वह शिविर से जाने लगा।

कर्नल मॉबी के मंसूबे हवा में उड़ गये। पास रखे पिस्तौल को उस पर तानते हुये बोले—"ठहरो, नहीं तो गोली मार डेगा।"

वह रुक गया, मुड़ा, कुछ मुस्कराया और बोला—"साहब, आप गोली नहीं मार सकते और न मैं यहाँ मर सकता हूं। मेरी मौत आपके हाथ होती, तो पहले ही हो जाती। मेरी मौत यहां नहीं, मेरे अपने खलंगे में लिखी है, वह भी अभी नहीं। नहीं तो आप मेरा इलाज न करवाते। आपके गोले से मेरा जबड़ा ही टूटा—जान भी जा सकती थी। पर नहीं, ईश्वर को अभी इस शरीर से और काम लेना है। मुझसे अभी दो चार शत्रुओं को मरवाना है, इसलिये अभी तक जिन्दा रखा है। बेकार है साहब! न आप गोली मार सकते हैं, न मैं मर सकता हूं। कोशिश करना चाहें कीजिये।"

कहकर वह मुड़ कर शिविर के द्वार की ओर चला।

कर्नल मॉबी का पिस्तौल वाला हाथ उठा का उठा ही रह गया। द्वार पर संतरियों ने भाले तान लिये। किन्तु नेपाली सैनिक निडर आगे बढ़ता चला गया।

कर्नल मॉबी ने पिस्तौल वाले हाथ को नीचे गिराते हुये कुछ सोच कर कहा—"संटरी, जाने डो इसे! हमारे घेरे से भी पार करके किले में जाने डेना इसे। यह वीर है, अपने कर्टव्य को जानने वाला वीर!"

सैनिक रुका, मुड़ा, मुस्कराया, हाथ उठाकर सलाम किया और बाहर चला गया।

उन्नीस

खलगा में घूम घूम कर बलभद्र ने अपनी आँखों से नाश का भयंकर दृश्य देखा। चारों ओर श्मशान सी नीरवता विराजमान थी। चारों ओर मृत्यु की भयानकता साकार हो उठी थी। किले को अभय दान देने वाली पत्थरों की वह दीवार, स्थान २ से टूट गई थी। यद्यपि सब काम छोड़ सबसे पहले उसी की मरम्मत की गई, पर फिर भी वह बात अब उसमें न थी। मरम्मत करने वाले कम, बहुत कम, रह गये थे —यों ही बिखरे पत्थरों को एकत्रित कर टूटे भागों में पैबन्द से लगा दिये थे। शत्रु दल की गोलाबारी ने भारी क्षति पहुँचाई थी—प्रति दिन पहुँचा रही थी। टूटे पेड़, टूटे घर, टूटी या टूटती दीवारें—सबके सब अवशेष रूप में इधर उधर पड़े हुये थे। इतना ही नहीं, तोप के गोलों से कटे-फटे हुये अंग प्रत्यंग सर्वत्र बिखरे हुये थे। स्त्री-पुरुष-बालक, यत्र तत्र मरे कटे पड़े थे। चारों ओर लाशें ही लाशें दिखाई पड़ती थीं।

जो मर गये तर गये, मोक्ष पा गये। जो घायल हैं—न मरे हैं न जिये, वे कष्ट पा रहे हैं—अतः सबसे पहले उनकी ही देखभाल हो। उनको ही बचाना है। एक-एक जान कीमती है, बहुत कीमती ! समझ बलभद्र ने मृतकों की चिंता छोड़ सर्व प्रथम घायलों की मरहम पट्टी व देखभाल करने का आदेश दिया था। वे देख रहे थे आदेश का पालन हो रहा है। दो चार, दो चार स्त्री पुरुष, इधर उधर गिरे पड़े लाशों से घायलों को छांट छांट कर ले जा रहे हैं। घायल ले जाने वाले लोगों में से कई के माथे, हाथ व पांव पर पट्टियां बँधी हैं।

एक स्थान पर चार पाँच स्त्रियां खड़ी दिखाई दीं - चुपचाप, शांत स्तब्ध ! कुछ सोच बलभद्र उस ओर चले। पास आकर देखा एक स्त्री की गोद में उसका बालक मरा पड़ा है। उन्होंने उपस्थित सभी स्त्रियों के मुख की ओर देखा। सबके मुख कुम्हलाये हुये थे। विषाद की गहरी छाया थी अंकित उनके आनन पर, पर आंखों में एक बूंद आंसू किसी के न था। मरे बालक को गोद में लिये बैठी माता की आंखों में भी नहीं--बस सिर झुकाये अपलक-दृष्टि से पुत्र को निहार रही थी। सब शांत निस्तब्ध थे।

बलभद्र का अन्तर आलोड़ित हो उठा। धीरे से करुणा-पूर्ण स्वर में बोले—'आमाँ !" (माँ)

उस स्त्री ने धीरे-धीरे ऊपर को आंखें उठाईं, बलभद्र को देखा और क्षण भर चुप रह कर धीरे-धीरे बालक को उनके पैरों के पास डाल कर कहा—'काजी ! मेरी कोख सफल हुई। मेरा लाल देश के काम आ गया।"

बलभद्र की आंखें सजल हो उठीं। कहा—"हां आमाँ, तुम्हारी कोख सफल हुई। काश, इस कोख से मैं जन्म लेता !"

रोकते-रोकते भी उनकी आंखों से दो बूंद आँसू गिर पड़े।

उस स्त्री ने कहा—"यह क्या काजी ! तुम्हारा मुख देख कर ही तो हम अड़ रहे हैं। काजी ! एक लाल क्या, मेरे हजार लाल भी देश

के काम आते तो भी मेरी आंखों में आँसू न आते।"

बिना कुछ कहे बलभद्र वहां से मुड़ चले। सामने से आते माया, कनक, पाँडे और कांछी को पहचान गये। कनक के सिर पर पट्टी बँधी थी और पाँडे के हाथ पर। रुक कर पूछा—"सरदार रिपुमर्दन कैसे हैं अब ?"

"अच्छे हैं काजी ! पशुपतिनाथ की दया से कंधे पर संगीन का घाव गहरा नहीं था। हाथ में कुछ मामूली चोट है। चिंता न करें काजी, एक आध दिन में ठीक हो जायेंगे।"—पाँडे ने कहा।

"तुम्हारा ?"–उन्होंने कनक की ओर देख पूछा।

"ठीक है काजी, मामूली खरोंच थी।"—कनक ने सस्मित उत्तर दिया।

"और पांडे तुम्हारा हाथ ?"

पट्टी बँधे हाथ को ऊपर नीचे हिलाते हुये पाँडे बोला—"बिलकुल ठीक है काजी। देखिये, अपना पूरा काम कर रहा है।"

माया व कांछी की ओर देख बलभद्र ने कहा—"छोरी (बेटी) जाओ वहां संभालो।"—उन्होंने उस ओर इशारा किया जहां से वे अभी आये थे।

माया व कांछी उस ओर चले। बलभद्र पाँडे व कनक को अपने साथ लेकर आगे बढ़े। कुछ देर तीनों चुपचाप चलते रहे। अन्त में बलभद्र ने कहा—"शत्रुओं के प्रबल आक्रमण को तो हमने झेला, उन्हें पीछे हटा दिया। हमारी विजय हुई पर कितनी महँगी विजय !" उन्होंने चारों ओर नाश,ध्वँस के दृश्य पर दृष्टि घुमाई।

"काजी ! मँहगी विजय ही वीरों को शोभा देती है।"—कनक ने कहा।

बलभद्र ने कुछ उत्तर न दिया। मुख्य द्वार की ओर मुड़ चले। वहां पर दो सैनिक द्वार की रक्षा कर रहे थे और दो दीवार पर पत्थर रख रहे थे। बलभद्र स्वयं पत्थर उठाने में लग गये। कनक व पाँडे

ने भी हाथ बंटाया।

अभी थोड़ी ही देर हुई थी कि द्वार पर थपकी सुनाई दी।

संतरी ने पूछा—"कौन ?"

उत्तर मिला—"मैं मनबहादुर कार्की।"

बलभद्र से संकेत पा सन्तरी ने द्वार खोल दिया। जबड़े पर श्वेत पट्टी बाँधे मनबहादुर आया। सामने बलभद्र को देखा और दौड़ कर पांव पकड़ लिये। बोला—"काजी! मुझे क्षमा करना। मैं बिना आपकी आज्ञा के सबेरे गोलाबारी के बीच किले से बाहर चला गया था। गोले से मेरा जबड़ा टूट गया था काजी! बिना उचित चिकित्सा के मैं मर जाता काजी!"

बलभद्र के चेहरे पर घृणा के भाव भर आये। व्यंग से बोले—"मरने से डरता है, नेपाली होकर?"

"नहीं काजी, मैं मरने से नहीं डरता। पर अभी मरना नहीं चाहता। मैं जीवित रहना चाहता हूँ—फिर से लड़ सकने, फिर से शत्रुदल के दो चार को मार कर मरने के लिये। इलाज करवा कर तुरन्त इसीलिये चला आया काजी, कि आपकी, खलंगा की, देश की सेवा कर सकूं।"

"अब कोई फायदा नहीं है मने!"—आद्र स्वर में बलभद्र बोले—"मैं बहुत आदमी खो चुका हूँ—बहुत!"

वह गहरी सांस ले कर चुप हो गये।

"काजी, शत्रुओं की भी भारी क्षति हुई है। घायल और मृतकों की संख्या सात सौ के लगभग पहुँच चुकी है। आक्रमण करने की उसकी हिम्मत पस्त हो चुकी है। फौज अभी भी बहुत है उसके पास, शत्रु चालाक है काजी, किले के चारों ओर कड़ा घेरा डाले बैठा है। वह भी एक नहीं, तीन-तीन घेरे! चालाक तो है ही, विशाल सेना के कारण शत्रु बलवान भी बहुत है।"

बलभद्र की भवों में बल पड़ गये। तीखे स्वर में बोले—"फिर

यहाँ लौटा ही क्यों ?"

"हम भी बलवान हैं काजी ! शत्रु से भी अधिक बलवान !"—उत्साह से मन बहादुर कार्की ने कहा।

कुछ व्यंग से हँसकर बलभद्र ने कहा—"तीन सौ से ऊपर स्त्री, पुरुष व बालकों का बलिदान लिया है इस युद्ध ने ! घायलों की संख्या भी कम नहीं। लड़ सकने की दशा में मुश्किल से इने गिने सौ जने ही होंगे।"

"सौ तो बहुत हैं काजी !"—पांडे ने तुरन्त कहा "दस-दस को एक-एक मार कर दम लेगा। हजार की शक्ति है हमारी। मने कार्की ठीक ही कहता है—हम शत्रु से भी बलवान हैं।"

"फिर हमारे अधिनायक बलभद्र कुंवर का वरद-हस्त हमारे सिर पर है। उनकी थाप हमारे कंधों पर है। मृत्यु से जूझ पड़ने की हिम्मत हममें है, फिर हम शत्रु से बलवान कैसे नहीं हैं ?"—मन बहादुर ने कहा।

बलभद्र क्षण भर चुप रहे, फिर मन बहादुर को पांव पर से उठा कर गले लगाते हुए बोले—"यह बलिदान व्यर्थ नहीं जायेगा साथियो, व्यर्थ नहीं जायेगा ! यह नेपाल को, प्रिय स्वदेश को मुर्दा होने से बचायेगा। हम रहें न रहें, यह खलंगा रहे या न रहे, पर इस बलिदान की स्मृति नींद में भी नेपालियों को झकझोरती रहेगी, जिससे वे अपनी आत्मा को कभी न बेच पायेंगे। नेपाल किसी का दास बन कर जीवित नहीं रहेगा।"

उसके बाद कनक और पांडे को वहीं दीवार पर काम करते छोड़, बलभद्र मने कार्की को ले घायलों वाले स्थान की ओर चले।

कुछ देर पांडे चुपचाप कनक के साथ काम करता रहा, फिर बोला—"दाज्यू, तुमसे एक बहुत आवश्यक परामर्श करना है।"

"हां कहो।" कनक ने कहा।

"यहाँ नहीं दाज्यू। उधर चलो एकान्त में।"—उसने एक ओर

इशारा किया ।

"ऐसा जरूरी है पांडे !" कनक ने हँसकर कहा—"अच्छा चलो।"

दोनों दीवार से दूर एक वृक्ष के नीचे बैठ गये ।

पाँडे ने कहा— "दाज्यू ! यहाँ के गढंग तो देख रहे हो न ? किले में बहुत कम आदमी रह गये हैं। शत्रु दल ने चारों ओर घेरा भी डाल दिया है। ऊपर से रोज गोलाबारी होती है। हमारी सहायक सेना का पता नहीं। ऐसी दशा में यह स्थान निरापद नहीं है। बस आज आज कल-कल की ही बात है।"

"क्या मतलब कान्ता···ओ पांडे !"

मुस्करा कर उसने अपनी भूल सुधारी। "तुम डर गये हो, ऐसा तो मैं सोच ही नहीं सकता, फिर यह विचार कैसा ?"

"अपना और तुम्हारा थोड़े ही है—भाभी का विचार आया तो कहा।"

"माया का ?"—आश्चर्य से कनक बोला ।

"हाँ माया भाभी का। सोच रहा था, यह स्थान दिन प्रतिदिन खतरनाक होता जा रहा है। माया भाभी का सुरक्षित रहना जरुरी है। बहुत जरूरी ! काजी से तुम्हारे विवाह के बारे में जो मैंने जल्दी की थी उसका मूल कारण था—वंश की सुरक्षा ! भाभी का किसी निरापद स्थान पर पहुँचना बहुत जरूरी है, दाज्यू !"

कनक हँस पड़ा—"आखिर स्वास्नी मानिस (स्त्री) हो न ? ममतामयी माता का रूप ! वंश की सुरक्षा की बात युद्ध की विभीषिका के बीच खूब सूझी तुम्हें !"—वह खिलखिला कर हँस पड़ा।

"हँसी न समझो दाज्यू ! इस युद्ध रूपी यज्ञ में अभी बलिदान पूर्ण नहीं हुआ है। पूर्णाहुति में हमें बहुत अधिक कीमती जानें देनीं होंगी। तब कुंवर वंश की निशानी के रूप में क्या रह जायेगा दाज्यू ! किले की हालत तुम देख रहे हो। पूर्णाहुति की घड़ी दो चार दिन से

अधिक दूर नहीं। काजी, तुम, मैं—खलंगा के अन्य सभी हँसते हँसते बलिवेदी पर निछावर हो जायेंगे—फिर? माया वीरांगना है, हँसकर हमारा अनुकरण करेगी—फिर? फिर रुद्रशमशेर के वंश की—बलभद्र के वंश की एक साथ समाप्ति हो जायेगी।"

कनक इस बार न हँस सका। पांडे की बातों में सत्यता का आभास पा गम्भीर हो उठा। गहरी चिंता में पड़ गया।

दोनों चुप रहे कुछ क्षण, फिर पांडे बोला—"दाज्यू, मैं माया को सुरक्षित स्थान पर पहुँचा दूँगा। किले के बाहर शंकर बाज्या हैं। उनके साथ नेपाल भिजवा दूँगा। मैंने बाज्या को मना लिया है। अब यदि तुम भी मान जाओ तो······।"

बात काट कनक बोला—"पर कुँवर हजूर? क्या कहेंगे काजी!"

"उन्हें मनाना मेरा काम है। पहले तुम मान जाओ। तुम्हारी पत्नी है न!"

"पर-पर···।"

"पर वर छोड़ो दाज्यू। माया तुम्हारी ही अमानत नहीं राष्ट्र और देश की भी अमानत है, इसे न भूलो।"

"अच्छा—" कुछ सोच कनक ने कहा—"मैं मान लूँगा यदि माया मान जाय, यदि काजी मान जायं।"

"उन्हें मनाना मेरा काम है तुम चिंता न करो दाज्यू!" पांडे ने कहा और हाथ पकड़ उठाते हुये कहा—"आओ।"

बलभद्र के पास पहुँच पाँडे ने माया की बात छेड़ी। यह सुन पहले तो बलभद्र ने बहुत ना नू की, फिर कनक पर सारा उत्तरदायित्व डाल कर कहा—"माया मेरी छोरी (बेटी) है जरूर, पर अब वह पराया धन है। उस पर कनक का मुझसे अधिक अधिकार है। वह जो उचित समझे करे। माया उसकी जहान (धर्मपत्नी) है।"

कनक पाँडे के साथ ही आया था, धर्म-संकट में पड़ गया,

कुछ बोल न पाया। पांडे ने बलभद्र को आश्वासन दिया, कनक वस्तु-स्थिति को देखते हुए मान गये हैं। फिर अन्य दृष्टिकोणों से भी माया को किसी सुरक्षित स्थान पर पहुँचाने के महत्व, वंश चलाने की परमावश्यकता आदि पर विचार प्रकट किया और अन्त में बलभद्र को कहना ही पड़ा—"अच्छा, तुम और कनक जो ठीक समझो करो।"

लौटते हुए पाँडे ने कनक से कहा—"दाज्यू, माया भाभी को पहले आप कहेंगे फिर मैं। आज ही—और हो सका तो अभी। देखभाल के लिये कांछी का जाना भी आवश्यक है। आप भाभी को समझाना। जानता हूँ, पति और पिता को मौत के मुँह में अकेले छोड़ जाने वाली माया नहीं है। सो चाहता हूँ तुम आदेश भी दो—लक्ष्मण ने जैसे उर्मिला को दिया था।"

"लेकिन........."

"लेकिन से काम नहीं चलेगा दाज्यू! जी कड़ा कर इतना करना ही होगा। हो सका तो आज रात ही माया भाभी को भिजवा देंगे। समय बहुत कम है दाज्यू, अब तो शुभस्य-शीघ्रम होना चाहिये।"

"अच्छा, प्रयत्न करूँगा।"—कह कनक भारी हृदय लिये माया से कहने चला।

सब बातें सुन माया ने जाने से साफ मना कर दिया। कांछी भी न जाने के लिये अड़ गई। घंटे भर बाद जब पांडे ने आकर वही बात दुहराई तो भी माया न मानी। कांछी तो बहुत बिगड़ी। पर जब पांडे ने देश की, जाति की बात कही, पत्नी का कर्तव्य समझाया, पिता के सहमत होने की बात बताई—वंश चलाने के लिये विवाह की पवित्रता आदि-आदि अनेक बातें सामने रखीं तब हार कर माया ने कहा—"पांडे ज्यू! यह मेरे लिये जीवित मृत्यु के समान होगा। यहाँ पति चरणों में मृत्यु मेरे लिये निर्वाण बन जाती, मोक्ष समान होगी।"

पांडे ने समझाया—"लक्ष्मण पत्नी उर्मिला ने पति की आज्ञा

मानी तभी तो वे अपना कर्तव्य-पालन कर सके—राम की सेवा कर अमर यश प्राप्त कर पाये। देवी उत्तरा ने पति की बात मान सहर्ष युद्ध-भूमि में उन्हें जाने दिया तभी तो अभिमन्यु वीर गति प्राप्त कर सके। तुम भी अपने पति की बात मानो और कनक दाज्यू को अपना कर्तव्य पालन करने दो।"

माया निरुत्तर हो चुप हो गई। मौन को स्वीकृति का लक्षण मान पांडे ने कहा—"ईश्वर को शायद यही मंजूर था माया भाभी! कनक दाज्यू की चिंता तुम न करो—मैं जो हूं। वचन देता हूँ भाभी, जब तक जीवित रहूंगा, कनक दाज्यू को तुम्हारी अमानत समझ निज प्राणों सा ही सुरक्षित रखूँगा। पशुपतिनाथ सब मंगल करेंगे।"

कनक की ओर मुड़कर पाँडे ने फिर कहा—"आज रात्रि के दूसरे प्रहर में हमें जाना होगा, तैयार रहना दाज्यू। मैंने सब ठीक कर लिया है। अभी चलूँ।"

जाते हुए पांडे को कनक, माया और कांछी तीनों ने देखा। तीन विभिन्न विचार उनके मस्तिष्क में उठे!

कान्ता—पुरुष-रूप पांडे!

दूरदर्शी पर ज़िद्दी पांडे!

और हृदयहीन पाषाण पांडे!

बीस

२८ नवम्बर की रात थी, दूसरे प्रहर का प्रारम्भिक काल। पांडे और कनक, माया व कांछी को जब किले से बाहर, बूढ़े शंकर बाज्या के हाथों सौंप कर लौटे तो सीधे उसी समय बलभद्र के पास पहुँचे। बलभद्र लेटे अवश्य थे, पर आंखों में नींद न थी। फौरन पास बुलवाया।

पांडे ने माया के सही सलामत शंकर बाज्या को सौंपने की बात कही। बताया, शंकर बाज्या उन सबको ले पहाड़-पहाड़ चल पड़े हैं। लक्ष्य नेपाल है, पर अवसरानुकूल जो उचित जान पड़ेगा करेंगे। यहां वहाँ रुकते-रुकाते नेपाल पहुँच ही जायेंगे। यह भी बताया कि उस ओर (पूर्व में) किस-किस जगह अंग्रेज सैनिक घेरा डाले बैठे हैं। अन्त में कहा—"काजी, एक बहुत आवश्यक बात बताने के लिये हमने आपको इस समय कष्ट दिया है। पर—पर काजी – बात शुभ नहीं है।"

"कहो, निस्संकोच कहो, मैं बुरे से बुरे के लिये भी प्रस्तुत हूँ।"

"काजी, हमारी रौरव परीक्षा आरम्भ हो गई है। हमारे जल-स्रोत पर शत्रुओं ने आज अधिकार कर बहुत सारे सैनिकों की टुकड़ी वहाँ जमा कर दी है। हमें पानी से वंचित कर शत्रु शायद हमसे हथियार डलवाना चाहता है।"

"पानी का जल-स्रोत बंद कर दिया? हमारे गुप्तचरों को इसका पता कैसे नहीं लगा? तुम्हें कैसे मालूम हुआ?"

"शंकर बाज्या ने बताया उस जल-स्रोत की ओर बहुत सारे फिरंगी सैनिक संध्या समय गये हैं। अतः लौटते हुये हम सत्यता से परिचित होने उधर गये। निकट नहीं जा पाये—दूर ही से देखा। वहाँ आग जल रही थी, जिसके प्रकाश में दिखाई दिया—बहुत सारे बन्दूकधारी सजग हो पहरा दे रहे थे।"

"कैसे—पर यह कैसे हुआ? हमारे जल-स्रोत का ज्ञान बाहर वाले किसी को न था! शत्रु को इसका पता कैसे लगा?"

"इसका पता नहीं लग सका काजी!" कनक ने कहा।

"अब जानने से भी कोई लाभ नहीं। बुरा हुआ, बहुत बुरा! पांडे—तुमने ठीक ही कहा, हमारी रौरव परीक्षा—महारौरव परीक्षा आरंभ हो गई है। पानी बंद कर हमें हराने की शत्रु की इस चाल से हम नहीं घबरायेंगे। हार कर भी हार हम मानेंगे नहीं। इस परीक्षा में हम उत्तीर्ण होंगे पांडे! जाओ आज से, अभी से, किले में पानी की एक एक बूंद पर नियन्त्रण रखो। घायलों, औरतों और बच्चों को सर्वप्रथम थोड़ा-थोड़ा पानी देने की व्यवस्था करो। जाओ, दोनों जल्दी जाओ जल्दी। इतना प्रबन्ध कर मेरे पास आना, मैं तब तक कुछ सोचता हूं।"

किले में पानी बहुत कम था। कनक और पांडे ने अनुमान लगाया—मुश्किल से एक दिन का काम शायद चले। सारी व्यवस्था कर लगभग आध घंटे में बलभद्र के पास दोनों लौट आये।

बलभद्र ने कहा—"कनक! जाओ बीस आदमी तुरन्त तैयार करो। कुछ बंदूक और कुछ बंटे (गागर) ले लो। पानी लाने का प्रयास तो

कर देखें। पांडे, तुम यहीं रहना, मैं कनक के साथ जाऊंगा। जाओ कनक, जल्दी करो।"

कनक चला गया।

पांडे ने कहा—"काजी, आप ? आप जायेंगे ? मेरे जीते जी ? नहीं काजी, यह आपको शोभा नहीं देता। मैं कनक के साथ जाऊँगा।"

"नहीं पाँडे खतरा बहुत है। मैं तुझे उसमें नहीं झोकूंगा।"

"खतरा बहुत है ? तब तो मुझे ही जाना होगा काजी ! आपकी जान मेरी जान से बहुत कीमती है। आपका जीवित रहना बहुत जरूरी है। भगवान न करे कहीं कुछ हो जाय तो खलंगा का क्या होगा ?"

"कुछ नहीं होगा पाँडे !"—बलभद्र ने मुस्करा कर कहा।

"कुछ नहीं होगा तो मुझे जाने से क्यों रोकते हैं आप ? क्षमा करें काजी, यह मेरी धृष्टता है, पर जाऊंगा मैं ही।"

"अच्छा तो तू भी चल फिर।"

"नहीं काजी, आप यहीं रहें"—पांडे ने पांव पकड़ लिये—"आप रहेंगे तो खलंगा के शेष सैनिक अड़ सकेंगे। वे मर कट जायेंगे पर हार न मानेंगे। देश की आन के लिये, जाति की शान के लिये, खलंगा की भलाई के लिये, आपका जाना उचित नहीं है। काजी आप न जायें, हम पर विश्वास कीजिये, हम पूरी-पूरी कोशिश करेंगे।"

बलभद्र कुछ न बोल, सोचने लगे। इसी समय कनक आ पहुँचा। पांडे को देखा"—बलभद्र को देखा और बात समझ गया। बोला—"काजी, मेरी प्रार्थना है आपसे, आप यहीं रहें। मुझे आज्ञा दीजिये मैं अकेले ही जाऊंगा।"

पांडे ने जल्दी से कहा—"यह कैसे हो सकता है दाज्यू ! एक और एक, ग्यारह होते हैं। मैं आपके साथ चलूंगा।"

कहते-कहते वह उठ खड़ा हुआ। बलभद्र की ओर देख बोला—"आज्ञा है काजी ?"

और बिना उत्तर की प्रतीक्षा किये कनक का हाथ पकड़ कर कहा —"आओ ।"

"अच्छा जाओ, पर खतरा अधिक देखो तो चले आना ।"—बलभद्र ने धीरे-धीरे कहा ।

पांडे और कनक तब तक जा चुके थे ।

बड़ी सावधानी से पांडे कनक का दल, कुछ समय पश्चात जलस्रोत के निकट पहुंचा । देखा—वहाँ आग उसी तरह जल रही थी । उसी तरह कुछ सिपाही पहरा दे रहे थे ।

पांडे ने कनक से कहा—"तुम यहीं ठहरो, मैं—मैं कुछ आगे—कुछ निकट जा कर देखता हूँ—कितने सिपाही हैं ?"

"नहीं—मैं भी चलूंगा ।" कह कनक ने सिपाहियों से वहीं ठहरने का संकेत किया ।

दोनों सावधानी से आगे बढ़ते-बढ़ते काफी निकट पहुँच गये । देखा सात आठ सिपाही बंदूक लिये पानी के उस छोटे जलस्रोत के पास ड्यूटी पर खड़े हैं । पास ही आग जल रही थी । उसकी रोशनी में निकट ही दो तीन तम्बू दिखाई दिये । आग के आस-पास बहुत से लोग सोते भी दिखाई दिए ।

पांडे ने लौट चलने का संकेत कनक को दिया और अपने सिपाहियों के पास आ कर कहा—"दाज्यू, बहुत कठिन है । शत्रु के सैनिक बहुत हैं । अड्डा मजबूत जमा रखा है ।"

"एक प्रयत्न तो कर देखें ।"

"हाँ, पर बहुत सावधानी से । शत्रु ने पूरा प्रबन्ध किया है, जरा सी आहट मिलते ही वे गोली चलायेंगे ।"

"एकाएक उन पर टूट पड़ने से भी काम न चलेगा । उनकी संख्या बहुत है—चालीस-पचास तो वहीं आग के पास सो रहे हैं ।"

"हां, और खलंगा में हमारे पास आदमी भी बहुत कम हैं । एक सैनिक भी खोना हमारे लिये घातक है ।"

"फिर ?"

"ऐसा करें दाज्यू, आप इन सैनिकों के साथ लौट जायें या यहीं रहें। मैं कोशिश कर देखता हूँ। हमारे इतने सारे आदमियों की आहट शत्रुओं को आसानी से मिल सकती है। रात की निस्तब्धता है और पहाड़ी मार्ग, कहीं कोई पत्थर लुढ़क जाये या फिर किसी सूखी टहनी पर पांव पड़ जाये !"

"मैं भी यही सोच रहा था। तुम सैनिकों को लेकर लौट जाओ, मैं प्रयत्न करता हूँ।"

"न दाज्यू, मैं जाऊँगा—खतरा बहुत है।"

"तभी तो मैं जा रहा हूँ।"

"तो काजी की देखभाल कौन करेगा ? माया तो यहाँ अब है नहीं।"

"तुम जो हो का......, मेरा मतलब—पांडे।"

"पर निकट का रिश्तेदार नहीं"—पांडे ने कुछ हँसते हुये कहा—"अच्छा चलो दाज्यू, तो दोनों चलते हैं। आदमियों को वापस भेज दो।"

कुछ सोच कनक ने आदमियों को लौट जाने को कहा। पांडे ने तब तक एक से बंदूक और दूसरे से एक बंटा ले लिया। कनक के हाथ में बंदूक थमा दी और स्वयं बंटा ले लिया। धीरे-धीरे सावधानी से दोनों आगे बढ़ने लगे। थोड़ी देर में जलस्रोत के काफी निकट आ गये। देखा उसी तरह सिपाही ड्यूटी पर खड़े थे। दोनों ने एक दूसरे की ओर देखा, सिर हिलाया और धीरे-धीरे झाड़ियों की आड़ ले आगे बढ़े।

अचानक—'कौन है ?' की आवाज सामने से गूँज उठी।

कनक ने हाथों में कसकर बंदूक पकड़ ली। पांडे ने हाथ से बताया—नहीं, और पीछे लौट चलने का इशारा किया। इतने निकट आकर भी ऐसे लौटना कनक को खल गया पर स्थिति समझ लौट

पड़ा। शत्रु के पहरे वाले सिपाही आगे बढ़ आये। कठिनता से पन्द्रह-बस गज का फासला रह गया था। पांडे ने कनक को हाथ से एक चट्टान के पीछे होने का इशारा किया। दोनों साँस रोक उसके पीछे छिप हो गए सिपाही काफी निकट आ गये, पर कुछ रात के अन्धकार ने साथ दिया—कुछ भाग्य ने! सिपाहियों ने पास आकर खोजा, कुछ आगे गये, फिर लौट आये। जाते हुए एक कह रहा था—'कोई सियार होगा।'

कनक और पाँडे, दम साधे कुछ देर उसी चट्टान की आड़ में दुबके रहे, फिर दबे पांव सामने पहाड़ी के साल वृक्षों की ओट में आ गये। कुछ दम लिया, कुछ आहट। फिर एक पेड़ से दूसरे—दूसरे से तीसरे की आड़ लेते खलंगा में वापस आने लगे।

कुछ दूर ही आ पाये थे कि अचानक बंदूक की एक गोली पीछे की ओर से, सिर के ऊपर से सनसनाती हुई निकल गई।

कनक आगे था और पांडे पीछे। फौरन कनक के पांव पकड़ पांडे ने उसे जमीन पर गिरा दिया। दोनों पेट के बल सरक-सरक कर पास के पेड़ की ओर जाने लगे। पेड़ निकट ही था। कनक ने वहाँ पहुँचते ही बंदूक सम्भाली और आँखें फाड़-फाड़ कर अन्धकार में देखने लगा। पांडे, पेड़ के निकट आ ही चुका था।

एकाएक 'धाँय' शब्द हुआ। पास ही सामने अँधकार में, क्षणभर आग सी चमकी और पेट के बल सरकता पाँडे क्षणभर के लिये जमीन से चिपक गया। बिना सोचे समझे कनक ने, जिधर से आग चमकी थी गोली चलाई। गोली निशाने पर बैठी।

'आह' कह कर कोई चिल्लाया।

पाँडे सरकता हुआ पेड़ की आड़ में आ चुका था। हाँफ रहा था।

कनक ने पूछा—"ठीक हो पांडे?"

"हां दाज्यू! पर—पर यह कौन था? सिपाही तो सब लौट चुके थे।"

देखता हूं ।" कह, पांडे के रोकते—रोकते भी कनक सामने दौड़ गया। थोड़ी ही देर में एक आदमी को पीठ पर लादे पांडे के पास आ, कनक ने पीठ के बोझ को धरती पर पटक दिया । कहा—"यह था—शत्रुदल का सैनिक नहीं जान पड़ता।"

"क्या—?" कह पांडे ने झुक कर नजदीक से उसका मुंह देखा। और आश्चर्य से बोला—"अरे! यह तो अमरसिंह है ऋषिकेश वाला! यहाँ कैसे? इसी ने पानी का भेद दिया होगा, तभी तो यहाँ है। करनी का फल पा गया बिचारा!"

इसी समय दूर नीचे की ओर कुछ आहट हुई, गोली की आवाज सुन, शायद शत्रु के सैनिक इधर आ रहे हैं, सोच कनक ने पांडे का हाथ पकड़ कर कहा—"चलो।"

तेजी से दोनों खलंगा की ओर चले। खलंगा के निकट पहुंचे ही थे कि पांडे गिर पड़ा। कनक ने रुककर पूछा—"क्या हुआ?"

"पैर मुड़ गया दाज्यू!" हांफते हुये पांडे बोला।

बिना कुछ कहे कनक ने उसे अपने बलिष्ट हाथों में उठा लिया और तेजी से चला। जरा सी देर में खलंगा के पर्खाल में बने गुप्त द्वार से किले में प्रवेश किया, अन्दर आ सुख की सांस ली। पांडे को जमीन पर रखते हुये कनक बोला—"लो पांडे, अब खतरा नहीं। चल सकते हो या सहारा दूं!"

पर—पर धरती पर रखते ही पांडे एक ओर लुढ़क गया। घबरा कर कनक ने उसे पकड़ा और अब पहली बार अनुभव किया, उसकी छाती के पास कमीज कुछ गीली है—चिपचिपी सी है। देखा और चौंक पड़ा— रक्त! सामने धरती पर पड़े पांडे की ओर देखा—पसली के कुछ नीचे बगल की ओर से रक्त निकल रहा था। रुलाई सी आई। मुख से निकला—"पांडे! कान्ता!"

छाती पर धड़कते दिल से हाथ रखा। हल्की सी धड़कन मालूम हुई। फौरन अपना कमरबंद खोल घाव को कस कर बांध दिया

और दोनों हाथों में उठा, रोते हुये बलभद्र के स्थान की ओर दौड़ता चला।

क्षणभर बलभद्र स्तंभित रह गये, जैसे काठ मार गया हो। फिर तुरन्त चेतन हो उन्होंने पांडे को अपने हाथों में ले लिया और कनक से बोले—"पानी—पानी लाओ।"

पानी लेकर तुरन्त कनक आया। साथ दो चार और आये। देखा बलभद्र, पांडे का सिर अपनी गोद में लिये उसके मुख को एकटक निहार रहे थे। आंखों से आंसुओं की धारा बह रही थी।

कनक ने कमरबंद खोल घाव को हल्दी चूना लगा सावधानी से दूसरा कपड़ा बांध दिया। बलभद्र ने पानी के छींटे पांडे के मुंह पर डाले, कुछ आंखों पर लगाया और कुछ, मुँह खोल गले में डाला। कनक ने पंखा उठा झलना शुरु किया।

कुछ देर बाद पांडे के शरीर में हल्की सी हरकत हुई। आंखें धीरे धीरे खुलीं। कुछ क्षण ऐसी ही खुली रहीं फिर धीरे-धीरे बंद होने लगीं बलभद्र ने स्नेह से पुकारा—"पाँडे. नहीं—छोरी कान्ता!"

कान्ता ने आंखें खोलीं। अधरों पर एक फीकी सी मुस्कान दिखाई दी। धीमे स्वर में बोली—"काजी—कनक···कनक···ठीक······।"

"हां कान्ता मैं यहां हूँ।" कनक को रुलाई आने लगी।

कान्ता के मुख पर संतोष की छाया दिखाई दी। बोली—"काजी, क्षमा करना—मैं अंत तक आपका साथ—न दे सका—अन्त तक आपकी—सेवा · न कर···सका।"

"ऐसा न कहो कान्ता। छोरी माया से बढ़ कर मैंने सदा तुम्हें माना······। आत्मा का सम्बंध जुड़ गया है तुम्हारा और मेरा·····। मेरे अन्त तक तुम मेरे ही साथ रहोगी कान्ता।"—बलभद्र का कंठ अवरुद्ध हो गया। आंखों में आंसू छलक आये।

"कनक—सहारा दे मुझे बिठा दो—" कान्ता ने क्षीण स्वर में कहा।

बिना सोचे कनक ने बलभद्र की गोद से कान्ता का सिर उठाया। दोनों हाथों से सहारा दिया और बलभद्र की ओर मुख करके बिठा दिया। अपनी छाती से कान्ता की पीठ को सहारा दे, हाथों से थामे रहा।

"काजी! जीवन मृत्यु का खेल समाप्त-प्रायः है। बलिदान की बेला—निकट आ गई है। मेरा जीवन-दीप भी-बुझनेवाला है। काजी-ऐसे—ऐसे समय में मैं एक वचन मांगती हूँ, बस एक वचन दे दो, काजी कि मैं सुख से आंखें मूँद सकूँ।" कहते हुये उसने हाथ जोड़ दिये।

"मांगो तो, कान्ता क्या माँगती हो? अकिंचन हो गया हूँ पर तुझे देने को प्राण तो बाकी हैं!"

"इन्हीं प्राणों की सुरक्षा का वचन मांगती हूँ—प्रभु! वचन दो काजी -- आप अपने प्राणों की रक्षा करेंगे!"

"कान्ता!" चौंक कर बलभद्र ने कहा—"यह तुम कहती हो, तुम कान्ता?"

कान्ता ने जैसे उनकी बात न सुनी, कहने लगी—"सब कुछ धीरे-धीरे समाप्त हो रहा है—दिवस का अवसान समीप ही है. वह—वह—तारे चमकने लगे......।" आंखें मुंदने लगीं।

घबरा कर कनक ने कान्ता को हिलाया और कहा—"कान्ता!"

कान्ता ने आंखें खोलीं। दृष्टि कुछ साफ हुई। सामने बलभद्र का मुख-मण्डल दिखाई दिया। क्षण भर दृष्टि जमाये रही, फिर अधरों पर हल्की मुस्कान लिये बोली—"काजी! काजी! वचन दिया न आपने! आप इस खलंगा— के बलिदान का बदला लेने—के लिये जीवित रहेंगे। अब आशीर्वाद दीजिये—बिदा दीजिये—' कहते-कहते उसने बलभद्र के पाँव की ओर हाथ बढ़ाये।

बलभद्र ने उसके दोनों हाथों को अपने हाथ में ले कर कहा—"कान्ता, ऐसा न कहो—ऐसा न कहो।"

"आपकी बात—याद आ रही है काजी—'यह बलिदान व्यर्थ नहीं

जायेगा !' हाँ काजी ! व्यर्थ नहीं जायेगा ! इस पहाड़ी पर इस खलंगा में—देश के लिये मर मिटने वाले—बलिदान देने वालों का युग-युग तक—स्मारक रूप बनें—बलभद्र कुँवर—यही कामना है ! पशुपतिनाथ से यही —प्रार्थना है ।"

साँस कुछ तेजी से चलने लगी । धीरे-धीरे धीमे स्वर में आँखें मूंदती हुई कहने लगी—"कनक— कनक—माया, कांछी से मिलो—मेरा—प्रणाम देना । जय गोरख—जय नेपा...।"

प्राण-पखेरू अनन्त में उड़ गये । निर्जीव शरीर कनक की गोद में ढुलक गया । हाथ बलभद्र के हाथों में थे । कनक फूट-फूट कर रोने लगा । बलभद्र का अंतर हाहाकार कर उठा !

अपने हाथों से कान्ता को चिता के सुपुर्द कर जब बलभद्र और कनक आदि लौटे तो सबेरा हो चुका था । साथ ही शत्रुओं की लाबारी भी आरम्भ हो चुकी थी !

बलभद्र ने कनक से कहा—"कनक तुम जाओ—तोपों का प्रबन्ध करो । गोले कल की तरह आज भी किले के भीतर फूट सकते हैं—सब से सावधानी से रहने को कहना । मैं अभी कुछ देर यहीं रहना चाहता हूं । बाद में आऊँगा—पांडे, नहीं कान्ता को खोकर आज मेरा दाँया हाथ बेकार हो गया है ।"

शत्रुओं की तोपों ने दिन भर रह-रह कर गोले बरसाये । थोड़ा बहुत जितना हो सकता था—खलंगा से प्रत्युत्तर मिला । कई गोले खलंगा के भीतर फूटे । कई घायल हुये, कई बलिवेदी पर निछावर हो गये । बलभद्र ने स्वयं घूम-घूम कर जहाँ तहाँ भरसक सहायता की । कई को अपनी गोद में रखा और मरने पर धरती पर सुला दिया ! कई को सहारा दे-दे कर उठाया और स्वयं घायलों के स्थान पर पीछे पहुँचाया । कई के घावों पर औषधि लगा पट्टी बाँधी । कई दम तोड़ने वालों को—कई घायलों को पानी की कुछ बूं पिलाईं दें ।

रात हो गई थी । बलभद्र सोच रहे थे— सबेरे कान्ता को खोया !

दिन में पांच और खो दिये। दस के करीब आज घायल हुये। रोज पांच दस वीर खोयें तो कितने दिन तक अड़ा जा सकता है। कनक ने बताया था, पानी समाप्त ही हो चुका है। कल का शेष, आधा घड़ा पास में है—उसमें से आधा, रात में घायलों के लिये वह कनक द्वारा भिजवा चुके हैं। कल ! कल क्या होगा ? पानी के बिना क्या होगा कल ? इसी डर से उन्होंने आज दिन भर, पानी पास होते हुए भी पानी की एक बूंद गले के नीचे नहीं उतारी ! क्या होगा—बिना पानी के ओह !

'पानी-पानी'—उनके कानों में आवाज उठी। चारों दिशाओं से टकरा टकरा कर 'पानी-पानी' गूंज उठा। उन्होंने व्याकुल होकर कानों पर दोनों हाथ रख लिये, पर मस्तिष्क सोचता रहा—कब तक ? कब तक वे कान बंद कर सकेंगे ?

दूसरे दिन फिर सूर्योदय हुआ। फिर शत्रुओं के तोप गरज उठे। फिर से कई गोले खलगा में फूटे। फिर से कई घायल हुये—कई मरे। सब कुछ कल जैसा ही हुआ पर आज एक नई बात हुई। खलंगा में पानी रात से ही समाप्त हो गया था। जो कुछ बलभद्र के पास था वह सब घायलों को दे दिया था पर सबेरे से अधिक देर तक वह न चला।

मां की गोद में बच्चे, जाल में फंसी मछली की तरह तड़प तड़प कर कहते—"पानी, आमां पानी" (पानी मां-पानी) और दम तोड़ देते। घायल पानी मांगते, पर न मिलता। मौत मांगते पर वह भी न मिलती —तड़प तड़प कर रह जाते। सर्वत्र पानी पानी सुन बलभद्र विचलित हो उठे थे ।

आज शत्रु के गोलों ने और बलिदान लिया। बहुत कम लोग लड़ सकने की दशा में रह गये थे। वे स्वयं तन से घायल न होते हुये भी मन से घायल थे। कितने साथी खो चुके थे वे ! कान्ता के रूप में जैसे उनका दांया हाथ टूट चुका था। पानी के लिये घायलों का आर्त्तनाद तन मन हिला देने वाला था ! खलंगा का नाश—वे अपनी आंखों देख

रहे थे। दो-तीन दिन से पानी की एक बूंद का पान भी नहीं किया उन्होंने ! वे ही क्या, उनके साथियों को भी एक बूंद जल न मिला था !

आज तीसरा दिन है ! और ये मुट्ठी भर वीर बिना पानी पिये लड़ रहे हैं ! प्यास से वे सब निर्जीव, अधमरे से हो रहे हैं पर इन वीरों ने एक बार भी अपने मुख से पानी शब्द उनके सामने न निकाला ! कब तक वे ऐसा कर सकेंगे ?

और काजी— उनका काजी कुछ नहीं कर सकता ! आह ! केवल आंसू के घूँट पी पी कर वह अपने साथियों को तड़पते देख रहे हैं ! तन से घायल न होने पर भी वे मन से घायल थे !

सोच बलभद्र व्यथित हो उठे। अन्तर आलोड़ित होने लगा। भारी हृदय से घायलों के स्थान पर पहुँचे। पानी-पानी की पुकार चारों ओर से आ रही थी। घाव की पीड़ा से कराहते हुये भी—पानी शब्द ही मुंह से निकलता था। सूखी जीभ अपने सूखे अधरों पर फेरते हुये घायल सारा दर्द उढेल कातर दृष्टि से इधर उधर देखते और दीन वाणी में कह उठते—'पानी-पानी !' घायल बच्चे अपनी माताओं से कातर स्वर में पानी मांगते पर कभी बिना मांगे ही दूध पिला जीवनदान देने वाली अपनी माता से उन्हें पानी न मिलता। घायल माताएं पानी माँगतीं—अपने लिये नहीं, अपने घायल बच्चों के लिये, पर पानी अमृत बन चुका था —न मिलता।

बलभद्र ने पीड़ा और प्यास से कराहते हुये घायलों को देखा ! प्यास का ऐसा भीषण रूप देख वह कांप उठे। द्वार पर खड़े के खड़े रह गये।

कनक अन्य साथियों के साथ घायलों की सेवा में लगा था। भरसक वे सांत्वना दे रहे थे, भरसक वे धीरज बँधा रहे थे, पर पानी-पानी की पुकार को रोक न पा रहे थे। अचानक कनक ने द्वार पर खड़े बलभद्र को देखा। पुकारा—"काजी।"

पानी-पानी—चिल्लाते, कराहते सभी घायल एकाएक चुप हो गये,

जैसे "काजी" रूपी मंत्र ने क्षण भर में ही उनकी प्यास बुझा दी हो ! सभी द्वार की ओर उत्सुकता से देखने लगे।

एक ने उत्साह से पुकारा—'काजी !"

दूसरे-तीसरे-चौथे, लगभग सभी ने कहा—"कजी, हाम्रो काजी !" (हमारा काजी।)

बलभद्र के चेहरे पर विषाद की गहरी छाया अंकित थी। दर्दभरी आवाज में बोले—"मुझे क्षमा करो वीरो ! मैं अपने कर्त्तव्य का पालन न कर सका। तुम्हारा दुख, तुम्हारा कष्ट दूर न कर सका। मामूली पानी की एक बूँद भी तुम्हें देने में आज तुम्हारा काजी असमर्थ है।"

सरदार रिपुमर्दन, जो अब लगभग ठीक हो चुके थे और घायलों की सेवा कर रहे थे—ने पास आकर कहा—"काजी, ऐसा क्यों कहते हो ! यह तुम्हारा दोष नहीं, हमारा दुर्भाग्य है कि वक्ष देते हुये भी हम मरण न पा सके।"

बलभद्र ने कहा—"तुम्हारा यह दुख अब मुझ से देखा नहीं जाता। तुम्हें युद्ध में कट-कट कर मरते देख मेरा अन्तर नहीं काँपा, पर अब तुम्हारी यह असहाय घायलों की दशा देख हृदय फटा जा रहा है। पानी-पानी की तुम्हारी एक एक पुकार मेरे अन्तर में सौ-सौ शूल चुभा रही है।"

क्षण भर सन्नाटा छा गया। एक घायल स्त्री ने रोते हुये कहा—"हमें क्षमा करो काजी, क्षमा ! अब हम पानी नहीं माँगेंगे, नहीं माँगेंगे !"

चारो ओर से आवाज उठी—"हम पानी नहीं मांगेंगे काजी, हमें क्षमा करो।"

बलभद्र ने अपना दाँया हाथ ऊपर उठाया और गम्भीर स्वर में कहा—"मैं इस खलंगा की मिट्टी के साथ अपनी मिट्टी मिलाना चाहता था, पर शायद विधाता को यह मंजूर नहीं। साथियो, मैं तुम्हारी इस दुर्दशा का बदला लूंगा। पानी रोक तड़पा-तड़पा कर मारने की, शत्रु

की इस अधर्म युद्ध-नीति का बदला लूंगा । मैं प्रतिज्ञा करता हूँ साथियों तुम्हारी इस दुर्दशा का पूरा-पूरा बदला लेने के लिये मैं जीवित रहूँगा ।"

एक घायल ने कहा—"काजी! हम शान्ति पूर्वक प्राण त्याग करेंगे, पानी न माँगेंगे । मन ही मन आपकी प्रतिज्ञा की सफलता की कामना करेंगे ।"

बलभद्र ने हाथ जोड़ सबसे बिदा ली । कनक और सरदार रिपुमर्दन को अपने पीछे आने का इशारा किया ।

चलते-चलते बलभद्र ने कहा—"सरदार, इन घायलों की रक्षा का अब बस एक ही उपाय है—खलंगा का त्याग करना । लड़ सकने की दशा में हमारे पास कितने लोग होंगे कनक ?"

"पचास, साठ होंगे काजी ! पाँच-दस मामूली चोट खाये हैं ।"

"जाओ, सबको मेरे पास ले कर आओ कनक । हम आज ही खलंगा को त्याग कर अंतिम प्रयास करेंगे ।"

"पर काजी, शत्रुओं का घेरा है चारों तरफ !"—कनक ने कहा ।

"हमारा अंतिम प्रयास दुस्साहस ही होगा! कनक मर गये तो तर जायेंगे—बच गये तो बदला लेंगे । यहाँ घेरे में बंद, सड़-सड़कर मरने से घेरे को तोड़ते हुये मरना अच्छा है । और वैसे भी आँधी-तूफान को किसने रोका है आजतक? हम प्रलय के बादल बन कर उन पर टूट पड़ेंगे अपनी खुकुरियों से रास्ता साफ करते जायेंगे ।"

"पर काजी, खलंगा पर तो शत्रु का अधिकार—?"

"हाँ, खलंगा पर शत्रु अधिकार कर लेगा । इससे कम से कम पानी के अभाव में हमारे घायल तड़प-तड़प कर दम तो न तोड़ेंगे ! मुझे इसका पूर्ण विश्वास है । कठोर से कठोर हृदय भी उनकी करुणाजनक अवस्था को देख कर पसीज उठेगा । सरदार, तभी तो आज जल्दी-जल्दी किला छोड़ जाना चाहता हूँ । थप सेना (सहायक सेना) की

आशा तोड़ चुका हूँ अब !"

थोड़ी देर में कनक सब सैनिकों को लेकर बलभद्र के पास पहुँचा। कनक व सरदार सहित ६९ थे। बलभद्र ने अपना निश्चय सुनाया। बताया, घायलों की भलाई के लिये उन्हें खलंगा को छोड़ना होगा। प्राणों को हथेली पर ले कर शत्रुओं के घेरे को तोड़ना होगा। अपने घायलों को बचाने का यही एक मात्र तरीका भी है और बदला लेने का भी।"

अंत में कहा—"वीरो यदि तुममें से कोई मुझसे सहमत न हो तो वह सहर्ष यहां रह सकता है। मैं तुम्हारा नायक तुम सब को सैनिक अनुशासन से मुक्त करता हूँ। आगे बढ़ कर स्पष्ट कह दो, जो नहीं जाना चाहेगा।"

फिर सरदार रिपुमर्दन की ओर मुड़कर कहा— "सरदार तुम ? तुम घायल हो !"

"नहीं काजी, मैं ठीक हूँ। मैं आपका साथ नहीं छोड़ूंगा, आज क्या, कभी नहीं छोड़ूंगा।"

बलभद्र कुछ देर तक चुप रहे। जब एक भी सैनिक आगे नहीं बढ़ा तो बोले—"देश के सपूतो, मुझे तुमसे ऐसी आशा थी। यह स्वदेश के पानी का प्रश्न, जाति की आन-बान का ही प्रश्न नहीं, घायल, प्यास से तड़प-तड़प कर बेमौत मरने वाले भाइयों का भी प्रश्न है! वीरो, तुम ६७ हो। सरदार, कनक व मुझे मिलाकर हम ७० हुये—७०० के बराबर हैं। हम आँधी के वेग से झपटेंगे—गाज की भयंकरता से गिरेंगे। अपनी खुकुरियों से रास्ता काट कर सर्वप्रथम नालापानी के जल-स्रोत पर पहुंच प्यास बुझायेंगे, फिर नाहन या जैथक की ओर चल कुछ सैनिक जमा करने की कोशिश करेंगे। हम फिर से खलंगा को हस्तगत करने का पहला प्रयास करेंगे! जैसा अवसर होगा वैसा ही करेंगे। अभी तो अपनी खुकुरियों से शत्रु के घेरे से रास्ता बनाना ही हमारा पहला काम है। शत्रुदल की रक्षा-पंक्ति को चीर कर निकल

जाना कठिन नहीं। वे बेखबर होंगे, वीरो समय अधिक नहीं। जल्दी से जल्दी जाकर हथियार आदि ले लो और जितने शीघ्र हो सके यहां आ जाओ।"

थोड़ी देर में ही सभी सैनिक आ गये। बलभद्र ने एक बार उनकी ओर देखा, फिर हाथ जोड़, आंखें मूंद मन ही मन पशुपतिनाथ का ध्यान कर उन्हें प्रणाम किया। फिर जुड़े हाथ ऊपर माथे से लगाते हुये कहा—"खलंगा, तुम्हें मेरा प्रणाम! अंतिम नहीं कहूँगा—फिर तुम्हें उबारने की जी जान से चेष्टा करूँगा।"

उपस्थित सभी ने हाथ जोड़ लिये।

बलभद्र न उसी प्रकार हाथ जोड़े-जोड़े कहा—"इस माटी की रक्षा में होम होने वाले वीरों को प्रणाम, चिता पर जलती लाशों को प्रणाम, घायलों को प्रणाम"—फिर धीरे-धीरे बोले—"और बचे हुये सभी वीरों को प्रणाम!"

आधी रात का गहनतम अंधकार! भीषण गोलाबारी के बीच भी विचलित न होने वाला, आक्रमण की प्रबल आंधी में भी दृढ़ रहने वाला, खलंगा का वह मुख्य द्वार सहसा खुल गया। सर पर कफन बाँधे बलभद्र व उनके साथी मुट्ठी भर काले बादल के समान पहाड़ी पर छा गये और घेरा डाल बैठी फिरंगी सेना पर प्रबल वेग से टूट पड़े। अपनी खुकुरियों से रास्ता बनाते हुये वे, आँधी की तरह प्रबल वेग से एक घेरे से दूसरे, और दूसरे से तीसरे को पार कर गये।

घेरा डाले बैठी शत्रु सेना को स्वप्न में भी इसकी आशा न थी। तीन दिन के प्यासे, घिरे, थके सैनिक ऐसा दुस्साहस कर सकेंगे—सोचा भी नहीं जा सकता था। बेखबर थे। जब एकाएक बलभद्र का यह दल – 'यह आ, यह जा हो गया', तब चेते - आँधी आई थी, चली गई। आंधी के प्रभाव से सब अस्त-व्यस्त हो गया। संभलते-संभलते देर लगी। तब तक बलभद्र और उसके साथी, बिना क्षति के नालापानी के जल-स्रोत पर पहुँच गये।

सबने पानी पिया, अपनी प्यास बुझाई और तब वह वन-प्रान्त शत्रुदल के दिलों को दहलाता हुआ गूंज उठा —"खलंगा पर जय प्राप्त करना शत्रुओं के लिये निषिद्ध था, पर अब मैं स्वयं अपनी इच्छा से उसे छोड़े जाता हूँ।"

पास आते शत्रुदल ने यह ललकार सुनी, सिंह की गर्जना सी जान पड़ी। सहम कर कांप गये।

गुंज अभी धीमी भी न होने पाई थी कि सत्तर वीरों का वह दल, आवाक शत्रु सेना की नाक के नीचे से निकल, सम्मुख की पहाड़ियों में विलीन हो गया। अन्धकार के घने आवरण में उन्हें खोजना—पीछा करना असम्भव जान, शत्रु-दल लौट आया।

उसी रात तीन बजे, प्रथम घेरे के मेजर केली ने कर्नल मॉबी की आज्ञानुसार खलंगा में प्रवेश कर उसे अपने अधिकार में कर लिया।

इक्कीस

वर्षों बीत गये—

नेपाल राज्य के (काठमांडू) काटमांडो शहर के एक मकान में एक दस-ग्यारह वर्षीय बालक रोता हुआ अपनी मां के पास दौड़ा। माँ ने तुरन्त कमरे से बाहर निकल कर पूछा—"के भयो छोरा, किन रुन्छौ?" (क्या हुआ बेटा, क्यों रोते हो ?)

रोते रोते लड़के ने दाँये हाथ से पकड़े अपने बायें हाथ को दिखाते हुये कहा—"उंगली—कट गई माँ—"

"कैसे ?"

"खुकुरी से गुलेल बना रहा था माँ—फिसल गई—उंगली कट गई·······।" रोते रोते वह बोला।

"तो रोता है—छी.! छीः!" उसे गोद में बिठाती वह बोली—"बस खुकुरी से जरा उंगली कट गई—रोने लगा लाल! उस पिता की संतान हो तुम, जो भयंकर युद्ध की ज्वाला में सीना ताने रहे! उस

बाजे (नाना) के नाती हो तुम, जिन्होंने मुट्ठी भर वीरों से विशाल शत्रु सेना के छक्के छुड़ा दिये। उस मां के लाल हो तुम, जिसने अपने वीर पिता व अपने वीर पति को, युद्ध की समाप्ति पर भी विदेश में, सैनिक बन लड़ने मरने से भी न रोका ·····।" उसकी आंखों में आँसू छलक आये।

"तुम भी तो रोती हो मां······"

"हां—मैं रोती हूँ, पर इसलिये कि ऐसे वीर, जिसने नाम-मात्र के पहाड़ी किले खलंगा के तीन चार सौ वीरों से तीन चार हजार शक्ति वाले शत्रुओं के दांत खट्टे कर दिये, नाकों दम कर दिया, जीते जी किले में शत्रुदल को घुसने न दिया—ऐसे वीर का वंशज, खुकुरी से जरा सा कट जाने पर दर्द से घबरा कर रोता है ?

बालक का दांया हाथ माँ के आंसू पोंछने लगा। बोला—"आमां न रोउ,' (मां न रो)

मां ने—"चोट खा कर भी जो चोट नहीं मानता था, उस पिता की संतान— हार कर भी हार जिसने जानी नहीं, उस बाजे का नाती ·····!"

बालक गोद से कूद कर भागा। जहां गुलेल की लकड़ी व खुकुरी थी—जा पहुंचा। खुकुरी उठाई और दौड़ता हुआ माँ के पास आ पहुंचा, फुर्ती से दूसरी उंगली पर खुकुरी चला दी और हंसते हुए कहने लगा —"आमां, देखो मैं अब रो नहीं रहा हूँ।"

कटी उंगली से झर झर रक्त झर रहा था। क्षण भर उसे बालक ने देखा फिर खुकुरी वाले हाथ को उठा कर बोला—"मैंने इसे फेंक दिया था न, पर अब—अब आमां इसे कभी नहीं छोड़ूंगा !"

"छोरा !" (बेटा)—कह कर मां ने उसे गले लगा लिया। प्रेम से सिरपर हाथ फेरती, आंसू बहाती कहने लगी—"छोरा विश्वास मुझे था तुम मेरे दूध को लज्जित नहीं करोगे ! अपनी नसों में बहते पूर्वजों के पवित्र रक्त को तुम कलंकित नहीं कर सकते ! तुम्हारे बाजे (नाना)

व बुबा (पिता) ने 'नेपाली' का जो पर्यायवाची शब्द 'वीरत्व' जोड़ा है उसे कभी न भूलना । मेरा आशीर्वाद है—देव पशुपतिनाथ सदा तुम्हारा कल्याण करें ! आओ—अब पट्टी बांध दूं !"

उपसंहार

राजधानी से आये रेवन्त कुंवर व उनके तीन सौ नेपाली सैनिकों से, नालापानी की पहाड़ी पर खलंगा से निकलने के दूसरे दिन, बलभद्र व उसके दल की भेंट हुई। रेवन्त कुंवर ने बताया, वे आज ही यहां पहुँचे थे।

रेवन्त कुँवर की सेना का बल पा, बलभद्र ने आगे बढ़ने का विचार बदल कर फिर से खलंगा में आने का प्रयत्न किया। पर दिसम्बर की दो तारीख, मेजर लडलो जो इनका पीछा कर रहे थे, से सामना हुआ। मुठभेड़ हुई, पर फिरंगी सेना की सांख्ययिक शक्ति के सामने एक न चली — कुछ फल न निकला। कुछ क्षति शत्रु सेना को पहुँचाई, कुछ स्वयं उठाई। फिर शेष साथियों सहित जौंसार के वैरठ नामक पहाड़ी किले में पहुँचे। यहां कुछ और सेना एकत्रित की और शक्ति चार सौ के करीब पहुँच गयी।

मेजर बैडलॉक की अधीनता में लगभग एक हजार फिरंगी सैनिकों ने यहां उन पर आक्रमण किया। कई दिन तक वीरता पूर्वक सामना

किया, फिर शत्रु सेना को भारी क्षति पहुँचा. कुछ दिन बाद वहां से निकल कर आठ मील दूर जौंतगढ़ किले में पहुँचे। मेजर बैंडलॉक ने पीछा किया। फिर आक्रमण किया, फिर आक्रमण विफल हुआ। मेजर बैडलॉक हार कर पीछे लौट गये। इस बार बलभद्र की भी भारी क्षति हुई, सो वहां से भी निकले और फरवरी १८१५ के मध्य, नाहन के जैथक किले में पहुँचे। इस किले के नायक रणजोर सिंह थापा से मिल अपनी अदम्य वीरता, अद्भुत सैन्य सचालन व संगठन से, नेपाल-आँग्ल युद्ध के अन्त तक किले को बचाये रहे।

१५ मई १८१५ को नेपाल-आंग्ल संधि हुई। उनके अनुसार जैथक का किला खाली कर देना पड़ा। खलंगा के ६९ साथियों सहित बलभद्र नेपाल लौट आये।

४ मार्च १८१६ को नेपाल व अँग्रेजों में सुगौली की पूर्ण संधि हुई।

बलभद्र कुँवर को उनकी वीरता व पुरुषार्थ के उपलक्ष में नेपाल सरकार द्वारा बहुत सम्मान व आदर—बहुत बिर्त्ता (जागीर) मिली। कहा जाता है वे संधि के विरुद्ध थे। उनका विचार था सैनिक के लिये जय या मृत्यु यही दो बातें युद्ध में होती हैं। वह उनमें से एक का वरण कर सकता है. उनसे समझौता नहीं। ऐसा विश्वास था—वीर बलभद्र का। सो १८१६ में नेपाल त्याग भारत आये। खलंगा से निकले उनके ६९ साथियों ने उनका साथ न छोड़ा।

भारत आते ही पंजाब नरेश महाराज रणजीत सिंह ने आदर सहित उनका सम्मान किया और अपनी सेना में उच्च पद दिया। बलभद्र ने अपने साथियों सहित तथा यत्र-तत्र बिखरे नेपालियों को एकत्रित कर एक नेपाली टुकड़ी बनाई और अन्त तक महाराज रणजीत सिंह की सेवा में रहे।

सिक्ख-अफगान के नौशेरा के युद्ध में अनुपम वीरता दिखा, वीर बलभद्र व उनके वीर साथियों ने १४ मार्च १८२४ के दिन वीर गति प्राप्त कर स्वर्ग-प्रयाण किया और अमरत्व को प्राप्त हुये।

— अनुक्रमणिका —

1 Memoir of Dehra Dun : G.R.C. Williams B.A.

2 History of the political and Military Transactions in India during the administration of Marquees of Hastings ; Henry T. Prinsep.

3 History of British India Vol. viii : Mill & Wilson.

History of Nepal. : :Dr. Daniel Wright

5 Nepal Vol. I & II P. Landon

6 The Bravest Soldier Sir Rollo Gillespie : Eric Wakeham

7 Origin of the Sikh Power in Punjab and Political life of Maharaja Ranjit Singh : Henry T. Prinsep

8 Rise and Progress of British Power in India Vol. I : Auber

9 Life of Brian Haughton Hodgson : Sir William Hunter

10 Asiatic Researches ; Capt. T. Hardwicke

11 Description of India Vol II : Hamilton.

12 Gurkhas : Major C. J. Morris

1 Notes on Nepal : Capt. Vansittart

14 The Private Journal of the Marquees of Hastings : Panini office, Reprint.

15 History of Sikhs : Cunnigham.

१६	भारत में ब्रिटिश साम्राज्य का उदय और अस्त	: श्रीइन्द्र विद्यावाचस्पति
१७	भारत में अंगरेजी राज्य	: श्री सुन्दरलाल
१८	भारत में अंगरेजी राज्य के दो सौ वर्ष	: श्री केशवकुमार ठाकुर
१९	भारतीय इतिहास की मीमांसा	: श्री जयचन्द्र विद्यालंकार
२०	इतिहास प्रवेश	: श्री जयचन्द्र विद्यालंकार
२१	भारतीय इतिहास की रूप रेखा	: श्री राम त्यागी तथा श्री गंगाप्रसाद पचौरी
२२	राजनीतिक भारत (१७५७–१९५६)	: श्री राजकुमार
२३	भारतीय इतिहास का प्रवाह	: श्री पी० सरन तथा श्री डी० आर० भण्डारी
२४	नयाँ नेपाल को इतिहास	: (नेपाली पुस्तक)
२५	वीर बलभद्र (नेपाली पुस्तक)	: श्री सूर्यविक्रम ज्ञवाली
२६	चिसो चूल्हो	: श्री बालकृष्ण शमशेर